यज्ञसे ही देववृन्द प्रमुदित होते हैं, इसलिये पहिले तृप्ति और शेषमें प्रजा समूहकी उत्पत्ति हुई है। जीवगणने उत्पन्न होके जीविकाके निमित्त चिल्लार किया था, प्रजापतिने पिता माताकी भांति उन तृषित प्रजा समूहको वृत्तिदान करके कृपा की थी। भगवान् प्रजापतिने इसही प्रकार अपनी प्रजा उत्पन्न करनेके लिये मनही मन आलोचना करके उस समय उन्हें अमृत पिलाया था। प्रजावृन्द तृप्त होवें, ऐसा विचार करके सुरभि गन्ध उद्गीरण करते हुए वहां जाके उसके उद्गारसे उत्पन्न तथा मुखसे प्रकट हुई सुरभीको देखा। उस सुरभीने प्रजाओंकी वृत्ति विधायनी, सुवर्ण रङ्गवाली कपिला सर्व्वलोक मातृका सौरभेयी गौवोंको उत्पन्न किया था। जैसे नदीके तरङ्गसे फेन उत्पन्न होता है, वैसे ही सब प्रकारसे दूध देनेवाली अमृत वर्ण सौरभेयी गोके अमृतसे फेन उत्पन्न हुआ, वह फेन बछडेके मुखसे पृथ्वीपर स्थित महादेवके मस्तकपर गिरा। सर्व्व शक्तिमान महादेवने क्रुद्ध होकर माथेके नेत्रसे रोहिणीको मानो जलानेके लिये उसकी ओर देखा। हे नरनाथ! अनन्तर जैसे सूर्य्य मेघमालाको अनेक वर्णका करता है, वैसे ही उस रौद्रतेजने कपिला गौवोंको विविध वर्ण किया। जो कपिला गौवें उस रुद्रतेजसे अपक्रान्त होकर चन्द्रमण्डलमें जाके स्थित हुई थी, वे जिस प्रकार सुवर्ण होके उत्पन्न हुई थीं, वैसी ही रहीं, उनका दूसरा रङ्ग नहीं हुआ। अनन्तर महादेवके क्रुद्ध रहनेपर प्रजापतिने उनसे कहा, तुम अमृतसे अभिषिक्त हुए हो, गौवोंके फेन प्रभृति कुछ भी जूठे नहीं हैं। जैसे चन्द्रमा अमृत ग्रहण करके फिर उदित होता है, वैसे ही रोहिणीगण अमृतसे उत्पन्न दूध दिया करती हैं, अग्नि, वायु, सुवर्ण और समुद्र दूषित नहीं होते, अमृतको यदि कोई पीवे, तौभी दूसरे लोग उसे पीनेसे दूषित नहीं होते और बछडेके पीनेपर सबछा गौवें भी दूषित नहीं हैं। ये घृत दूधके सहारे इन सब लोकोंका भरण करेंगे, सब कोई इनके अमृतमय शुभ ऐश्वर्य्यकी इच्छा किया करते हैं। प्रजापतिने महादेवको प्रसन्न करनेके लिये गौवोंके सहित एक वृषभ दिया। हे भारत! उन्होंने वृषभ देके रुद्रका मन प्रसन्न किया, महादेवने प्रसन्न होकर उस बैलको अपनी ध्वजा तथा अपना वाहन किया था, इस ही निमित्त वे वृषभध्वज नामसे विख्यात हुए हैं। अनन्तर देवताओंने उस समय महादेवको पशुपति किया, वे गौवोंके बीच रहनेसे वृषभाङ्क नामसे वर्णित हुए। इस ही भांति अव्यग्र वर्ण महातेजस्विनी कपिला गौवोंका दान प्रथम कल्प कहा गया है। लोकमें जेठी, लोगोंकी वृत्तिके लिये प्रदत्ता, रुद्रसेविता, सोमाविस्यन्दभूत, सौम्य, पुण्यकामदा और प्राणदा गौवोंको दान करनेसे मनुष्य सर्व्वकामप्रद होता है। सदा मङ्गलाभिलाषी पुरुष गौवोंके इस उत्तम उत्पत्ति-विषयका पाठ करनेसे पापोंसे छूट जाते और सदा श्री, पुत्र, धन और पशु पाते हैं। हे महाराज! दाता गोदान करके हव्य कव्य तर्पण, शान्तिकर्म्म, यान, वसन, बालक और बूढ़ोंकी तुष्टि, ये समस्त फल पाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अजमीढ़ वंशावतंस पृथापुत्र महाराज युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित पितामहका वचन सुनके ब्राह्मणोंको सुवर्ण रङ्गके वृषभ और गऊ दान किया, तथा उन्होंने श्रेष्ठ लोकोंको जय करने अथवा कीर्त्तिके निमित्त यज्ञके उद्देश्यसे दाक्षिणामें सौ हजार गऊ दान किया था।

७७ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, इसके अनन्तर इक्ष्वाकु वंशीय बक्तृवर राजा सौदास सर्व्वलोकचारी सिद्धि

वेदनिधि नित्य पुरोहित ऋषिसत्तम वशिष्ठको प्रणाम करके प्रश्न करना आरम्भ किया।

सौदास बोले, हे अनघ भगवन्! तीनों लोकोंके बीच मनुष्य जिसका सदा नाम लेते हुए पुण्यसञ्चय करता ऐसा पवित्र क्या है?

भीष्म बोले, विद्वान् वशिष्ठ पवित्र होकर गौवोंको प्रणाम करके उस समय प्रयत राजासे गौवोंके विषयमें उपनिषत् वचन कहने लगे।

वशिष्ठ मुनि बोले, गौवें सुरभिगन्ध और गुग्गुलगन्धविशिष्ट हैं, गौवें सर्व्वभूतोंकी प्रतिष्ठा और सबहीके लिये महत् स्वस्त्ययनस्वरूप हैं, गऊ ही भूत भविष्य हैं, गौवृन्द ही सनातनी सृष्टि स्वरूप हैं। गौवें ही लक्ष्मीके मूल हैं और जो कुछ गौवोंको दिया जाता है, वह विनष्ट नहीं होता। गऊ ही देवताओंके परम हवि और अन्नस्वरूप हैं, स्वाहाकार वषट्कार सदा गौवोंमें प्रतिष्ठित है। गऊ ही यज्ञके फल हैं, गौवें ही यज्ञोंमें प्रतिष्ठित होरही हैं। हे महातेजस्वी पुरुषश्रेष्ठ! सन्ध्या और भोरके समय सदा गौवें ऋषियोंके होम साधन घृत आदि प्रदान किया करती हैं। हे महाराज चाहे कोई कैसाही पापी क्यों न हो, गोदान करनेसे उसके सब पाप नष्ट हुआ करते हैं, जिसके दश गऊ हों, वह एक गऊदान करे, जो लोग एक सौ गऊवाले हैं, वे दश गऊ दान कर सकेंगे और जो लोग सहस्र गोयुक्त हैं, वे एक सौ गऊ दान करें, परन्तु ये सब कोई तुल्य फल भोग करेंगे। सौ गऊवाला पुरुष यदि आहिताग्नि न हो और सहस्र गऊवाला पुरुष यदि विधिपूर्व्वक यज्ञ न करे, तथा जो पुरुष समृद्ध होके भी कृपण हो, वे तीनों ही अर्घलाभके योग्य नहीं हैं। जो लोग सवत्सा कांस्यदोहना उत्तमव्रत और वस्त्रसे युक्त कपिला गऊ दान करते हैं, वे इस लोक तथा परलोकको जय किया करते हैं। हे शत्रुतापन! जो लोग श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको सैकड़ों यूथपति युवा सर्व्वेन्द्रियपुष्ट, बड़े सींगोंसे अलंकृत गवेन्द्र वृषभ दान करते हैं, वे बार बार जन्म लेके ऐश्वर्यलाभ किया करते हैं। गौवोंके बिना नाम लिये सोना न चाहिये, उन्हें बिना स्मरण किये चलना अनुचित है, सन्ध्या और सबेर गौवोंको प्रणाम करनेसे पुष्टि प्राप्त होगी। गौवोंके मूत्र और पुरीषके विषयमें किसी प्रकार घबड़ाना न चाहिये और कदाचित इनका मांस भक्षण न करे, तो पुष्टि प्राप्त होगी। सदा गोमयसे स्नान करे, करीषके बीच बैठे, श्लेष्म मूत्र पुरीष और प्रतिघातका त्याग देवे। गौवोंका सदा नाम ले, उनको कभी अवज्ञा न करे, मनुष्य बुरे स्वप्न देखनेपर गौवोंका नाम लेवे। ब्राह्मणके द्वारा गोचर्म्मके आँगनपर बैठके भोजन करे, वरुणसे पालित पश्चिम दिशाकी ओर देखे। जो लोग आकुंचित होके पृथ्वीपर बैठते हैं, वे गौवोंके दूध घृतके सहारे सदा पुष्टिलाभ किया करते हैं। घृतसे होम करे, घृतके द्वारा स्वस्तिवाचन करावे, घृत दान करे और घृत प्राशन करे, तो गौवोंकी पुष्टि भोग कर सकेगा। जो लोग गोमती विद्याके द्वारा मन्त्र पढ़के तिलधेनु दान करते हैं, उन्हें कृत और अकृत विषयोंके लिये शोक नहीं करना पड़ता। जैसे सब नदियां समुद्रके निकट उपस्थित होती हैं, वैसे ही सुवर्ण सींगसे युक्त दूध देनेवाली सुरभि सौरभेयी गौवें मेरे समीप उपस्थित होवें। हम सदा गौवोंका दर्शन करें, गौवें मुझे सदा अवलोकन करें। गौवृन्द हमारे हैं और हम उनके हैं, जहांपर गऊ हैं हम भी उस ही स्थानमें हैं। मनुष्य रात दिन, सम वा विषम स्थलमें महाभय उपस्थित होनेपर इस ही प्रकार गौवोंका यश गाके भयसे मुक्त होता है।

७८ अध्याय समाप्त।

अभिष्ट होवे, हे परन्तप ! पहली उत्पन्न हुई गौवोंने सबसे अधिक श्रेष्ठता प्राप्त करनेकी इच्छासे सौहजार वर्षतक अत्यन्त दुष्कर तपस्या की थी। इस लोकमें समस्त दक्षिणाके बीच हम श्रेष्ठ होंगी तथा हम किसी दोषमें लिप्त न होंगी। लोग हमारे परीषके द्वारा स्नान करनेसे सदा पवित्र होंगे, देवता और मनुष्य हमारे गोमयके सहारे पवित्रताका विधान करेंगे। और स्थावर जङ्गम समस्त जीवोंके बीच जो लोग हमें प्रदान करेंगे, वेही हमारे लोकमें गमन कर सकेंगे। गौवने इसी प्रकार कामना करके तपस्या की थी, उनकी तपस्या पूरी होनेपर सर्व्व शक्तिमान ब्रह्माने स्वयं उनसे कहा, कि ऐसा ही होवे, तुम लोग सबका उद्धार करो, ऐसा वचन कहके उन्हें यही वर दिया था। भूत-भविष्यकी माता वे सब गौवें मनोरथ पूरा होनेपर उठीं। प्रातःकालमें उन्हें नमस्कार करनेसे पुष्टि प्राप्त होती है।

हे महाराज ! तपस्या शेष होनेपर गौवें लोकपरायणा हुई थीं, इसलिये महाभागा गौवें परम पवित्र रूपसे वर्णित हुआ करती हैं और इस ही निमित्त वे सब लोगोंके ऊर्द्ध्वमें निवास करती हैं। मनुष्य स्वत्सा उत्तमव्रत और वस्त्रसे युक्त दूधवाली कपिला गऊ दान करनेसे ब्रह्मलोकमें पूजित होता है। लाल वर्णवाली तुल्यवत्सा, उत्तम व्रतवाली दुग्धवती गऊको वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे मनुष्य सूर्य्यलोकमें पूजित हुआ करता है। समानवत्सा वस्त्रयुक्त उत्तम व्रतवाली वस्त्रपूरित पयस्विनी गऊ दान करनेसे मनुष्य चन्द्रलोकमें पूजित होता है। वस्त्र उढ़ाके उत्तम व्रतयुक्त समान वत्सा सफेद गऊ दान करनेसे मनुष्यको इन्द्रलोकमें सम्मान प्राप्त होता है। समानवत्सा उत्तमव्रतवाली कृष्णवर्णवाली पयस्विनी गऊ वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे मनुष्य अग्निलोकमें पूजित होता है। उत्तम व्रतवाली समानवत्सा धूम्रवर्णकी दुग्धवती गऊ दान करनेसे मनुष्य यमलोकमें पूजनीय होता है। जलके फेनके रङ्ग समान बछड़ा और वस्त्र दोहनपात्रसे युक्त गऊ दान करनेसे मनुष्य वरुणलोकमें सुख भोग करता है। वातरेनुके समान रङ्गवाली कांसेके दोहनपात्र तथा वस्त्र पूरित सवत्सा गऊ दान करनेसे पुरुष वायुलोकमें अभिनन्दित हुआ करता है। सुवर्ण-रङ्गवाली पिङ्गाक्षी सवत्सा कांसेकी दोहनीके सहित वस्त्र उढ़ाके गऊदान करनेसे मनुष्य कुबेर लोकमें सुख भोगता है धूम्रवर्णवाली गऊ कांसेकी दोहनीके सहित वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे मनुष्य पितृलोकमें पूजित होता है। गर्द्दनमें कम्बलकी झूलसे अलंकृत करके सवत्सा गऊ दान करनेसे मनुष्यको वैश्वदेव नामक बाधारहित उत्तम लोक प्राप्त होता है, दूध देनेवाली सवत्सा उत्तम गऊको वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे मनुष्य वसुलोक पाता है। पाण्डुर कम्बलके रङ्ग समान दूध देनेवाली सवत्सा गऊको कांसेकी दोहनीके साथ वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे साध्योंके समस्त लोक प्राप्त होते हैं। जो लोग सब रत्नोंसे अलंकृत करके दृढ़ पीठवाले वृषभ दान करते हैं, वे मरुद्गणोंके लोकमें गमन किया करते हैं। मनुष्य सब रत्नोंसे युक्त काला वृषभ दान करनेसे गन्धर्व्व और अप्सराओंके लोकको पाता है। गर्द्दनमें कम्बलकी झूल और काठकी सब रत्नोंसे अलंकृत करके दान करनेसे पुरुष शोकरहित होकर प्रजापतिके लोकको पाता है। हे महाराज ! गोदान करनेवाला मनुष्य मेघजालको भेदता हुआ अर्कवर्ण विमानके द्वारा सुरपुरमें जाके विराजमान होता है। मनोहर वेषवाली सुश्रोणि सहस्र सुन्दरी उस गोदानमें रत पुरुषश्रेष्ठके सङ्ग क्रीड़ा करती हैं, वह सोनेपर उन हरिणाक्षियोंकी वीणा, वल्लकी, नूपुरकी झन-कार तथा हंसीसे जाग्रत होता है। गऊके शरीरमें जितने परिमाणके रोम रहते हैं,

गोदान करनेवाला उतने वर्षतक सुरपुरमें पूजित होता है, अन्तमें वह स्वर्गसे च्युत होके मर्त्यलोकमें महद्वंशमें जन्म लेता है।

७९ अध्याय समाप्त।

वशिष्ठ बोले, घृत दूध देनेवाली गौवें घृतयोनि हैं और उन्हींसे घृत उत्पन्न होता है, इसीसे घृतोद्भव कहाती हैं; गौवें घृतकी नदी तथा घृतकी आवर्त्त हैं, इसलिये हमारे गृहमें सदा वे गौवें निवास करें। घृत ही हमारा हृदय है, घृत ही हमारी नाभिमें सदा प्रतिष्ठित होरहा है; घृत हमारे सारे शरीर और मनमें निवास करता है। गौवें हमारे आगे पीछे और सब ओर हैं, मैं गौवोंके बीच वास करता हूं, जो पुरुष सन्ध्या और सवेरेके समय आचमन करके सदा इसका जप करता है, वह दिन भरके किये हुए पापोंसे मुक्त होगा। जिस स्थानमें सुवर्णमय प्रासाद विद्यमान है, वसुधारारूपी मन्दाकिनी विराज रही हैं और गन्धर्व्व अप्सरा वर्त्तमान हैं, सहस्र गऊ दान करनेवाला मनुष्य वहां ही जाता है। मक्खनरूपी पङ्क, दूधरूपी जल और दधिरूपी शैवालयुक्त नदियें जिस स्थानमें बह रही हैं, हजार गऊ दान करनेवाला पुरुष उस ही स्थानमें गमन करता है। जो लोग विधिपूर्व्वक एक सौ तथा सहस्र गऊ दान करते हैं, वे इस लोकमें परम समृद्धिवान होके स्वर्गलोकमें पूजित होते हैं, पुत्र गोदान करनेसे माता-पिता दोनोंकुलोंके दश पुरुषोंको पितामहके सुकृतलोकमें भेजके कुल पवित्र करता है। गऊके प्रमाण अनुसार तुल्य परिमाणसे तिलगऊ दान करने तथा जलधेनु देनेसे मनुष्यको यमलोकमें कोई पीड़ा नहीं प्राप्त होती। परम पवित्र जगत्‌की प्रतिष्ठा देवताओंकी माता अप्रमेय गौवोंकी स्तुति और प्रदक्षिण करे और समय विचारके उपयुक्त पात्रको दान दे, कांसेके दोहनीपात्रसे युक्त विशाल शींगवाली कपिला गऊ वस्त्र उढ़ाके दान करनेसे मनुष्य भयरहित होके दुर्व्विगाह्य यमसभामें प्रवेश करता है। मनुष्य सदा ऐसा वचन कहै, कि उत्तम रूपवाली बहुरूपा विश्वस्वरूपिणी मातृस्वरूपी गौवें मेरे निकट उपस्थित होवें। गोदानसे बढ़के पुण्यजनक दान दूसरा कुछ भी नहीं है; इससे बढ़के पुण्यका फल भी और कुछ नहीं है, लोकमें इससे श्रेष्ठ न कुछ हुआ और न होगा, गौवें त्वचा, रोम, सींग, पुच्छलोम, दूध और मेदसे युक्त होकर यज्ञको पूर्ण करती हैं, इसलिये उनसे बढ़के और कौन है? यह स्थावर जङ्गममय सारा जगत् जिससे व्याप्त होरहा है, उस भूतभविष्यकी जननी गऊको सिर झुकाके प्रणाम करता हूं। यह मैंने तुम्हारे समीप गौवोंके अत्युत्तम प्रशंसावादका केवल एक ही अंश वर्णन किया है। इस लोकमें गोदानसे श्रेष्ठ दान और कुछ भी नहीं है और गौवोंके अतिरिक्त अन्य कोई परम अवलम्ब नहीं हैं।

भीष्म बोले, अनन्तर महानभाव सौदास राजाने वशिष्ठ ऋषिके इस श्रेष्ठ वचनको बर समझके संयतचित्तसे द्विजोंको बहुतसी गऊ दान किया और अन्तकालमें गोलोक पाया।

८० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! लोकमें पूर्व्वोक्त विषयोंके अतिरिक्त जो समस्त पवित्रोंके बीच पवित्र तथा परम पावन है, वह मेरे निकट वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे भरतसत्तम! महार्थ पवित्र गौवें मनुष्योंका उद्धार करती हैं, वे घृत और दूधके सहारे समस्त प्रजाको धारण कर रही हैं। गौवोंसे पवित्र और कुछ भी नहीं है, ये ही त्रिभुवनके बीच पुण्यदा, पवित्र और उत्तम

हैं। गौवें देवताओंके भी ऊर्द्ध भागमें निवास करती हैं, मनीषिवृन्द गोदान करके कुल उद्धार करते हुए स्वर्गमें गमन किया करते हैं। मान्धाता, युवनाश्व, ययाति और नहुष राजाने सैकड़ों सहस्रों गऊ दान करके देवताओंसे भी दुर्लभ परम स्थानमें गमन किया था। हे अनघ! इस विषयमें मैं तुमसे पौराणिकी कथा कहता हूं।

पवित्रतायुक्त सावधानचित्तवाले बुद्धिमान शुकदेवने नित्य कर्म्मसे निवृत्त होकर ऋषियोंमें श्रेष्ठ परावर लोकदर्शी पिता कृष्ण द्वैपायनको प्रणाम करके प्रश्न किया, हे विभु। सब यज्ञोंके बीच किस यज्ञको आप श्रेष्ठ जानते हैं? मनीषिगण कौन कर्म्म करनेसे परम स्थान पाते हैं? देववृन्द किस पवित्र वस्तुके द्वारा स्वर्गलोकमें सुखभोग करते हैं? यज्ञका यज्ञत्व क्या है? यज्ञ किसमें प्रतिष्ठित होरहा है? देवताओंके निमित्त उत्तम क्या है? हे पिता। इस लोकमें परम सत्त्व क्या है और जो पवित्रोंके बीच पवित्र हो, वह मेरे निकट प्रकट करिये। हे भरतश्रेष्ठ! परम धर्म्मज्ञ व्यासदेव इतनी बात सुनके पुत्रके निकट यथार्थ रीतिसे सारी कथा कहने लगे।

व्यासदेव बोले, गौवें ही प्राणियोंकी प्रतिष्ठा स्थान, परम अवलम्ब, पुण्य, पवित्र और परम पावन हैं। हमने ऐसा सुना है, कि पहले गौवोंके शींग नहीं थे, अनन्तर उन्होंने शींगके लिये अव्ययप्रभु प्रजापतिकी उपासना की थी। तब सर्व्वशक्तिमान् ब्रह्माने गौवोंको योगयुक्त देखके उन हर एकको ही अभिलषित वर दिया। हे पुत्र! उनके बीच जिसकी जैसी अभिलाषा थी, उनके वैसी ही शींग उत्पन्न हुई, वे अनेक वर्णवाले शींगोंसे युक्त होकर सुशोभित हुईं। जब ब्रह्माने उन्हें वर दान किया, तब वे कल्याणदायनी गौवें, हव्यकव्य प्रदान करने लगीं और पुण्य पवित्र, सुभगा, दिव्य अवयव लक्षण युक्त हुईं। गौवें उत्तम महत् दिव्य तेजस्वरूप हैं, जो मत्सररहित साधु पुरुष इन्हें दान करते हैं, वेही सुकृती तथा सर्व्वदान प्रदाता हैं। हे पापरहित! उन्हें ही पवित्र गोलोक मिलता है। हे द्विजसत्तम! जिस स्थानमें वृक्षोंमें मधुर फल लगते और दिव्य पद्म तथा फलसम्पन्न होते हैं, सब पुष्प भी दिव्य और सुगन्धियुक्त हुआ करते हैं; जिस स्थानमें सारी भूमि मणिमयी सुवर्ण बालुकासे युक्त सब ऋतुओंमें सुखस्पर्श पङ्करहित रजोगुण वर्जित और शुभदायनी रहती है; वहांपर समस्त तालाब तरुण सदृश लाल पत्थरसे युक्त वन और हिरण्मय मणिखण्डोंसे शोभित हैं, महार्ह मणिकी भांति पद्म, सुवर्ण प्रभायुक्त केशर, नीलोत्पलयुक्त विविध भांतिके कमल शोभित तालाबोंसे अलंकृत करवीर, सहस्र आवर्त्तसे परिपूरित सन्तानक कानन, फूले हुए वृक्षोंसे शोभित निर्म्मल मुक्ताजाल और महाप्रभ मणियों तथा सुवर्णके सहारेकी वहां नदियोंकी तट भूमि प्रकट हुई है। कोई वृक्ष सुवर्णमय और कोई वृक्ष अग्निसदृश प्रभायुक्त हैं, वैसे सर्व्वरत्नमय विचित्र वृक्षोंसे परिपूरित उस स्थानमें सुवर्णमय सब पर्व्वत मणिरत्न शिला तथा सर्व्वरत्नमय ऊंचे मनोहर शृङ्गोंसे शोभित होरहे हैं।

हे भरतश्रेष्ठ युधिष्ठिर उस नित्यफल पुष्पोंसे युक्त वृक्षों और पक्षियोंसे परिपूरित स्थानमें पुण्यकर्म्मवाले मनुष्य सर्व्वकाम समृद्धार्थ और शोकरहित तथा मन्युहीन होकर सदा दिव्य गन्धवाले फूलों और दिव्य रसयुक्त फलोंसे प्रमुदित होते हैं। हे भारत! पुण्यकर्म्मा यशस्वी मनुष्य वहांपर विचित्र रमणीय विमानोंमें विहार करते हुए प्रसन्न हुआ करते हैं। हे महाराज। उत्तम रूपवाली अप्सरायें उनके निकट क्रीड़ा करती हैं। हे युधिष्ठिर! गोदान करनेसे मनुष्य इन्हीं लोकोंको पाता है। सूर्य्य

और बलवान वायु जिनके प्रभु हैं, ऐश्वर्यविषयमें जिनके राजा वरुण हैं, सत्य प्रभृति युगोंको धारण करनेसे जिनका युगन्धर नाम हुआ है, उन उत्तम रूपवाली बहुरूपिणी विश्वरूपा मातृगणोंके नामोंका यतव्रती होकर सदा जप करे,—ब्रह्माके द्वारा यही तपस्या कही गई है। जो लोग गौवोंकी सेवा करते हैं और सब भांतिसे उनके अनुगत होते हैं, उनपर वह प्रसन्न होके दुर्लभ वर दिया करते हैं। मनुष्य मनसे भी कभी गौवोंसे द्रोहाचरण न करे, सदा उनके लिये सुखदाता होवे, गौवोंकी सदा अर्चना करे तथा नमस्कार करके उनकी पूजा करे। दमयुक्त और दयावान मनुष्य सदा गौवोंकी समृद्धि भोग किया करते हैं। तीन दिन उष्ण गोमूत्र पीवे फिर तीन दिन गर्म्म दूध पीवे; अनन्तर गऊका दूध पीके तीन दिन उष्ण घृत पीवे; तीन दिनतक गर्म्म घृत पीकर त्रिरात्र वायु पीके रहे। देववृन्द जिस पवित्र वस्तुके सहारे उत्तम लोकोंको भोगते हैं, जो कि पवित्र वस्तुओंके बीच पवित्र है, उस घृतको माथेपर रखे। घृतसे अग्निमें होम करे, घृतसे स्वस्तिवाचन करे, घृतप्राशन करे और घृत दान करे तो गौवोंकी पुष्टिभोग प्राप्त होगा। गौवोंके द्वारा गोमयके सहित परित्यक्त यवको यावक कहते हैं, जो लोग एक महीने तक यावक भोजन करते हैं, उनके ब्रह्महत्यासदृश पाप इसहीके सहारे छूट जाते हैं। दैत्योंके पराभवके हेतु देवताओंने इसे पवित्र किया है, इसीसे वे देवता पावे सत्यक सिद्ध और महाबलसे युक्त हुए हैं। गौवें परम पवित्र महत् पावन और पुण्यप्रद हैं, मनुष्य द्विजातियोंको गऊ दान करनेसे स्वर्ग भोग करता है। गौवोंके बीच पवित्र होकर मनही मन गोमती ऋक्के सहारे प्रकाशित अर्थ जपे, मनुष्य पवित्र जलसे आचमन करके मन्त्र जपनेसे पवित्र और निर्म्मल होता है। अग्नि तथा गौवोंके बीच और ब्राह्मणोंके समाजमें विद्या, वेदव्रतस्नात पुण्यकर्म्मवाले ब्राह्मणोंको उचित है, कि शिष्योंको यज्ञसंमित गोमती ऋक् पढ़ावें। त्रिरात्र उपवासयुक्त होनेसे गोमती ऋक्के प्रभावसे वर प्राप्त होता है। पुत्र कामनावाले मनुष्य पुत्र पाते हैं, धनके अभिलाषी मनुष्योंको धन मिलता है। पतिकी इच्छा करनेवाली स्त्री पति पाती है, मनुष्योंका इसके सहारे सब प्रयोजन सिद्ध होता है। इस ही प्रकार ये महाभाग यज्ञहितकारी सर्व्वकामद गो सन्तुष्ट होकर निःसन्देह वर दान करती हैं, इन गौवोंको रोहिणी जानो इनसे श्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है। महातेजस्वी शुकदेवन महानुभाव पिताका ऐसा वचन सुनके प्रतिदिन गौवोंकी पूजा की थी; इसलिये तुम भी उनकी पूजा करो।

८१ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! मैंने सुना है, कि गौवोंका पुरीष श्रीयुक्त है, इसलिये इस विषयमें मुझे सन्देह है, इसीसे मैं इसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

भीष्म बोले, हे भरतसत्तम महाराज! प्राचीन लोग इस विषयमें लक्ष्मीके सहित इस लोकमें गौवोंके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। लक्ष्मीने मनोहर शरीर धारण करके इस लोकमें गौवोंके बीच प्रवेश किया, गौवें उनकी सुन्दरताई-सम्पत्ति देखके विस्मित हुईं।

गौवोंने कहा, हे देवि! तुम कौन हो? किस स्थानसे आई हो? भूलोकमें तुम्हारे रूपकी उपमा नहीं है। हे महाभागे! तुम्हारे रूपसम्पत्तिसे हम विस्मययुक्त हुई हैं। तुम कौन हो, कहां जाओगी, हमें इसे जाननेकी इच्छा है। हे वरवर्णिनि! इसलिये तुम यथार्थ रीतिसे मेरे निकट यह सब यथार्थ वृत्तान्त कहो।

लक्ष्मी बोली, तुम लोगोंका मङ्गल होवे, मैं लोककान्ता श्रीनामसे विख्यात हूं; दैत्य लोग मुझसे परित्यक्त होकर बहुत समयसे नष्ट हुए हैं और देववृन्द मुझे पाके सदा प्रमुदित होरहे हैं। इन्द्र, सूर्य, चन्द्रमा, विष्णु, वरुण और अग्नि प्रभृति देवगण तथा ऋषिवृन्द मुझसे युक्त होकर सिद्ध होते हैं। हे गोवृन्द! मैं जिसमें प्रविष्ट नहीं होती, वह सब प्रकारसे विनष्ट होता है। धर्म, अर्थ और काम मुझसे संयुक्त होनेपर ही सुखदायक हुआ करता है। हे सुखप्रद गोगण! मुझे ऐसे ही प्रभावयुक्त जानो, मैं सदा तुम्हारे निकट निवास करनेकी इच्छा करती हूं। मैं तुम्हारे निकट आके प्रार्थना करती हूं, कि तुम लोग श्रीयुक्त रहो।

गौओंने कहा, तुम्हारा मङ्गल होवे, तुम अस्थिर और चपला हो, इससे अनेक पुरुषोंके संग समान भावसे रहती हो, इसलिये हम सब तुम्हें नहीं चाहती है, जिस स्थानमें तुम अनुरक्त रहो, वहां जाओ। हम सब कोई वपुष्मती हैं इस समय तुम हमारा कौनसी इष्टसिद्धि करोगी? तुम्हारी जहां इच्छा हो, वहां जाओ, हम सब कृतकार्य्य हुई हैं।

लक्ष्मी बोली, हे गोवृन्द! तुम लोग जो मुझे अभिनन्दित नहीं करती हो, क्या यह तुम्हें उचित है; मैं दूसरोंके लिये दुर्लभ सती साध्वी हूं, तब तुम लोग किस निमित्त मुझे नहीं ग्रहण करती हो? हे उत्तमव्रती गोगण! लोकमें जो यह लोकापवाद प्रचलित है, कि स्वयं उपस्थित होनेपर पराभव होता है, वह सत्य तथा निश्चित है। मनुष्य, देवता, दानव, गन्धर्व्व, पिशाच, सर्प और राक्षसगण अत्यन्त उग्रतपस्या करते हुए मेरी सेवा किया करते हैं। हे गोवृन्द! तुम्हारा तो यही प्रभाव है, इसलिये मुझे ग्रहण करो। हे प्रियदर्शना! स्थावर जंगममय तीनों लोकके बीच मैं किसीके भी अपमानकी पात्री नहीं हूं।

गौओंने कहा, हे देवि! हम अपमान वा तुम्हारा पराभव नहीं करती हैं, तुम अस्थिर और चलचित्ता हो, इस ही लिये तुम्हें परित्याग करती हैं, बहुत वचन कहनेसे क्या फल है? तुम्हारी जिस स्थानमें इच्छा हो, वहां जाओ; हम सब वपुष्मती हैं। हे पापरहिते! तुमसे हमारा क्या होगा?

लक्ष्मी बोली, हे मानदायीगण! तुम लोग यदि मुझे प्रत्याख्यान करोगी, तो मैं सब लोगोंके निकट अवज्ञात होऊंगी, इसलिये तुम्हें मुझपर प्रसन्न होना चाहिये। तुम सबकी शरण्य महाभागा हो, इसलिये मुझ सदा भजमान अनिन्दनीय शरणागताका परित्राण करो। हे कल्याणीगण! मैं तुम्हारे समीप सम्मानकी अभिलाष करती हूं, मुझे तुम्हारे अधोवर्त्ती अत्यन्त निकृष्ट एक अङ्गमें वास करनेकी इच्छा है। हे पापरहित गोवृन्द! तुम्हारे शरीरके बीच कोई स्थान भी कुत्सित नहीं दीखता है, तुम लोग पुण्यदा, पवित्र और सुभगा हो, इसलिये मुझे आज्ञा दो; मैं तुम्हारे देहके जिस स्थानमें वास करूंगी, उसे तुम्हें कहना उचित है।

हे नरनाथ! करुणावत्सला कल्याणदायिनी गौओंने लक्ष्मीका ऐसा वचन सुनके इकट्ठी होकर विचारके उनसे कहा, हे कल्याणदायिनि यशस्विनि! हम लोगोंको तुम्हारा अवश्य सम्मान करना योग्य है, इसलिये तुम हमारे गोमयमूत्रमें निवास करो, क्यों कि हमारा यही पवित्र है। लक्ष्मी बोली, प्रारब्धसे ही तुमने मुझपर प्रसन्न होके कृपा की है, इसलिये ऐसा ही होगा। हे सुखप्रद गोवृन्द! तुम्हारा मङ्गल हो, मैं पूजित हुई हूं। हे भारत! श्रीदेवीने गौओंके सङ्ग इसी भांति नियमबद्ध होकर उन लोगोंके सम्मुखमें वहां ही अन्तर्हित होगई। हे तात! यह मैंने तुम्हारे निकट गोमयका माहात्म्य वर्णन किया, अब फिर गौओंका माहात्म्य कहता हूं सुनो।

८२ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! जो लोग गोदान करते तथा जो होमके शेषमें भोजन किया करते हैं, उनके यज्ञ वा सत्र सदा सिद्ध होते हैं। इस लोकमें दही और घृतके बिना यज्ञ पूर्ण नहीं होता, इसही निमित्त यज्ञका यज्ञत्व और मूल कहा जाता है। सब दानोंके बीच गोदान श्रेष्ठ है, गौवें सबसे उत्तम तथा पवित्र हैं और येही अत्यन्त पावन हैं। पुष्टि और शान्तिके निमित्त इनकी सेवा करे, इनके दूध, दही और घृत समस्त पाप नष्ट करते हैं। इस लोक तथा परलोकमें गौवें परम तेज स्वरूप कही गई हैं। हे भरतश्रेष्ठ! गौवोंसे बढ़के परम पवित्र वस्तु और कुछ भी नहीं है। हे युधिष्ठिर! इस विषयमें प्राचीन लोग ब्रह्मा और इन्द्रके सम्वादयुक्त पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे कौरवराज! किसी समयमें दैत्यदलके पराजित होनेपर त्रिलोकीनाथ इन्द्र सत्य धर्म्ममें रत समस्त प्रजा, ऋषि, गन्धर्व, किन्नर, सर्प, राक्षस, देव, असुर और सुपर्ण, प्रजापति, नारद, पर्व्वत, विश्वावसु और हाहा हूहू प्रभृति दिव्य तान गान करते हुए सब भांतिसे ब्रह्माकी उपासना कर रहे थे। उस समय वायु दिव्य पुष्पोंसे युक्त होकर बह रहा था, छहों ऋतु पृथक् पृथक् सुगन्धि लाने लगीं। उस सुरसभामें सब प्राणियोंके समागमके समय दिव्य बाजोंके सहित दिव्यांगनाओं और चारणोंसे सभास्थान परिपूरित होनेपर देवराजने ब्रह्माको प्रणाम करके विनयपूर्व्वक प्रश्न किया। हे भगवन् पितामह! लोकेश्वर गोलोक किस निमित्त देवताओंके ऊर्द्ध में स्थापित हुआ है? मैं इसे जाननेकी इच्छा करता हूं, हे ईश्वर! इस लोकमें गौवोंने कौनसी तपस्या वा ब्रह्मचर्य्य किया था, कि जिसके प्रभावसे रजोगुणसे रहित होकर सहजमें ही देवताओंके ऊर्द्ध में निवास करती हैं।

अनन्तर ब्रह्मा उस बल-निसूदन इन्द्रसे बोले, हे पाकशासन! गौवोंकी तुम सदा अवज्ञा किया करते हो, इस ही निमित्त तुम इनके माहात्म्यको नहीं जानते। हे सुरेश्वर! इसलिये तुम गौवोंका परम प्रभाव और माहात्म्य सुनो। हे इन्द्र! गौवें यज्ञके अङ्ग तथा यज्ञरूपी कही जाती हैं; गौवोंके बिना किसी प्रकारसे यज्ञ पूरा नहीं होता। गौवें घृत और दूधसे सारी प्रजाको धारण कर रही हैं; इनके पुत्र कृषिकार्य्योंको निबाहते हुए विविध धान्य तथा बीज उत्पन्न किया करते हैं। उसहीसे यज्ञ और हव्य कव्य आरम्भ होते हैं। हे देवराज! ये गौवें तथा इनके दूध, दही और घृत अत्यन्त पवित्र है। ये भूख प्याससे अधिक पीड़ित होके भी विविध भार ढोया करती हैं। ये कार्य्यसे मुनियों तथा समस्त प्रजाको धारण कर रही हैं। हे इन्द्र! ये निष्कपट व्यवहार करती हैं, इसीसे कर्म्म और सुकृतके सहारे सदा हम लोगोंके ऊर्द्ध में निवास किया करती हैं। हे देवराज! यह मैंने तुमसे देवताओंके ऊर्द्ध में गौवोंके निवासका कारण कहा है। हे इन्द्र! इन्होंने वर पाया है और वर देनेमें भी समर्थ हैं। हे सुरसत्तम बल-सूदन! पुण्यकर्म्मशालिनी शुभलक्षणवाली पावन गौवें जिस निमित्त पृथ्वीपर गई हैं, वह भी मैं विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सुनो।

हे तात! पहले समय सत्ययुगमें महानुभाव देवेन्द्र त्रिभुवनका शासन कर रहे थे, उस समय अदितिके सदा एक पदसे स्थित होकर घोर दुष्कर तपस्या करनेसे भगवान विष्णु उसके गर्भस्थ हुए; उसी समय दक्षपुत्री सुरभि नाम्नी देवीने महादेवी अदितिको उत्तम महत् तपस्या करते देखकर हर्षपूर्व्वक धर्म्मपरायण होके घोर तपस्या की थी। वह परम योग अवलम्बन करके देव गन्धर्व्वोंसे सेवित रमणीय कैलास पर्व्वतकी शिखरपर दश हजार दश सौ वर्षतक एक चरणसे निवास करने लगी। देवता, महर्षि और महोरगगण उस देवीकी

तपस्यासे सन्तप्त होकर मेरे सहित वहां जाके उस कल्याणीकी उपासना करनेमें प्रवृत्त हुए। अनन्तर मैंने उस तपस्या करनेवाली देवीसे कहा, हे अनिन्दिते देवि ! तुम किस निमित्त घोर तपस्या करती हो ? हे महाभागे शोभने ! मैं तुम्हारी इस तपस्यासे प्रसन्न हुआ हूं। हे देवि ! जो इच्छा हो, वर मांगो, मैं तुम्हें वर देता हूं।

सुरभि बोली, हे लोकपितामह भगवन् ! मुझे वरसे क्या प्रयोजन है ? हे अनघ ! आप जो मुझपर प्रसन्न हुए, यही मेरे लिये वर है।

ब्रह्मा बोले, हे विदशेश्वर शचिपति देवेन्द्र ! उस सुरभि देविके ऐसा कहनेपर मैंने उसे जो उत्तर दिया, वह सुनो। हे शुभानने देवि ! तुम्हारी अलोभकामना और तपस्यासे मैं प्रसन्न होकर तुम्हें अमर वर देता हूं और तुम तीनों लोकोंके ऊर्द्धमें निवास करोगी; मेरे प्रसादसे वह गोलोक नामसे विख्यात होगा, हे महाभागे ! तुम्हारी सन्तान वा दुहितावृन्द मनुष्यलोकमें शुभ कर्म करके गोलोकमें आकर निवास करेंगी। तुम मनहीमन ध्यान करनेसे ही दिव्य मानुष भोग पाओगी। हे शुभे ! हे देवि ! स्वर्गमें जो कुछ सुख है, उसे तुम वहांपर उपभोग करोगी। हे सहस्राक्ष ! सुरभिके समस्त लोक सर्व्वकाम संयुक्त हैं, वहांपर जरा-मृत्यु अथवा अग्नि संक्रमण करनेमें समर्थ नहीं है। हे इन्द्र ! वहां कुछ भी दैव-अशुभ नहीं है, उस स्थानमें दिव्यवन, समस्त आभरण कामगामी उत्तम वाहनोंसे युक्त विमान विद्यमान हैं। हे कमल नेत्र ! ब्रह्मचर्य्य, तपस्या, सत्य, दम, विविध दान, बहुतसे पुण्य, तीर्थसेवन, उत्तम महत् तपस्या और सुकृत कर्म्मके सहारे गोलोक प्राप्त होसकता है। हे असुरसूदन शक्र ! तुमने जो प्रश्न किया था, तुम्हारे समीप वह सब कहा गया, इसलिये तुम्हें गौवोंका परिभव करना योग्य नहीं है।

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर ! इन्द्र ऐसा सुनके सदा गौवोंकी पूजा और उनका बहुमान करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ ! यह तुम्हारे समीप परम पवित्र पावन और सर्व्वपाप नाशक गौवोंका अत्यन्त उत्तम माहात्म्य कहा गया। जो लोग समाहित होके हव्य, कव्य, यज्ञ और पितृकार्य्योंमें ब्राह्मणोंको सदा यह विषय सुनाते हैं। उनका सर्व्वकामिक अक्षय फल पितरोंके निकट उपस्थित होता है। मनुष्य गौवोंके भक्त होनेपर इच्छानुसार फल पाते हैं और जो स्त्रियें गौवोंमें भक्ति करती हैं, उन्हें भी सब काम्य-विषय प्राप्त होते हैं। पुत्रार्थी मनुष्य पुत्र पाते, कन्याकी इच्छा करनेवालोंको कन्या प्राप्त होती है; धनकी इच्छावाले धन पाते और धर्म्मार्थी मनुष्योंको धर्म्म प्राप्त होता है, विद्यार्थीको विद्या मिलती है, सुख चाहनेवाले सुख उपभोग किया करते हैं। हे भारत ! जो लोग गौवोंमें भक्ति करते हैं, उन्हें कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

८३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, इस लोकमें अत्युत्तम गोदानका विषय पितामहके द्वारा वर्णित हुआ, धर्म्मदर्शी राजाओंके लिये यह विशेष हितकर है। पापात्माचित्तवाले राजाओंके पक्षमें राज्य सदा दुःखकर और दुर्द्धर है, प्रायः राजाओंको शुभ गति नहीं होती, इसलिये वे लोग सदा भूमि दान करके पवित्र होते हैं। हे कुरुनन्दन ! आपने मेरे समीप सब धर्म्मोंका वर्णन किया और राजा नृगके द्वारा गोदानका विषय तथा नाचिकेत ऋषिने जो कहा था, वह पहले ही प्रमाणित हुआ है। वेद और उपनिषदके सहारे सब कार्य्यों तथा यज्ञोंमें भूमि, गऊ और सुवर्ण्ण दक्षिणारूपसे निर्द्दिष्ट है, ऐसा जनश्रुति है, कि उनके बीच सुवर्ण ही सब भांतिसे श्रेष्ठ दक्षिणा है। हे पितामह ! इसलिये इस

विषयका यथार्थ वृत्तान्त सुननेकी इच्छा करता हूं। सुवर्ण क्या है? किस समयमें किस प्रकार उत्पन्न हुआ? इसका स्वरूप क्या है? क्या यह देवी है? इसका फल क्या है? किस निमित्त श्रेष्ठ कहके वर्णित हुआ? मनीषि-गण किस निमित्त सुवर्ण दानकी प्रशंसा किया करते हैं? यज्ञकर्म्ममें दक्षिणाके लिये किस हेतु सुवरण श्रेष्ठ है? हे पितामह! भूमि और गऊसे सुवरण किस निमित्त पावन और श्रेष्ठ है तथा दाक्षिणाके लिये किस कारणसे वह परम श्रेष्ठ है? यह सब मेरे निकट वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! सुवरणकी उत्पत्तिके विषयमें बहुत बड़ा कारण जो मुझे मालूम हुआ है, तुम सावधान होकर उसे सुनो, मेरे पितामहतेजस्वी शान्तनुके मरनेपर मैं उनका श्राद्ध करनेके लिये गङ्गाद्वारमें गया था। हे तात! मैंने वहां जाके श्राद्धकर्म्म आरम्भ किया, उस समय मेरी माता जान्हवीने इस विषयमें सहायताकी थी। अनन्तर अग्रभागमें ऋषियोंको बैठाके जल दान प्रभृति कार्य्य आरम्भ किया। मैं सावधान होकर यथारीतिसे पूर्व्वकर्म्म समाप्त करके विधिपूर्व्वक पूरी रीतिसे श्राद्ध करनेमें प्रवृत्त हुआ। हे नरनाथ! अनन्तर उस दाभको भेदकर मनोहर अङ्गद तथा आभूषणोंसे युक्त एक लम्बी भुजा समुत्थित हुई। हे भरतश्रेष्ठ! मैं अपने पिताका स्वयं प्रतिग्रहीता होते तथा उनकी भुजाको निकली हुई देखके अत्यन्त विस्मित हुआ। अनन्तर शास्त्रके अनुसार विचार करके मैं फिर सावधान हुआ, वेदके बीच हाथमें पिण्ड देनेकी विधि नहीं है, इसलिये मैंने विचारा कि पितर लोग साक्षात् सम्बन्धसे इस लोकमें कदापि मनुष्योंका पिण्ड ग्रहण नहीं करते, ऐसा ही विहित है, इस हेतु कुशके बीच पिण्डदान करना चाहिये। हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर मैंने पिताके उस हस्तनिदर्शनका अनादर करके शास्त्रप्रमाणके अनुसार पिण्डदानकी सूक्ष्म विधि धारण करते हुए वह सब पिण्ड कुशके बीच ही प्रदान किया; जान रक्खो, कि यह शास्त्रके अनुसार ही हुआ।

हे नरनाथ! अनन्तर मेरे पिताकी बाहु अन्तर्हित हुई। हे भरतश्रेष्ठ! मेरे पिता स्वप्नमें मुझे दर्शन देके बोले, तुम जो शास्त्र प्रमाणके अनुसार इस विज्ञानसे मुग्ध नहीं हुए, इसलिये मैं प्रसन्न हुआ हूं। आत्मा धर्म्मश्रुत समस्त वेद ऋषियोंके सहित पितृगण साक्षात् पितामह ब्रह्मा और गुरुजन-ये सब कोई प्रमाणमें स्थित हैं और मर्य्यादा भी विचलित नहीं हुई। हे भरतश्रेष्ठ नरनाथ! इसलिये आज तुमने पूरा कार्य्य किया है, किन्तु भूमि और गौओंके निमित्त सुवर्ण दान करो। हे धर्म्मज्ञ! ऐसा करनेसे मैं और मेरे समस्त पितामहगण पवित्र होंगे, क्यों कि सुवर्ण परम पावन है। मेरे पिताने कहा था, कि जो लोग सुवर्ण दान करते हैं, वे दश ऊपरके और दश नीचेके पुरुषोंका उद्धार किया करते हैं। हे नरनाथ! अनन्तर मैं सावधान होनेपर विस्मित हुआ। हे भरतश्रेष्ठ! तब मैंने सुवर्ण दान करनेकी इच्छा की। हे महाराज! जामदग्न्यसम्बन्धीय धन तथा आयुष्कर इस पुराने इतिहासको सुनो।

पहले समयमें तीव्ररोषयुक्त जामदग्न्य रामने इक्कीस बार पृथ्वीको निःक्षत्रिय किया था। हे महाराज! अनन्तर महावीर राजीव-लोचन रामने अखण्ड पृथ्वीमण्डलको जीतके ब्राह्मण और क्षत्रियोंसे पूजित सर्व्वकामयुक्त वाजिमेध यज्ञ आरम्भ किया। वह यज्ञ सर्व्व-भूतोंके लिये पावन, तेज तथा द्युतिको बढ़ानेवाला है। जमदग्निपुत्र तेजस्वी रामने उस यज्ञसे पापरहित होके भी अपने चित्तको पवित्र न पाया। महात्मा भृगुनन्दन रामने दक्षिणायुक्त यज्ञ करके वेद जाननेवाले ऋषियों और देवताओंसे पूछा। हे महाभागगण! उग्र-

कर्म्ममें रत रहनेवाले मनुष्योंके लिये जो परम पावन हो, उसे ही वर्णन करिये, जब रामने करुणायुक्त होकर ऐसा कहा, तब वेदशास्त्र जाननेवाले महर्षिवृन्द उनका वचन सुनके बोले, हे राम! वेदप्रमाणके अनुसार ब्राह्मणोंका सम्मान करो। पावनके सम्बन्धमें फिर विप्रर्षियोंसे प्रश्न करो, वे महाप्राज्ञ महर्षिवृन्द जैसा कहें, वैसा ही करो।

अनन्तर महातेजस्वी भृगुनन्दनने देवर्षि वसिष्ठ, अगस्त्य और कश्यपसे यही विषय पूछा, उन्होंने कहा। हे विप्रेन्द्र! मेरी ऐसी मति हुई है, कि मैं कैसे कर्म्म तथा कौनसी वस्तु प्रदान करनेसे पवित्र हूंगा? हे सत्तम! यदि मुझपर आप लोगोंकी कृपा है, तो जिस प्रकार मेरी पवित्रता हो, उसे वर्णन करिये।

ऋषिवृन्द बोले, हे भृगुनन्दन! मैंने सुना है, कि पापी मनुष्य गऊ, भूमि और धन दान करके पवित्र होते हैं। हे विप्रर्षि! अन्य एक महत् पवित्र दिव्य अद्भुत रूपवाले, अग्निके पुत्र सुवर्णका दान विषय सुनो। मैंने सुना है, कि पहले समयमें वीर्य्यके प्रभावसे सब लोकोंको जलाके सुवर्ण उत्पन्न हुआ था। ऐसे विख्यात सुवर्णको दान करनेसे मनुष्य सिद्धिलाभ करता है। अनन्तर संशितव्रती वसिष्ठ मुनि बोले, हे राम! अग्निसे जिस प्रकार सुवर्ण उत्पन्न हुआ, उसे सुनो। जिसके दान करनेसे तुम्हें परम फल प्राप्त होगा, इस समय उसहीका वर्णन होता है। हे महाबाहो! सुवर्ण यतस्वरूप है, क्योंकि वह जैसा गुणान्तर है, वह सब मैं कहता हूं सुनो, इस सुवर्णको निश्चय ही अग्नि और चन्द्रस्वरूप जानो। हे भृगुनन्दन! ऐसा देखा तथा सुना गया है, कि अज, अग्नि, वरुण, मेष, सूर्य्य, अश्व, कुञ्जर, नाग, महिष, असुरगण और कुक्कुट, वराह, राक्षस, यज्ञ, भूमि, गऊ, पय, चन्द्रमा तथा पृथ्वी, इस समस्त जगतकी अंशसे तेजपुञ्ज उत्पन्न हुआ था। हे विप्रर्षि! इन सबसे अत्यन्त उत्तम रत्न सुवर्ण उत्पन्न हुआ। इस ही निमित्त देवता, गन्धर्व्व, सर्प, राक्षस, मनुष्य और पिशाचगण सावधान होके उसे धारण किया करते हैं। हे भृगुवंशधुरन्धर! वे सुवर्णके बने हुए मुकुट कवच आदि अनेक भांतिके अलंकारोंसे शोभित होते हैं। हे मनुजश्रेष्ठ! इन्हीं कारणोंसे भूमि गऊ तथा रत्न प्रभृति सब पवित्र वस्तुओंके बीच सुवर्ण परम पवित्र कहा गया है। इस लोकमें भूमि और गऊ दान करके अन्य जो कुछ श्रेष्ठ दान किया जाता है, उन सबके बीच सुवर्ण दान ही श्रेष्ठ हुआ करता है। हे देवद्युति! सुवर्ण अक्षय और पवित्र है, इसलिये इसे ब्राह्मणोंको दान करो, क्योंकि यह उत्तम तथा पावन है। समस्त दक्षिणा विषयमें सुवर्णही विहित हुआ है। जो लोग सुवर्ण दान करते हैं, वे सर्व्वप्रदाता होते हैं। जो लोग सुवर्णदान देते हैं, वे देवता दान किया करते हैं, क्योंकि अग्नि ही समस्त देवतात्मक है और सोना अग्निस्वरूप है, इसलिये सुवर्णदाता समस्त देवता दान करता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! पण्डित लोग सुवर्ण दानसे श्रेष्ठ और किसीको भी नहीं जानते। हे सर्व्व शास्त्रविशारद विप्रर्षि! मैं फिर कहता हूं, मेरे समीप सुवर्णका माहात्म्य सुनो।

हे भृगुनन्दन! पहले प्रजापतिने न्यायपूर्व्वक जो कहा, है, उसे मैंने पुराणमें सुना है। हे भृगुकुलधुरन्धर! सर्व्वश्रेष्ठ हिमालय पर्व्वतपर महानुभाव भगवान शूलधारी रुद्रके सहित रुद्राणी देवीका विवाह होनेपर महानुभाव भगवान शिवका देवीके सङ्ग समागम होनेके समय समस्त देववृन्द घबड़ाकर महादेवके निकट उपस्थित हुए। हे भृगुनन्दन! वे सब लोग बैठे हुए महादेव और उमादेवीको सिर झुकाकर प्रणाम करके उनसे बोले, हे देव! देवीके संग आपका यह समागम होता है, आप अत्यन्त तेजस्वी तपस्वी हैं और देवी भी अति

तेजस्विनी तपस्विनी हैं। हे देव! आपका तेज अव्यर्थ है, हमारे देवीका तेज भी वैसा ही है; हे देव! हे विभु! आपका अत्यन्त बलवान पुत्र होगा, वह पुत्र तीनों लोकके बीच किसीको भी अवशिष्ट न रक्खेगा, यह निश्चय ही बोध हो रहा है। हे विशालनेत्र लोकेश! इसलिये आप इन प्रणत देवताओंके हितके लिये वर दान करिये। हे विभु! आप पुत्रके निमित्त परम तेजको रोकिये। आप त्रिभुवनके सारस्वरूप हैं, इसलिये सब लोकोंको सन्तापित न करिये, आपका वह पुत्र निश्चय ही देवताओंको अभिभव करेगा। हमारे विचारमें देवी पृथ्वी, स्वर्ग और आकाश, ये सब आपके तेजको धारण करनेमें समर्थ न होंगे। तब यह समस्त जगत आपके तेजप्रभावसे एकबारही भस्म होगा। हे प्रभु भगवन्! इसलिये आपको हमपर प्रसन्न होना उचित है। हे सुरसत्तम! इस देवोमें आपका पुत्र होना सम्भव नहीं है, इसलिये धीरजके सहारे अत्युत्तम जलते हुए तेजको निग्रह करिये।

हे विप्रर्षि! देवताओंके ऐसे वचन सुनकर भगवान् वृषभध्वजने उन्हें 'एवमस्तु' कहके उत्तर दिया। वृषवाहन शिवने उनका वचन स्वीकार करके निज वीर्य्यको ऊर्द्धमें धारण किया; तभीसे उनका नाम ऊर्द्धरेता हुआ। अनन्तर इस प्रकारसे पुत्र न होनेपर रुद्राणीने क्रुद्ध होकर स्त्रीस्वभावके अनुसार सहजहीमें क्रोधवशसे देवताओंको यह कठोर वचन बोलीं, कि जिस कारणसे पुत्रकी इच्छा करनेवाले मेरे स्वामी तुम लोगोंके द्वारा पुत्रलाभसे निवृत्त हुए, उस ही निमित्त तुम लोगोंके पुत्र नहीं होगा। हे देववृन्द! तुम लोगोंने जिस प्रकार मेरे पुत्र नहीं होने दिये, उसी भाँति तुम्हारे भी सन्तान न होंगी। हे भृगुनन्दन! उस शाप देनेके समय अग्निदेव वहांपर उपस्थित नहीं थे। देवीके ऐसे शापसे देववृन्द उसी समयसे अनपत्य हुए, उस समय रुद्रदेवने अप्रतिम तेज धारण किया। अनन्तर उनसे कुछ तेजस्खलित होके पृथ्वीपर गिरा। वह अद्भुत तेज पृथ्वीपर गिरते ही अग्निमें मिलकर बढ़ने लगा। वह तेज अग्निमें मिलकर आत्मयोनित्वको प्राप्त हुआ, उस ही समयमें इन्द्रादि देववृन्द तारक नाम असुरके द्वारा अत्यन्त सन्तापित हुए। आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, मरुद्गण, दोनों अश्विनीकुमार और साध्यगण दैत्यके पराक्रमसे भयभीत हुए थे। देवताओंके स्थान, पुरी, विमान और ऋषियोंके आश्रमोंको असुरोंने हर लिया था। देवता और ऋषि लोग दीनचित्त होकर अजर अमर विभु ब्रह्माके शरणागत हुए।

८४ अध्याय समाप्त।

देववृन्द बोले, हे प्रभु! आपने जिसे वर दान किया है, वह तारक नाम महाअसुर देवताओं और ऋषियोंको क्लेश दे रहा है। इसलिये उसके मारनेकी युक्ति करिये। हे पितामह! उससे हम लोगोंको भय हुआ है, इसलिये आप हमें उबारिये, हम लोगोंको और दूसरा उपाय नहीं है।

ब्रह्मा बोले, इस लोकमें सब प्राणी मोहयुक्त अधर्मकी अभिलाष नहीं करते, इसलिये देवताओं और ऋषियोंको पीड़ा देनेवाले ताड़कासुरको शस्त्रसे मारो। हे सुरसत्तम! वेद और धर्म नष्ट न होजावे, उस विषयमें मैंने पहले ही उपाय रचा है, इसलिये तुम्हारा दुःख दूर होवे।

देववृन्द बोले, आपके वरप्रभावसे वह दैत्य बलसे गर्व्वित हुआ है, इसलिये देवताहन्द उसे मारनेमें समर्थ नहीं हैं, तब वह किस प्रकार नष्ट होगा? हे पितामह! तारकासुरने "मैं देव दानव और राक्षसोंके द्वारा न मारा जाऊं"—

ऐसा ही कहके आपके समीप वर लिया है। पहिले रुद्राणीकी पुत्र कामना नष्ट होनेसे उन्होंने देवताओंको यह शाप दिया है, कि तुम लोगोंके सन्तान न होगी।

ब्रह्मा बोले, हे सुरोत्तमगण! उस शाप देनेके समय वहांपर अग्निदेव नहीं थे, वे देव द्वेषियोंको मारनेके लिये पुत्र उत्पन्न करेंगे। वह पुत्र देव, दानव, राक्षस, मनुष्य, गन्धर्व्व, नाग और पक्षियोंको अतिक्रम करके जिस तारकासुरसे तुम लोगोंको भय हुआ है, उसे अव्यर्थपात शक्ति अस्त्रसे तथा देवशत्रु अन्य असुरोंको मारकर 'सनातन सङ्कल्पकाम' इस नामसे विख्यात होगा। रुद्रका वीर्य्य स्खलित होके जो अग्निमें प्रविष्ट हुआ है, उस ही तेजसे अग्निदेव द्वितीय अग्निकी भांति गङ्गाके गर्भसे देवशत्रुओंको मारनेवाला एक महत् पुत्र उत्पन्न करेंगे। अग्निदेव शापके समयमें छिपे हुए थे इस ही निमित्त वे शापग्रस्त नहीं हुए। हे देवगण! इसलिये उसहीसे तुम लोगोंके भयको छुड़ानेवाला पावकनन्दन उत्पन्न होगा। अब तुम लोग अग्निदेवको खोजके इस कार्य्यमें नियुक्त करो। हे अनघगण! यह मैंने तारकासुरके वधका उपाय कहा है। तेजस्वियोंका शाप तेज पदार्थको अभिभव नहीं कर सकता, बल प्रबल पुरुषोंके समीप अबल हुआ करता है। तपस्विगण अवध्य वरयुक्त पुरुषोंका भी नाश करनेमें समर्थ हैं। सनातन जगत्पति अग्निदेव सर्व्वग सर्व्वभावन सब प्राणियोंके हृदयमें शयन करनेवाले काम्यमान् अग्निदेव पुत्रविषयमें कामनायुक्त होवें। ये रुद्रदेवसे भी जेठे और सर्व्व शक्तिमान हैं; अब तेजपुञ्ज अग्निको शीघ्र खोज करो, वही अग्निदेव तुम लोगोंकी इच्छा पूरी करेंगे। तिसके अनन्तर देवताओंने महानुभाव ब्रह्माका ऐसा वचन सुनके सङ्कल्प सिद्ध होनेसे अग्निको खोजनेके लिये प्रस्थान किया। ऋषियों और देवताओंने अग्निके दर्शनकी इच्छा करके उन्हें तीनों लोकोंमें खोजने लगे। हे भृगुश्रेष्ठ! परम तपस्यायुक्त लोकविख्यात् सिद्धगण अग्निको खोजते हुए सब लोकोंमें घूमने लगे। किन्तु जलमें लीन रहनेसे अग्निदेव नहीं दीख पड़ते थे, इसीसे उन्हें न जान सके। अनन्तर अग्निके तेजसे प्रदीप्त और दुःखितचित्त होके एक जलचर मेड़क रसातलसे निकलके अग्निके दर्शनकी इच्छा करनेवाले डरे हुए देवताओंसे बोला। हे देवगण! अग्निदेव रसातलके तले निवास करते हैं, मैं उनके उत्तापसे दुःखी होके इस स्थानमें आया हूं। हे देवगण! वह हव्यवाहन भगवान अपने तेजके सहारे जलका संसर्ग करके उसके बीच सोते हैं। हम उनके प्रभावसे सन्तापित हुए हैं। हे देवगण! यदि तुम लोगोंको इच्छा अग्निदेवके दर्शन करनेकी हो और उनके सहारे तुम्हारा किसी कार्य्यको सिद्ध करनेका प्रयोजन हो, तो जाओ उस ही स्थानमें उन्हें पाओगे। हे देववृन्द! मैं अग्निके भयसे दुःखित हुआ हूं, इसलिये जाता हूं। मेड़क ऐसा कहके शीघ्र ही जलमें प्रविष्ट हुआ हुताशनने उस समय मेड़ककी खलता जान ली और उन्होंने उसे यह कहके शाप दिया, कि तुम्हें 'रसका ज्ञान न होगा।' सर्व्वशक्तिमान अग्निदेव मेड़कको ऐसा शाप देके शीघ्र ही वहांसे दूसरे स्थानमें निवास करनेके लिये चले गये; देवताओंको दर्शन नहीं दिया। हे महाबाहो भृगुश्रेष्ठ! देवताओंने मेड़कोंपर जिस भांति कृपा की, मैं वह सब कहता हूं सुनो।

देवगण बोले, अग्निके शापसे यद्यपि तुम जिह्वारहित तथा रसज्ञानसे हीन हुए हो, तौभी तुम लोग अनेक प्रकारके वाक्य बोलोगे। बिलवासी, निराहारी, अचेतन, गतप्राण और सूख जानेपर भी पृथ्वी तुम लोगोंको धारण करेगी, तुम लोग घोर अन्धकारसे युक्त रात्रिके समयमें भी विचरोगे। देववृन्द मेड़कसे ऐसा वचन कहके अग्निको खोजनेके निमित्त फिर

इस पृथ्वीपर घूमने लगे, किन्तु हुताशनको न देखसके। हे भृगुनन्दन! अनन्तर देवेन्द्रके ऐरावत सदृश किसी हाथीने देवताओंसे कहा, कि अग्निदेव अश्वत्थवृक्षमें निवास करते हैं। तब अग्निने क्रुद्ध होके सब हाथियोंको शाप दिया।

हे भृगुवंशधुरन्धर! हाथीके द्वारा सूचित होनेपर अग्निदेवने उसे शाप दिया, कि तुम्हारी जिह्वा उलटी होगी। हाथियोंको ऐसा शाप देकर अश्वत्थवृक्षसे निकलकर शयन करनेकी इच्छासे शमीवृक्षमें प्रविष्ट हुए। हे भृगुकुलश्रेष्ठ! सत्यपराक्रमी देवताओंने प्रीतिपूर्व्वक जिस प्रकार हाथियोंपर कृपाकी थी, उसे सुनो।

देववृन्द बोले, तुमलोग उलटी जीभसे भी सब वस्तु खाओगे और ऊंचे स्वरसे अव्यक्त वाक्य उच्चारण करोगे देवताओंने ऐसा कहके फिर अग्निका अनुसरण किया। अग्नि भी अश्वत्थवृक्षसे निकलकर शमीगर्भमें आकर बैठ रहे। हे विप्र! अनन्तर सुग्गेके मुखसे अग्निके निवासका विषय सुनके देववृन्द उस ही ओर दौड़े। तब अग्निदेवने सुवाको शाप दिया कि तुम वाक्यरहित होगे और उसकी जिह्वा ऐंठ दी। देवताओंने अग्निको देखके दयायुक्त होकर सुवासे कहा, हे शुक! तुम्हारा वचन एक-बारगी नष्ट होगा, जिह्वा ऐंठी रहनेपर भी तुम्हारा वचन बालकी भांति अव्यक्त मधुर अद्भुत और अत्यन्त मनोहर होगा। शुकपक्षीको ऐसा कहके देवताओंने शमीगर्भमें अग्निदेवको देखके उस शमीवृक्षको ही सब कार्य्योंके लिये पवित्रस्थान किया। तभीसे अग्नि शमीगर्भसे उत्पन्न हुआ करती है। उस ही समयसे मनुष्योंको शमीकी शाखासे अग्नि उत्पन्न, करनेका उपाय मालूम हुआ। हे भार्गव! रसातलमें जो सब जल अग्निके द्वारा स्पर्शयुक्त हुआ था, जिसमें अग्निदेव सोये थे और जो, अग्निके तेजसे उत्तप्त हुआ था; वही पर्व्वतके झरनेके सहारे उष्णता परित्याग किया करता है। जो हो, उस समय अग्निदेव देवताओंको देखके दुःखित हुए और उनसे पूछा कि तुम लोग किस निमित्त आये हो? उन देवताओं और परमर्षियोंने अग्निसे कहा, कि हम लोग तुम्हें किसी कार्य्यमें नियुक्त करेंगे, वह तुम्हें करना होगा, उसे करनेसे तुम्हारा भी उत्तम महान् गुण प्रकटेगा।

अग्निदेव बोले, हे देववृन्द! कहो तुम्हारा कौनसा कार्य्य है? मैं उसे करूंगा। मुझे तुम लोगोंके नियोज्य विषयमें कुछ विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है।

देववृन्द बोले, तारक नाम असुर ब्रह्माके वरसे दर्पित होकर बलपूर्व्वक हम लोगोंको पीड़ित करता है, इसलिये उसके वधका विधान करो। हे महाभाग पावक! इन देवताओं, ऋषियों और प्रजापतिका परित्राण करो। हे प्रभु! तेजसे युक्त वीरपुत्र उत्पन्न करो। हे हव्यवाहन! उस असुरसे हम लोगोंको भय हुआ है उसे नष्ट करो। हम लोग महादेवीके द्वारा शापयुक्त हुए हैं, इस समय तुम्हारे पराक्रमके अतिरिक्त हमारे लिये और कुछ भी सहारा नहीं है। हे प्रभु! इसलिये हमारा परित्राण करो। अनन्तर दुर्द्धर्ष भगवान हव्यवाहनने कहा, "ऐसा ही होगा" इतना कहके वह भागीरथी गङ्गाके समीप गये गङ्गाके निकट जाके उनके सङ्ग सहवास किया और उसी समय गङ्गाको गर्भ रह गया। तब कोषमें कृष्णवर्त्माकी भांति वह गर्भ बढ़ने लगा, अग्निके तेजसे गङ्गा विह्वल तथा अचेत होकर बहुत ही सन्तापित हुईं, वह उसे सह न सकीं अग्निके द्वारा तेजयुक्त गर्भके स्थित होनेपर किसी असुरने भयङ्कर शब्द किया। अकस्मात् उत्पन्न हुए उस महाशब्दसे गङ्गा डरके सम्भ्रान्तनयन विह्वल, चेतहीन तथा संज्ञारहित होकर देहके सहित गर्भको भी चलनेमें असमर्थ हुईं।

हे विप्र! तब गङ्गा तेजसे परिपूरित होके

कांपती तथा गर्भबलसे आक्रान्त होकर अग्नि-देवसे बोलीं, हे भगवन्! मैं आपके इस तेजको धारण करनेमें समर्थ नहीं हूं। मैं इस तेजसे विमूढ़ हुई हूं; पहलेकी भांति मेरा स्वास्थ्य नहीं है। हे अनघ भगवन्! मैं विह्वल हुई हूं, मेरी चेतनशक्ति नष्ट होरही है। हे तप-ताम्बर! मैं इस तेजको धारण नहीं कर सकती इसलिये मैं दुःखपूर्व्वक इसे त्यागती हूं और स्वेच्छानुसार त्यागना नहीं चाहती। हे देव विभावसु! मेरा कभी किसी तेजके साथ संस्पर्श नहीं है। हे महाद्युति! आपदके हेतु यह आपके संग अत्यन्त सूक्ष्म सम्बन्ध हुआ। हे हुताशन! इस विषयमें जो कुछ दोष गुण अथवा धर्म्माधर्म्म होगा, उसे मैं तुम्हारा ही विचारती हूं।

अनन्तर हुताशनने उनसे कहा, मेरे तेजसे युक्त इस गर्भको धारण करो, इससे महागुण तथा फल प्राप्त होगा। तुम निज शक्तिबलसे इस अखण्ड भूमण्डलको धारण करने तथा उठानेमें समर्थ हो, गर्भ धारणके अतिरिक्त तुम्हें और कुछ भी अप्राप्य नहीं है। अग्नि और देवताओंसे निवारित होके भी गर्भ धारण करनेमें असमर्थ होनेसे सरिद्वरा गङ्गाने उस समय पर्व्वतश्रेष्ठ सुमेरुके ऊपर उस गर्भको परित्याग किया, वह गर्भधारण करनेमें समर्थ होनेपर भी रुद्ररूपी अग्निके तेजसे प्रबाधित होके निज तेजके सहारे गर्भ धारण न कर सकीं। हे भृगुकुलधुरन्धर! जब गङ्गाने उस अग्निसदृश प्रभायुक्त प्रदीप्त गर्भको परित्याग करके निवास किया, तब अग्निदेव उस सरिद्वराको दर्शन देके बोले, हे देवि! गर्भ सुखसे उदित हुआ है? उसका कैसा वर्ण है? कैसा दीखता है और वह कैसे तेजसे संयुक्त है? यह सब वृत्तान्त मुझसे कहो।

गङ्गा बोलीं, हे अनघ! वह गर्भ सुवर्ण-वर्ण और तेजमें तुम्हारे सदृश है, विमल सुवर्ण समान उस प्रदीप्त गर्भने पर्व्वतको प्रकाशित किया है। हे तपताम्बर! वह गर्भ पद्मोत्पल-युक्त ह्रदकी भांति शीतल है, उसकी सुगन्धि कदम्बपुष्पकी भांति है, सूर्य्यके समान तेजयुक्त उस गर्भकी किरणोंके सहारे पृथ्वी और पर्व्व-तकी जो कुछ वस्तु स्पर्शित हुई हैं, वे सब काञ्चनरूपी दिखाई देती हैं। वह गर्भ तेजके सहारे स्थावर जङ्गमात्मक त्रिभुवनको प्रदीप्त करते हुए पर्व्वत, नदी और झरनोंमें दौड़ रहा है। हे हव्यवाहन! आपका पुत्र ऐसे ऐश्वर्य्यसे युक्त है, कि तेजमें सूर्य्य तथा वैश्वानरके समान और कान्तिमें द्वितीय चन्द्रमा हुआ है। हे भृगुनन्दन! भागीरथी देवी इतना कहके वहीं अन्तर्हित हुईं, तेजस्वी पावक भी उस समय देवताओंके कार्य्यको सिद्ध करके अभिलषित स्थानमें चले गये। इन्हीं सब कर्म्मों तथा गुणोंसे लोकमें देवताओं और ऋषियोंके द्वारा अग्निका 'हिरण्यरेता' नाम वर्णित हुआ करता है। पृथिवीदेवी भी उसी समयसे वसु-मती नामसे विख्यात हुई हैं। गङ्गाके गर्भसे गिरके वह अग्निसे उत्पन्न अद्भुतदर्शन तेज-युक्त गर्भ दिव्य शरवणको प्राप्त होके वहां बढ़ने लगा। कृत्तिकागणोंने उस बालार्कसदृश तेज उत्पन्न सन्तानको देखा, वे लोग उस बालक पुत्रको स्तनका दूध पिलाके पालने लगीं। इस ही निमित्त उस परम तेजस्वी बालकका नाम कार्त्तिकेय हुआ। गङ्गाके गर्भसे स्खलित होनेसे उनका नाम स्कन्द और गुहामें वास करनेसे गुह नाम हुआ था। इस ही भांति अग्निका पुत्र सुवर्ण उत्पन्न हुआ। सुवर्ण अनेक भांतिका होनेपर भी उसके बीच जाम्बुनद नाम स्वर्ण ही सबसे श्रेष्ठ है, वह देवताओंका भूषण होनेसे जातरूप नामसे विख्यात हुआ है यह सब रत्नोंके बीच उत्तम रत्न तथा समस्त भूषणोंके बीच उत्तम भूषण सारी पवित्र वस्तु-ओंसे पवित्र और सब मङ्गलोंका मङ्गलरूप

है। सुवर्ण ही भगवान अग्नि देव और प्रजापति स्वरूप है। हे द्विजसत्तम! सोना सब पवित्र वस्तुओंके बीच अत्यन्त पवित्र है, जातरूप अग्निसोमात्मक रूपसे वर्णित हुआ करता है।

वशिष्ठ बोले, हे राम! पहले समयमें जो परमात्मा पितामह ब्रह्माको ब्रह्मदर्शन हुआ था; मैंने वह कथा सुनी है। हे तात! वारुणी मूर्त्तिधारी महादेवके वारुण ऐश्वर्य्यके समय अग्नि आदि देवताओं और मुनियोंने ईश्वर रुद्रदेवके निकट आगमन किया था। यज्ञमें सब अङ्ग, मूर्त्तिमान वषट्कार, सशरीर समस्त साम, सहस्रों यजुर्मन्त्र और पद तथा क्रम विभूषित ऋग्वेदने वहांपर आगमन किया। समस्त लक्षण, देवताओंकी स्तुति, निरुक्त, सुरपंक्ति ओंकार और निग्रह प्रग्रह नाम यज्ञके दो नेत्र, ये सब वहांपर स्थित हुए। उपनिषदोंके सहित सब वेद, सावित्री विद्या, वर्त्तमान, भूत और भविष्य आदिको भगवान महादेवने धारण किया था। उस समय उन्होंने स्वयं ही अपनेको आहुति प्रदान की। पिनाकधारी महादेवने बहुरूप यज्ञको शोभित किया। सर्व्व भूतपति ये भगवान महादेव ही स्वर्ग, आकाश पृथिवी, भूपति, सर्व्वविघ्नेश्वर श्रीमान् विभावसु, ब्रह्मा, शिव, रुद्र, वरुण और अग्नि हैं तथा येही प्रजापतिरूपसे वर्णित होते हैं। हे भृगुकुलधुरन्धर! उस पशुपतिके यज्ञ, तपस्या तथा सब क्रिया निर्व्वाहित होती रहनेपर दीप्तव्रती दीक्षा देवी, दिशीश्वरके सहित सब दिशा, देवपत्नी, देवकन्या और देवमातृगण महात्मा वरुणके ऊपर प्रसन्न होके सब कोई मिलकर महादेवके यज्ञमें आयीं। देवकन्या प्रभृतिको देखके स्वयम्भूका वीर्य्य पृथ्वीपर गिरा। पूषाने उनके शुक्रके निस्पन्दवशसे पृथ्वीपरसे दोनों हाथोंसे वीर्य्यके सहित पांशु संग्रह करके उसी अग्निमें डाल दिया। उस प्रज्वलित अग्निसेयुक्त उस यज्ञके पूर्ण होनेपर होमकर्त्ता प्रजापतिके द्वारा परम श्रेष्ठ धातुकी उत्पत्ति हुई, हे भृगुनन्दन! धातु स्खलित होते ही उन्होंने उसी स्रुवामें लेकर मन्त्र पढ़के घृतकी भांति होम किया।

अनन्तर वीर्य्यवान भगवान् ब्रह्माने उस तेजसे चार प्रकारके प्राणियोंको उत्पन्न किया। उस होसे इस लोकमें प्रवृत्ति प्रधान समस्त जङ्गम प्राणी उत्पन्न हुए, उस वीर्य्यके तम अंशसे स्थावरोंकी उत्पत्ति हुई; स्थावर और जंगम दोनों ही सत्त्वांशमें सन्निविष्ट रहे। वह सत्त्वही प्रकाशरूपी बुद्धिका नित्यगुण है, सत्त्व ही बुद्धि स्वरूप है, उस बुद्धिसत्त्वसे आकाश आदि सारा जगत् उत्पन्न हुआ। तमोमय जड़ शरीरमें सत्त्व अर्थात् प्रकाश वा उत्तम तेज तथा धर्म्मप्रवृत्ति स्थित रहो। अग्निके बीच प्रजापतिका वीर्य्य होम किये जानेपर उससे निज निज कारणज गुणोंके सहित तीन मूर्त्तिमान पुरुष उत्पन्न हुए। अग्निज्वाला भर्गसे पहले भृगु उत्पन्न हुए, अंगारसे अंगिरा जन्मे। अंगारकी अल्पज्वालासे कवि नाम पुरुष उत्पन्न हुआ। भृगु ज्वालमालाके सहित उत्पन्न हुए थे, इस ही निमित्त भृगु अर्थात् ज्वालाके नामके सहारे उनका भृगु नाम हुआ है। मरीचि अर्थात् किरणसे मरीचि उत्पन्न हुए, मरीचिसे कश्यपकी उत्पत्ति हुई। हे तात! अंगारसे अंगिरा और कुशासे बालखिल्य मुनि उत्पन्न हुए। अत्र अर्थात् इन कुशोंसे ही अत्रि जन्मे थे, इसलिये पण्डित लोग उन्हें अत्रि कहा करते हैं। भस्मसे ब्रह्मर्षियोंसे सम्मत तपस्या शास्त्रज्ञाता और गुणान्वित वैखानस मुनिवृन्द उत्पन्न हुए। उनके आंसूसे सुन्दरतायुक्त दोनों अश्विनीकुमार जन्मे। अवशिष्ट प्रजापतिवृन्द उनकी इन्द्रियोंसे उत्पन्न हुए। रोम कूपसे ऋषि, स्वेदसे छन्द और वीर्य्यसे मनकी उत्पत्ति हुई। शास्त्रज्ञानसे युक्त ऋषि लोग वेद प्रमाण देखके इस ही निमित्त अग्निको सर्व्व देवमय कहा करते हैं। यज्ञकाष्ठ जो सब दारु हैं, वे मास और

दारुगत जो काष्ठादि हुए थे, वे पक्ष, मुहूर्त्त तथा अहोरात्र नामसे विख्यात हुए। वरुणको ज्योतिको पित्त और रुद्रको ज्योतिको पण्डित लोग लोहित कहते हैं, ऐसा वर्णित है, कि लोहितसे स्वर्ण उत्पन्न हुआ है। सुवर्णका अधिष्ठात्री देवता मित्र है, इसलिये इसे मैत्र जानो। यह कारण है, कि धूमसे वसुगण उत्पन्न भये हैं। ज्वालासे रुद्र और महातेजस्वी आदित्य उत्पन्न हुए, यज्ञस्थलमें जो सब अंगार थे, वेही आकाशस्थित ग्रह नक्षत्र रूपसे वर्णित हुए हैं। जो जगत्के आदिकर्त्ता हैं, वेही परब्रह्म, वेही ध्रुव तथा सर्व्व कामप्रदाता हैं। प्राचीन लोग ऐसा कहा करते हैं, कि उन्होंने अपना निज रहस्य कहा था।

अनन्तर यज्ञ समाप्त होनेपर पानात्मके महादेव वरुण बोले, हमारा ही दिव्य अस्त्र है, इस समय मैं ही ग्रहपति हूं, पहले जो भृगु, अंगिरा और कवि नाम तीन अपत्य उत्पन्न हुए हैं, वे निःसन्देह हमारे ही पुत्र हैं। हे देवगण! वह हमारे ही यज्ञका फल जानो।

अग्निदेव बोले, पूर्व्वोक्त तीनों पुत्र मेरे अंगसे उत्पन्न हुए हैं और मेरा ही आसरा किये हैं, इसलिये वे मेरे ही पुत्र हैं, वरुणका चित्त अवश हुआ है, इसीसे ये भ्रममें पड़े हैं।

अनन्तर लोकगुरु सर्व्वलोक पितामह ब्रह्मा बोले, हमारे उस वीर्य्यके होम करनेपर जो तीन अपत्य उत्पन्न हुए हैं, वे मेरे ही पुत्र हैं, मैं ही यज्ञकर्त्ता और वीर्य्यहोम करनेवाला हूं, इसलिये यदि वीर्य्य कारण हो, तो जिसका बीज है, उसहीका फल होसकता है।

अनन्तर देववृन्द पितामहके समीप आके हाथ जोड़ सिर झुकाके उन्हें प्रणाम करके बोले, हे भगवन्! हम सब कोई स्थावर जंगमात्मक समस्त जगत्के सहित तुमसे ही उत्पन्न हुए हैं इसलिये आप ही हम लोगोंके उत्पत्ति विषयमें कारण हैं, किन्तु विभावसु अग्नि, वरुण और देवेश्वर अपना अभिलषित विषय प्राप्त करें। ब्रह्माके स्वभाव तथा आज्ञाके अनुसार यादोगणके स्वामी वरुणने सूर्य्यके समान तेजस्वी जेठे पुत्र भृगुको ग्रहण किया। ईश्वरने अंगिराको अग्निका पुत्र कर दिया और तत्त्ववित् पितामह ब्रह्माने कविको निजपुत्र कहके ग्रहण किया। तभीसे प्रसवकर्म्मकारी भृगु वारुण नामसे विख्यात् हुए। श्रीमान् अंगिरा आग्नेय नामसे प्रसिद्ध हुए और महायशस्वी कवि ब्राह्म नामसे विख्यात हुए। भार्गव और आंगिरस इस लोकमें लोकविस्तारके कारण हुए। ये तीनों प्रजापति समस्त पुत्रोंको उत्पन्न करने लगे। यह निश्चय जानो कि सब कोई इन्होंके सन्तान हैं। च्यवन, वज्रशीर्ष, शुचि, उर्व्व, वरणीय शुक्र, विभु और सवन, ये सातों भृगुके पुत्र हैं, ये सब कोई भृगुके सदृश गुणयुक्त हैं। तुम जिनके वंशमें उत्पन्न हुए हो, वे भार्गवगण भी वारुण हैं। और वृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, विरुप, सम्वर्त्त और सुधन्वा ये आठो अंगिराके पुत्र हैं, ये सभी ज्ञाननिष्ठ, निरामय और वन्हिज होनेपर भी वारुण कहा है। ब्रह्माके पुत्र कवि हैं, कविके आठ पुत्र हुए, वेभी वारुण नामसे वर्णित हुआ करते हैं, ये सब गुणयुक्त, कारण और कल्याणकारी हैं, इनके ये नाम हैं,—कवि, काव्य, धृष्णु, बुद्धिमान् उशना, भृगु, विरजा, काशी और धर्म्मज्ञ उग्र, ये आठो कविके पुत्र हैं, इनसे सारा जगत् व्याप्त है। इन्होंके सहारे प्रजासमूहको उत्पत्ति हुई है, इस ही निमित्त ये प्रजापति हैं। हे भृगुश्रेष्ठ! इस ही प्रकार अंगिरा, कवि और भृगुके वंशीय सन्तान परम्पराक्रमसे जगत् व्याप्त हुआ है। हे विप्र! हे तात! सर्व्वशक्तिमान् सर्व्वनियन्ता वरुणने पहले कवि और भृगुको ग्रहण किया था, इस ही निमित्त वे दोनों वारुण नामसे विख्यात हुए हैं। और श्रियावान अग्निदेवने अंगिराको ग्रहण किया था,

इसीसे उनके वंशमें उत्पन्न हुए सन्तानोंको आंगिरस जानो। पितामह ब्रह्मा पहिले देवताओंके द्वारा इस ही भांति प्रसन्न हुए थे, कि ये नियन्तृगण जगत्‌में प्रजापुञ्जके सहारे हम लोगोंको पूरी रीतिसे तारेंगे। इसलिये ये सब कोई प्रजापति तथा तपस्वी होकर आपको कृपासे सब लोकोंका उद्धार करेंगे और आपके तेजको वृद्धि करते हुए वंशकर्त्ता होंगे। ये प्राजापत्य महर्षिगण प्रियदर्शन और देवपक्षमें श्रेष्ठ होकर परम तपस्या तथा ब्रह्मचर्य्य लाभ करेंगे।

हे प्रभु पितामह! हम और ये लोग सब कोई तुमसे ही उत्पन्न हुए हैं, आप देवताओं और ब्राह्मणोंके विधाता हैं, मरीचि प्रभृति समस्त भार्गवगण आपके अपत्य हैं, यह देखके हम लोग आपके उत्कर्षके लिये परस्परके अभिभव करनेमें यत्नवान् न होंगे। वे लोग क्षमाशील होके प्रजा उत्पन्न करेंगे और इस ही प्रकार उत्पत्ति और प्रलयके अन्तरालमें आपको स्थापित करेंगे। लोक पितामह ब्रह्माने उस समय देवताओंका वचन सुनके 'तथास्तु' कहा; तब देववृन्द अपने अपने स्थान पर गये। आदिकालमें वारुणी मूर्त्तिधारी देवश्रेष्ठके उस यज्ञमें ऐसी ही घटना हुई थी, अग्नि ही ब्रह्मा, महादेव, सर्व्वरुद्र और प्रजापतिस्वरूप है। ऐसा निश्चय है, कि यह सुवर्ण अग्निका पुत्र है। प्रमाणज्ञ जामदग्न्य वेदश्रुतिके निदर्शननिबन्धनसे अग्निके अभावमें उसके स्थानमें सुवरण स्थापित किया करते हैं। ऐसी जनश्रुति है, कि कुशस्तम्बमें अग्निमें होम करे; वहांपर स्थित सुवर्णमें तथा वल्मीक, वपा, बकरेके दहिने कान, शकट, भूमि, तीर्थके जल और ब्राह्मणके हाथमें होम करनेसे भगवान् हुताशन प्रसन्न होते हैं। हमने सुना है, कि समस्त देववृन्द अग्निनिष्ठ हैं। ब्रह्मासे अग्निदेव प्रकट हुए और अग्निसे सुवर्ण उत्पन्न हुआ है; ऐसा सुना गया है, कि जो धर्म्मदर्शी मनुष्य सुवर्ण दान करते हैं, वे समस्त देवता प्रदान करते हैं। हे भार्गव! वे परम गति पानेवाले मनुष्य तमरहित लोकोंमें जाकर कौरवराज्यमें अभिषिक्त होते हैं। सूर्य्य उदय होनेके समय जो लोग विधिपूर्व्वक मन्त्र पढ़के सोना दान करते हैं, उनके दुःस्वप्न नष्ट हुआ करते हैं। जो लोग भोरके समय सुवरण दान करते हैं, उनके सब पाप नष्ट होते हैं, मध्यान्ह कालमें सुवरण दान करनेसे दाताके अनागत पाप नष्ट हुआ करते हैं। जो लोग यतव्रती होकर सायं सन्ध्याके समय सुवरण प्रदान करते हैं, उन्हें ब्रह्मा, वायु, अग्नि और चन्द्रमाके सदृश लोक प्राप्त होते हैं और इन्द्र लोकोंमें शुभ प्रतिष्ठा मिलती है, इस लोकमें यश पाके पापरहित होकर प्रमुदित होते हैं। अनन्तर वे परलोकमें सदा अप्रतिम, अनावृत्त गतिसे युक्त और कामचारी होते हैं, उनका यश कभी क्षीण नहीं होता, वरन सर्व्वत्र महत् यश व्याप्त होता है। अक्षय सुवरण दान करनेसे मनुष्य पुष्कल लोकोंको पाता है। जो लोग सूर्य्य उदय होनेके समय अग्नि जलाके व्रतके उद्देश्यसे सुवरण दान करते हैं, उन्हें समस्त काम्य भोग प्राप्त होता है। ऐसा प्राचीन लोग कहा करते हैं, कि सूर्य्योदयके समय सुवरणदान पूर्ण गुणयुक्त, ज्ञानप्रवर्त्तक और दानरोचक होनेसे सुखावह है। हे पापरहित भृगुनन्दन! यह मैंने तुमसे सुवरण और कार्त्तिकेयकी उत्पत्तिका विषय कहा है, इसलिये इसे मालूम करो। हे भृगुकुल धुरन्धर! उस समय कार्त्तिकेय बहुतसा समय बीतनेके अनन्तर बर्द्धित होके इन्द्रादि देवताओंके सेनापति पदपर अभिषिक्त हुए। अभिषिक्त होके इन्द्रकी आज्ञासे सब लोकोंकी रक्षाके लिये तारक नाम दैत्य तथा दूसरे बहुतेरे असुरोंको मारा। हे विभु! सुवरण दानके जो सब फल हैं, सब

मैंने तुमसे कहा। हे दाताबर! इसलिये तुम ब्राह्मणोंको सुवर्ण दान करो।

भीष्म बोले, प्रतापवान् जामदग्न्य रामने वशिष्ठका ऐसा वचन सुनके ब्राह्मणोंका सुवर्ण दान किया, और उस ही कारणसे पापरहित हुए। हे महाराज युधिष्ठिर! यह मैंने सुवर्णदानका फल और सुवर्णकी उत्पत्तिका विषय तुम्हारे समीप वर्णन किया, इसलिये तुम भी ब्राह्मणोंको बहुतसा सोना दान करो। हे महाराज! तुम सुवर्ण दान करनेसे पापरहित होगे।

८५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! आपने विधानके अनुसार सुवर्णदानके गुण और श्रुतिसिद्ध लक्षण तथा सुवर्णकी उत्पत्तिका कारण विस्तार पूर्व्वक वर्णन किया; परन्तु वह तारकासुर किस प्रकारसे मारा गया? मेरे समीप यह विषय वर्णन करिये। हे राजन्! पहिले आपने कहा, कि वह देवताओंसे अवध्य था, तब किस प्रकार उसकी मृत्यु हुई? उसे विस्तारपूर्व्वक कहिये। हे कुरुकुलधुरन्धर! मैं तुम्हारे समीप उस तारकासुरके वधका विषय विस्तारके सहित सुननेकी इच्छा करता हूं, इस विषयमें मुझे बहुत ही कौतूहल हुआ है।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! देवताओं और ऋषियोंके सब कार्य्य विनष्ट होनेसे उन्होंने सन्तानको पालनेके लिये कृत्तिकागणको भेजा। देवताओंके बीच कोई देवी भी अग्निके द्वारा अर्पित गर्भको धारण करनेमें समर्थ नहीं है, कृत्तिकागण ही निज तेजके प्रभावसे उस गर्भको धारण कर सकेंगी, ऐसा विचारके देवताओंने उन्हें अनुमति दी थी। अग्निने उन कृत्तिकागणको अपना परमसुन्दर वीर्य्ययुक्त तेज अर्पण किया, उनके गर्भरूपसे उस वीर्य्यको पोकर छः प्रकारसे गर्भधारण करनेसे अग्निदेव अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। वहीं कृत्तिका जातवेदाके अर्पित गर्भको धारण करने लगीं। हुताशनका समस्त तेज छः कृत्तिकाओंके गर्भमें जानेसे छः स्थानमें स्थित हुआ था। अनन्तर बुद्धिमान महानुभाव कुमारका तेज उनके सब अवयवोंमें व्याप्त हुआ, उन्हें किसी स्थानमें भी सुखप्राप्त न हुआ।

हे पुरुषश्रेष्ठ! अनन्तर प्रसवका समय उपस्थित होनेपर तेजपरितापी कृत्तिकागणने एक ही समयमें गर्भको परित्याग किया, प्रसवके अनन्तर वह षड्धिष्ठान गर्भ एकत्र हो गया। वसुमतीने सुवर्णके समीपसे उस गर्भको ग्रहण किया। दीप्यमान अग्निसे उत्पन्न हुआ वह दिव्यावयव प्रियदर्शन गर्भ दिव्य शरवनमें वर्द्धित होने लगा। कृत्तिकागणने उस सूर्य्यसदृश तेजसे युक्त सन्तानको देखा, देखते ही पुत्रस्नेह और सुहृदताके वशमें होकर उसे स्तनका दूध पिलाके पालने लगीं। वह बालक कृत्तिकाओंके द्वारा प्रतिपालित होनेपर चराचर तीनों लोकोंके बीच कार्त्तिकेय नामसे विख्यात हुआ। गंगाके गर्भसे स्खलित होनेसे स्कन्द और गुहामें वास करनेसे उसका गुह नाम हुआ था। अनन्तर तैंतीस देववृन्द, दिगीश्वरके रहित दशों दिशा, रुद्र, धाता, विष्णु, यम, पूषा, अर्य्यमा, भग, अंश, मित्र, साध्यगण, वसुगण, इन्द्र, दोनों अश्विनीकुमार, जल, वायु, आकाश, चन्द्रमा, नक्षत्रगण, सारे ग्रह, सूर्य्य और मूर्त्तिमान ऋक्, यजुः, साम प्रभृति वेदोंने उस अद्भुत अनलात्मक कुमारको देखनेके निमित्त आगमन किया। ऋषि लोग उस षडानन बारह नेत्रवाले द्विजप्रिय कुमारकी स्तुति करने लगे और गन्धर्व्वोंने गीत गाना आरम्भ किया। पीनस्कन्ध, बारह भुजा, दिव्य और सूर्य्यसदृश तेजस्वी शरस्तम्बमें सोये हुए कुमारको देखकर महातेजस्वी ऋषियोंके सहित

देवता लोग परम हर्षित हुए और तारकासुरको मरा समझा। अनन्तर देवताओंने सब ठौरसे कुमारके लिये समस्त प्रियवस्तु ला दिया। जब वह खेलने लगे, तब देवताओंने उन्हें खेलने योग्य अनेक प्रकारके पक्षी दिये और उनके चढ़नेके लिये गरुड़के पुत्र विचित्र वर्णयुक्त मयूरको ला दिया, राक्षसोंने वराह और भैंसे दिये, अरुणने स्वयं उन्हें अग्निसङ्काश कुक्कुट दिया। चन्द्रमाने भेड़ा दिया और सूर्य्यने उन्हें रुचिर प्रभा दी, गौवोंकी माता सुरभिने उन्हें सौ हजार गो दान किया, अग्निने बकरे दिये और इलाने बहुत सुन्दर फूल तथा फल दिया। सुधन्वाने उन्हें शकट तथा अनेक कूबरयुक्त रथ दिया। वरुणने दिव्य सुन्दर वारुण हाथी दिये, देवराजने सिंह, शार्द्दूल, हाथी तथा अनेक भांतिके पक्षी, अनेक प्रकारके घोर श्वापद और विविध छत्र प्रदान किये। राक्षस तथा असुरगण उस कुमारके अनुगत हुए। तारकासुरने उसे बढ़ते हुए देखके अनेक प्रकारके उपायोंसे मारनेकी चेष्टा की, परन्तु उस सर्व्वशक्तिमान् कुमारको मारनेमें समर्थ न हुआ, देवताओंने उन्हें सेनापतिका पद देके पूजा करके तारकासुरके उपद्रवके विषय कहे, देव सेनापति प्रभु कार्त्तिकेयने विशेष रूपसे वर्द्धित होकर तारकासुरको अमोघ शक्तिसे मार डाला। जब कुमारने खेल करते हुए उस असुरको मार दिया, तब इन्द्र फिर देवराज्यपर स्थापित हुए। अनन्तर प्रतापशाली देवसेनापति स्कन्द देवताओंके नियन्ता तथा रक्षक और शङ्करके प्रियकारी होकर सुशोभित हुए। हिरण्यमूर्त्ति भगवान अग्निपुत्र कुमारने इस ही भांति देवसेनापतिका पद पाया था, अग्निके परम तेज तथा कार्त्तिकेयके संग उत्पन्न होनेसे सुवर्ण मंगलकर श्रेष्ठ और अक्षय रत्न है। हे कुरुनन्दन! पहले समयमें वशिष्ट मुनिने रामसे यह कथा कही थी। हे नरनाथ! इसलिये तुम सुवर्ण दानके लिये सदा यत्नवान हुओ। रामने सुवर्ण दान करनेसे पापरहित होके सुरपुरमें मनुष्योंके लिये असुलभ स्थान पाया था।

८६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे धर्म्मात्मन् राजन्! आपने जिस प्रकार चारों वर्णोंके धर्म्म कहे वैसे ही मेरे निकट श्राद्धकी समस्त विधि वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शान्तनुपुत्र भीष्म उस समय युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके श्राद्धकी सब विधि कहने लगे।

भीष्म बोले, हे परन्तप पृथ्वीनाथ! तुम सावधान होके इस धन, यश और पुत्रदायक शुभ पितृयज्ञ श्राद्धकर्म्मकी विधि सुनो। देव, असुर, मनुष्य, गन्धर्व्व, सर्प, राक्षस, पिशाच और किन्नर प्रभृति सबके ही लिये पितृगण सदा पूजनीय हैं। पहले पितरोंकी पूजा करके पीछे सब कोई देवताओंको तृप्त किया करते हैं; इसलिये पुरुषोंको सदा सब प्रकार यत्नपूर्व्वक पितरोंकी पूजा करनी योग्य है। हे महाराज! प्रति महीनेमें पितरोंकी तृप्तिके निमित्त जो श्राद्ध किया जाता है, उसे अन्वाहार्य्य कहते हैं, पितरोंकी तृप्तिके निमित्त श्राद्ध करना योग्य है, यह प्रथम कल्पित अर्थात् सामान्य विधि अमावस्या तिथिमें जिस दिन चन्द्रमा नहीं दीखता उस दिन अपराह्नमें पिण्डदानरूपी पितृयज्ञ करे, इस विशेष विधिके द्वारा बाधित होवे। जिस किसी दिन होसके, श्राद्ध करनेसे ही पितामहगण प्रसन्न होते हैं, इस हेतु तुमसे तिथि और आतिथ्यके गुण दोष तथा समय कहता हूं। हे पापरहित! जिन दिनोंमें श्राद्ध करनेसे जो जो सब फल प्राप्त होते हैं, वह तुम्हारे समीप पूरी रीतिसे कहता हूं सुनो।

प्रतिपदामें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्य निज घरमें सुन्दरी तथा बहुसन्तान उत्पन्न

करनेवाली स्त्री पाता है। द्वितीयामें श्राद्ध करनेसे कन्या जन्मती है। तृतीया तिथिमें पितरोंको पिण्डदान करनेसे मनुष्यको बहुतसे घोड़े मिलते हैं। चतुर्थीमें श्राद्ध करनेसे गृहमें अनेक प्रकारके क्षुद्र पशु होते हैं। हे राजन्! पञ्चमीमें श्राद्ध करनेवालोंके बहुतसे पुत्र जन्मते हैं, षष्ठिमें जो लोग श्राद्ध करते हैं, वे तेजस्वी होते हैं। हे महाराज! सप्तमी तिथिमें श्राद्ध करनेवाले कृषिभागी हुआ करते हैं। अष्टमीमें जो लोग श्राद्ध करते हैं, उन्हें वाणिज्यमें लाभ होता है। नवमीमें श्राद्ध करनेवालोंको कई भांतिके एक खुर पशु प्राप्त होते हैं। दशमीमें श्राद्ध करनेवालेकी गौवें विशेष रूपसे वर्द्धित होती हैं। हे राजन्! एकादशी तिथिमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य धस्तपात्र आदि धनसे युक्त होता और उसके गृहमें ब्रह्मवर्च्चस्वी पुत्र जन्मते हैं। द्वादशीमें श्राद्ध करनेवालोंके घरमें सदा बहुतसा धन रूपा वा मनोहर सुवर्ण दीखता है। जो लोग त्रयोदशी तिथिमें श्राद्ध करते हैं, वे स्वजनोंके बीच श्रेष्ठ हुआ करते हैं। चतुर्द्दशीमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य युद्धभागी होताहै और उसके गृहमें अवशीभूत सब युवा पुरुष पञ्चत्वको प्राप्त होते हैं। अमावस्या तिथिमें पिण्डदान करनेसे मनुष्यके सर्व्वकाम अक्षय प्राप्त होते हैं। कृष्णपक्षकी चतुर्द्दशीको त्यागिके दशमीके पहले जो सब तिथि पड़ती हैं, वेही श्राद्धकर्म्ममें श्रेष्ठ हैं, अन्य तिथि वैसी श्रेष्ठ नहीं हैं। जैसे पहले पक्षसे दूसरा पक्ष श्रेष्ठ है, वैसे ही श्राद्धकर्म्मके विषयमें पूर्व्वाह्नसे अपराह्न विशेषरूपसे श्रेष्ठ है।

८७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पितरोंके उद्देशसे कौन वस्तु दान करनेपर अक्षय होती है? कैसी हवि सदाके लिये तथा अनन्तकी निमित्त कल्पित हुआ करती है?

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! श्राद्धवित पण्डित लोग श्राद्धकल्पमें जिसे हविरूपी जानते हैं, उन काम्यविषयों तथा उनके फल मेरे समीप सुनो। हे राजन्! तिल, व्रीहि, यव, मांस, जल और फलमूलके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरगण एक महीनेतक प्रसन्न हुआ करते हैं। मनुने कहा है, कि वर्द्धमान तिल श्राद्ध अक्षय होता है। समस्त भोजनकी वस्तुओंके बीच तिल सबसे मुख्य कहा गया है। मत्स्यके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरगण दो महीनेतक तृप्त रहते हैं। मेढ़के मांससे श्राद्ध करनेसे तीन महीने और खरहेके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरगण चार महीनेतक प्रसन्न हुआ करते हैं। हे राजन्! बकरेके मांससे श्राद्ध करनेसे पितर लोग पांच महीनेतक प्रसन्न रहते हैं। वराहके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरगण सात महीनेतक तृप्त रहते हैं। चित्रमृगके मांससे श्राद्ध करनेपर आठ महीने और कृष्णसार मृगके मांससे श्राद्ध करे तो पितरगण प्रसन्न होके नव महीनेतक निवास करते हैं, गवय मांससे श्राद्ध करनेपर पितरोंको दश महीनेकी तृप्ति होती है। भैंसेके मांससे श्राद्ध करनेपर पितरोंको ग्यारह महीनेकी तृप्ति हुआ करती है। ऐसा वर्णित है, कि गव्यके द्वारा श्राद्ध करनेसे पितरोंको एक वर्षतक तृप्ति होती है। जैसा गव्य है, घृतके सहित पायस भी वैसा ही उपयोगी है। महोक्ष पक्षिविशेष, वा बकरा विशेषके, मांसके द्वारा पितरोंको बारह वर्षकी तृप्ति होती है। पितृयज्ञमें खड्गि मांस दिये जानेपर आनन्त्यको हेतु हुआ करता है। कालशाक काञ्चन वृक्षके पुष्प आदि और बकरे अनन्त रूपसे वर्णित होते हैं। हे युधिष्ठिर! इस विषयमें जो लोग पितृगीत गाथा गाया करते हैं, पहले समयमें भगवान सनत्कुमारने मेरे समीप समस्त गाथा कही थी। हमारे निज वंशमें जो पुरुष जन्मेंगे, वे त्रयोदशीमें हम लोगोंका श्राद्ध करेंगे

और दक्षिणायनके मघा नक्षत्रमें घृतियुक्त पायस दान करेंगे। मघा नक्षत्रमें व्रतव्रती होकर अन्न आसव कुसुम पुष्प आदिसे हमें तृप्त करेंगे। हस्तिच्छायामें विधिपूर्व्वक पायस आदि प्रदान करेंगे। बहुतसे पुत्रोंके लिये कामना करनी योग्य है, क्योंकि क्या जाने उनमेंसे एक पुत्र भी गयाधाममें जाय, जहांपर अक्षयवट लोकके बीच विख्यात है। पितृयज्ञमें जल, मूल, फल, मांस और अन्न प्रभृति मधुमिश्रित जो कुछ वस्तु दी जाती है, वही अनन्त-फलजनक रूपसे कल्पित हुआ करती है।

८८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, यमने शशबिन्दुसे जो सब श्राद्ध विषय कहा था, उस पृथक् पृथक् नक्षत्रोंमें विहित काम्य श्राद्धका विषय मेरे समीप सुनो। जो मनुष्य कृत्तिका नक्षत्रमें सदा श्राद्ध करता है और अग्नि जलाके यज्ञ किया करता है, वह अपत्योंके सहित शोकरहित होता है। पुत्रकामनावाले मनुष्य रोहिणी नक्षत्रमें और तेजके अभिलाषी मनुष्य मृगशिरा नक्षत्रमें श्राद्ध करें। आर्द्रा नक्षत्रमें श्राद्ध दान करनेसे मनुष्य क्रूरकर्मा होता है। पुनर्व्वसु नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य कृषिभागी हुआ करता है। पुष्टिकी इच्छावाले मनुष्य पुष्य नक्षत्रमें श्राद्ध करें, जो मनुष्य अश्लेषा नक्षत्रमें श्राद्ध करते हैं, उनके वीर पुत्र उत्पन्न होते हैं। मघा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवालोंको स्वजनोंके बीच श्रेष्ठता प्राप्त होती है। पूर्व्वफाल्गुनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे श्राद्धकर्त्ता सौभाग्यशाली होता है। उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवाले पुत्रवान् हुआ करते हैं। हस्त नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य फलभागी होता है। चित्रा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवाले रूपवान् पुत्र पाते हैं। स्वाती नक्षत्रमें पितरोंकी अर्चना करनेसे पुरुष वाणिज्य उपजीवी होता है। पुत्रकामनावाले मनुष्य विशाखा नक्षत्रमें पितृयज्ञ करनेसे बहुतसे पुत्र पाते हैं। अनुराधा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य राजचक्रका प्रवर्त्तक होता है। ज्येष्ठा नक्षत्रमें पितृतर्पण करनेसे मनुष्यको आधिपत्य प्राप्त होता है। मूल नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे आरोग्यता प्राप्त होती है। हे कुरुकुल श्रेष्ठ। श्रद्धा--दमसे युक्त पूर्व्वाषाढा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्यको उत्तम यश मिलता है। उत्तराषाढा नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेवाले मनुष्य शोकरहित होके पृथ्वीमण्डलपर विचरते हैं। उत्तराषाढाके शेषपाद और श्रवणाके प्रथम चारों दण्ड, अभिजित नक्षत्रमें श्राद्ध करनेवालोंको श्रेष्ठ विद्या प्राप्त होती है। श्रवणा नक्षत्रमें श्राद्ध दान करनेवालोंको परलोकमें सद्गति मिलती है। धनिष्ठा नक्षत्रमें पितृयज्ञ करनेवाले मनुष्य सदा राज्यभागी होते हैं। शतभिषा नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे भिषक् सिद्धि प्राप्त होती है। पूर्व्वभाद्रपद नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्य बहुतसे बकरे और मेष आदि धन पाता है। उत्तरभाद्रपदमें श्राद्ध करनेसे मनुष्यको बहुतसी गऊ मिलती हैं, रेवती नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे मनुष्य सोना रूपाके अतिरिक्त बहुत सा धन पाता है। अश्विनी नक्षत्रमें श्राद्ध करनेसे उत्तम घोड़े और भरणी नक्षत्रमें पितरोंकी पूजा करनेसे मनुष्यको उत्तम आयु प्राप्त होती है। शशबिन्दुने इस श्राद्धविधिको सुनके वैसा ही अनुष्ठान किया और उन्होंने बिना क्लेशके ही पृथ्वीमण्डलको जीतके उसे शासन किया था।

८९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे कुरुकुलश्रेष्ठ पितामह! कैसे द्विजोंको दान करनेसे श्राद्ध सिद्ध होता है, कहिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! दान धर्मके जाननेवाले क्षत्रियोंको देवकार्य्यमें ब्राह्मणोंकी परीक्षा करनी योग्य नहीं है, किन्तु ऋषियोंने ऐसा कहा है, कि पितृकार्य्यमें न्यायपूर्व्वक ब्राह्मणोंकी परीक्षा करनी योग्य है। मनुष्य देवकार्य्यमें केवल देवताओंकी पूजा किया करते हैं, इसलिये उसमें देवताओंके उद्देश्यसे ब्राह्मण मात्रको ही दान देना उचित है, परन्तु विद्वान् मनुष्य श्राद्धके समय कुल, शील, अवस्था, रूप और मर्य्यादाके सहारे ब्राह्मणोंकी परीक्षा करे। हे महाराज! ब्राह्मणोंके बीच कोई कोई पङ्क्तिदूषण और कोई पङ्क्ति पावन हैं, उनमेंसे दुष्कर्मी आदिसे जो लोग पांति बाहर हैं, उनका विषय कहता हूं, सुनो। धूर्त्त, भ्रूण-हत्यारे यक्ष्मा रोगग्रस्त, पशुपालक, अध्ययनादि वर्जित, ग्रामप्रेष्य, वार्द्धुषिक अर्थात् वृद्धिके निमित्त धन प्रयोग करनेवाले, गायक, सर्व्व-विक्रयी, स्थान जलानेवाले, गरद, कुण्डाशी, सोमविक्रयी, सामुद्रिक, राजसेवक, तेलीका कर्म्म करनेवाले, कूटकारक, पिताके संग विवाद करनेवाले, जिनके गृहमें उपपति है वैसे पुरुष अभिशस्त, चोर, जो पुरुष शिल्पकार्य्यके सहारे जीवन धारण करते हैं, पर्व्वकार अर्थात् वेशा-न्तरधारी, चुगल, मित्रद्रोही, पारदारिक, शूद्रोंके उपाध्याय, शस्त्रजीवी जो पुरुष कुत्तेके सहारे मृगया करता है, जिसे कुत्तेने काटा हो, जेठे भाईके क्वांरे रहते यदि छोटा ब्याह करे तो वह परिवेत्ता हुआ करता है। दुश्चर्म्मा, गुरुपत्नीगामी कुशीलव, कुशीलव, देवल और जो पुरुष नक्षत्र निरूपण करके जीविका निर्व्वाह करते हैं, ये ही पांतिसे बाहर हैं। हे युधिष्ठिर! ब्रह्मवादी लोग कहते हैं, कि ऐसे अपाङ्क्तेय ब्राह्मण लोग जिस जिस श्राद्धमें भोजन करते हैं, उस श्राद्धके हविको राक्षस लोग भक्षण किया करते हैं। जो शूद्रास्त्रीगामी ब्राह्मण श्राद्धमें भोजन करके अध्ययन करता है, श्राद्ध करनेवालेके पितर उस ब्राह्मणके पुरीषमें एक महीनेतक शयन किया करते हैं। सोमविक्रय-वालेको जो दान किया जाता है, वह विष्ठास-दृश है। भिषक् वृत्तिवाले ब्राह्मणोंको जो दान किया जाता है, वह पीबशोणित समान है। देवलको जो वस्तु दान की जाती है, वह नष्ट हुआ करती है, वार्द्धुषिक ब्राह्मणको दान करनेसे अप्रतिष्ठा होती है। वाणिज्य व्यवसायी ब्राह्मणको जो दान किया जाता है, वह इस लोक और परलोकमें कार्य्यकारी नहीं होता। पौनर्भव ब्राह्मणको दान देना राखमें घृतकी आहुति सदृश हुआ करता है। धर्म्मसे विच-लित और दुश्चरित्र ब्राह्मणको जो लोग हव्य-कव्य प्रदान करते हैं, उनका वह दान परलो-कमें विनष्ट होता है। जो अल्पबुद्धि मनुष्य जानके ऐसे अपाङ्क्तेय ब्राह्मणोंको श्राद्धसमयमें दान करते हैं, उनके पितृगण निश्चय ही पर-लोकमें पुरीष भक्षण करते हैं। जो अल्पबुद्धि-वाले ब्राह्मण शूद्रोंको उपदेश करते हैं, उन्हें और पहले कहे हुए अधम द्विजोंको पांतिबाहर जानो। हे महाराज! यदि कोढ़ पुरुष ब्राह्म-णोंकी पांतिमें बैठे, तो वह साठ ब्राह्मणोंको दूषित करता है; क्लीव पुरुष एक सौ ब्राह्म-णोंको दूषित करता और श्वित्ररोगी जहांतक देखता है, उतनी दूरके ब्राह्मणोंको दूषित किया करता है। जो लोग सिर बांधके खाते, जो दक्षिणास्य होके भोजन करते तथा जो लोग जूता पहरके खाते हैं, उन्हें असुर जानो, जो असूयावशसे दिया जाय और जो श्राद्धविवर्जित रूपसे दान किया जाता है, ब्रह्माने असुरेन्द्र बलिके निमित्त उस समस्त भागकी कल्पना की है। कुत्ते और पांक्ति दूषित ब्राह्मण किसी प्रकार श्राद्धको न देखने पावें इस ही निमित्त आवृत स्थानमें पितरोंके उद्देश्यसे दान करे और तिल छोड़े। जो श्राद्ध बिना तिलके किया जाता है, जो लोग क्रोधके वशमें होकर श्राद्ध

करते हैं, राक्षस और पिशाचगण उस श्राद्धके हविको लुप्त किया करते हैं। अपांक्तेय ब्राह्मण पांतिके बीच जितने भोजन करनेवाले ब्राह्मणोंको देखता है, कर्त्तव्यविमूढ़ दाताका उतने परिमाणसे फल भ्रष्ट किया करता है।

हे भरतश्रेष्ठ! पहिले अपांक्तेय ब्राह्मणोंका विषय कहा है, अब जो लोग पंक्तिपावन हैं, उनका विषय कहता हूं, तुम वैसे ब्राह्मणोंकी परीक्षा करना। विद्यास्नात, व्रतस्नात, वेदस्नात और सदाचारयुक्त सब ब्राह्मणोंको ही सर्व्वपावन जानो। जो लोग पांक्तेय हैं, उनका विषय कहता हूं, तुम उन्हें पंक्तिपावन जानना। जिन्होंने त्रिणाचिकेत मन्त्र पढ़ा है, जिन्होंने गार्हपत्य, दक्षिण, आवहनीय, सत्य और सर्व्वाग्नि, इन पांच प्रकारके अग्निका अनुष्ठान जाना है, जिन्हें त्रिसुपर्ण नाम बह्वृचगणके तीनों मन्त्र विदित हैं, जो लोग शिक्षा, कल्प, प्रभृति वेदके षड़ङ्गवेत्ता हैं, जो वंश परम्परासे वेद पढ़ाया करते हैं, उनके वंशमें जो लोग उत्पन्न हुए हों; जो लोग ज्येष्ठ सामगान करनेमें समर्थ हैं, तथा जो माता पिताके वशीभूत हों, जिनके दश पुरुष श्रोत्रिय हों, जो सदा ऋतुकालमें धर्म्मपत्नी गमन करते हैं और जो लोग वेद विद्या तथा व्रतस्नात हैं, वे ब्राह्मण ही पांतिको पवित्र किया करते हैं। जो लोग अथर्व्ववेदके शिरोभागको पढ़ते हैं, जो ब्रह्मचारी और यतव्रती हैं, जो लोग सत्यवादी, धर्म्मशील और निजकर्म्ममें रत हों; जो लोग पुण्यतीर्थोंमें स्नान करनेके लिये श्रम करते हैं, जिन्होंने यज्ञोंमें अवभृत स्नान किया है, जो लोग क्रोधरहित, चपलताहीन, क्षमाशील, दान्त, जितेन्द्रिय और सब प्राणियोंके हितमें रत हों, उन्हें श्राद्धमें निमन्त्रण करे। इन लोगोंको दान करनेसे अक्षय फल होता है, इन्हें ही पंक्तिपावन जानो। जो लोग मोक्षधर्म्मके जाननेवाले, यति योगचारी और उत्तम रीतिसे व्रत करते हैं, तथा जो लोग सावधान होकर उत्तम द्विजोंके इतिहास सुनाया करते हैं, जो लोग भाष्यवेत्ता और व्याकरण शास्त्रमें रत रहते हैं, जो लोग पुराण शास्त्र अथवा धर्म्मशास्त्र पढ़ा करते हैं और पढ़के विधिपूर्व्वक उसका अनुष्ठान करते हैं, जिन्होंने गुरुकुलमें निवास किया है, जो सत्यवादी तथा सहस्रदाता हैं सब वेदशास्त्रोंमें जो लोग अग्रगण्य हैं, वे पांतिमें जहांतक देखते हैं, उतने परिमाणसे लोगोंको पवित्र किया करते हैं; इसलिये पांतिको पवित्र करनेसे वे लोग पंक्तिपावन नामसे वर्णित हुए हैं। ब्रह्मवित् पुरुष ऐसा कहते हैं, कि जो लोग वंशपरम्परासे वेद पढ़ाते हैं, वैसे वंशमें जो पुरुष उत्पन्न हुए हों, वे अकेले ही कोस आधकोस अथवा तिहाईकाससे पांतिको पवित्र किया करते हैं। ऋत्विक् अथवा उपाध्यायके गुणहीन होनेपर भी यदि कोई उनको अनुमतिके बिना पहिले आसनपर बैठे, तो भी वे पंक्तिके दुष्कृतको हरण किया करते हैं। पातकदोषसे रहित वेद जाननेवाले विप्र यदि पतित न हों, तो वे पंक्तिपावन हैं। इसलिये सब भांतिसे यत्नपूर्व्वक परीक्षा करके निज कर्म्ममें रत, सत्कुलमें उत्पन्न तथा अन्य बहुश्रुत ब्राह्मणोंको आमन्त्रण करें। देव और पितृकार्य्यमें जिसका मित्रभोजन ही मुख्य उद्देश्य है, तथा जो पुरुष पितरों और देवताओंको परितृप्त नहीं करता, वह स्वर्गमें जानेमें समर्थ नहीं होता। जो श्राद्धके निमित्त बन्धुबान्धवोंके सङ्गमें मिलाता है, वह देवयानपथमें गमन नहीं कर सकता, वह श्राद्धमित्र मनुष्य बन्धनसे मुक्त होके स्वर्गलोकसे च्युत होता है। इसलिये श्राद्ध करनेवाला मित्र पुरुषोंका आदर न करे, अन्य समयमें संग्रहके निमित्त मित्रोंको धन देवे। जिसे शत्रु वा मित्र नहीं जाना जाता, हव्यकव्य दानके समय उस मध्यस्थ ब्राह्मणको भोजन करावे। जैसे ऊसरभूमिमें बीज

बोनेसे अङ्कुर नहीं निकलता तथा बोनेवाला जैसे उस बीजका अंश नहीं पासकता, वैसे ही अयोग्य ब्राह्मणको श्राद्धमें भोजन करानेसे इस लोक तथा परलोकमें भी श्राद्धका फल नहीं मिलता। बिन पढ़ा हुआ ब्राह्मण तृणकी अग्निकी भांति शान्त होता है, इसलिये उसे श्राद्धीय दान करे,—क्यों कि भस्ममें कदापि होम नहीं होता। सत्भोजनी अर्थात् परस्पर दीयमान दक्षिणाको पिशाचदक्षिणा कहते हैं; जैसे पिशाचोंको जो पुरुष भोजन कराता है, वे भी उसे ही भोजन कराया करते हैं, यह भी उसीके तुल्य है; इसलिये ऐसे दानका फल पितृलोक अथवा देवलोकमें नहीं मिलता। जैसे नष्टवत्सा गऊ गृहके भीतर भ्रमण करती है, वैसे ही वह पुण्यहीन दक्षिणा इस लोकमें ही घूमा करती है। जैसे अग्नि बुझ जानेपर उसमें घृतकी आहुति देनेसे वह देवलोक अथवा पितृलोकमें नहीं पहुंचती, नाचने गानेवालों तथा मिथ्यावादियोंको जो दान किया जाता है, वह भी वैसा ही है। झूठ बोलनेवालोंको जो दक्षिणा दी जाती है, वह उसी दाताके दोनों कुलोंको नष्ट करती है और उसे पालन नहीं करती; वह अघातिनी निन्दनीय दक्षिणा स्वयं पतित होकर प्रदाताके प्रेतोंको देवयान पथसे च्युत करती है। हे युधिष्ठिर! जो लोग सदा ऋषियोंके नियमाचरण करते हैं, वे निश्चितबुद्धि सब धर्म्मोंके जाननेवाले पुरुषोंको देवता लोग भी ब्राह्मण जानते हैं। हे भारत! स्वाध्याय-निष्ठ, तपोनिष्ठ और कर्म्मनिष्ठ ब्राह्मणोंको ऋषि जानो। हे भारत! ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणोंको कव्य प्रदान करना योग्य है। जो लोग ज्ञाननिष्ठ होते हैं, वे ब्राह्मणोंकी निन्दा नहीं करते। जो जल्पनाके समय ब्राह्मणोंकी निन्दा करते हैं श्राद्धमें उन्हें भोजन न करावे। हे महाराज! ब्राह्मण लोग निन्दित होनेपर तीन पुरुषतक कुलको नष्ट किया करते हैं। हे महाराज! वैखानस ऋषियोंका यह वचन सुना जाता है, कि वेदपारग ब्राह्मणोंकी दूरसे परीक्षा करे; वे प्रिय हों अथवा अप्रिय ही होवें, श्राद्धकालमें उन्हें दान करना योग्य है। हे भारत! जो मनुष्य सहस्रों झूठे ब्राह्मणोंको भोजन कराते हैं, वे केवल मन्त्र जाननेवाले एक ही ब्राह्मणको भोजन कराके प्रसन्न करनेसे उन सबके फलको पाते हैं।

९० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! किन पुरुषोंके द्वारा श्राद्ध सङ्कल्पित हुआ है? किस समय श्राद्ध करना उचित है? श्राद्धका कैसा स्वरूप है? जिस समय भृगु और अंगिराके वंशमें उत्पन्न ऋषियोंके अतिरिक्त और कोई न थे, उस समय किस मुनिके द्वारा श्राद्ध प्रवर्त्तित हुआ? श्राद्धके समय कौन कौनसे कर्म्म वर्ज्जित हैं? कौन कौनसे फलमूल धान्य त्यागने योग्य हैं? आप मेरे समीप इस विषयको वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! जिस प्रकार श्राद्ध प्रवृत्त हुआ है, जिस समय श्राद्ध करना होता है, श्राद्धका जैसा रूप है, जिसके द्वारा सङ्कल्पित हुआ है, वह वृत्तान्त मेरे समीप सुनो। हे कुरुवंशधुरन्धर महाराज! स्वयम्भूके पुत्र अत्रि नामसे एक प्रतापवान् परमर्षि विख्यात हैं, उनके वंशमें दत्तात्रेय उत्पन्न हुए। दत्तात्रेयके निमि नाम एक तपस्वी पुत्र हुआ था। निमिके श्रीयुक्त श्रीमान् नाम पुत्र था, वह दुष्कर तपस्या करके सहस्र वर्ष पूरा होने-पर कालधर्म्मसे आक्रान्त होकर मृत्युको प्राप्त हुआ। पुत्रशोकसे युक्त निमि विधिपूर्व्वक शौचकार्य्य करके बहुत ही सन्तापित हुए। अनन्तर महाबुद्धिमान् निमि चतुर्दशी तिथिमें भोरके समय मिष्टान्न और वस्त्र आदि सामग्री लाके शोक चिन्ता करते करते सावधान हुए।

उन्होंने शोकसे व्यथित हृदय होकर अत्यन्त कष्टकरके शोकविषयसे मनको हटाया अर्थात् शोकको परित्याग करके सावधान होनेपर उनकी बुद्धि विस्तारगामिनी हुई। शेषमें वह समाहित होकर श्राद्धकल्पका विचार करने लगे। उनके पास जो सब फल मूल भोज्य थे और दूसरी जो कुछ वस्तु उनकी कही हुई तथा इष्ट थी, महाप्राज्ञ तपोधन निमिने मनही मन सबका निश्चय करके अमावस्या तिथिमें पूजित ब्राह्मणोंको लाके स्वयं प्रदक्षिणावर्त्तित आसनोंको स्थापित किया। अनन्तर उन्होंने सात ब्राह्मणोंको एकबारही भोजन करनेके लिये बैठाया और बिना लवणके सांवां अन्न खानेको दिया। शेषमें जो सब ब्राह्मण अन्न भोजन कर रहे थे, उनके दोनों चरणोंके समीप आसनके बीच अग्रभागमें दक्षिणी ओर दाभ रक्खी गई। उन्होंने सावधान और पवित्र होकर दाभोंको अग्रभागमें दक्षिणी ओर करके नाम तथा गोत्र उच्चारण करके श्रीमान्के उद्देश्यसे पिण्ड प्रदान किया। मुनिश्रेष्ठ निमिने धर्म्मसङ्कर करके अर्थात् वेदमें पितरोंके उद्देश्यसे पिण्डदान धर्म्म दीख पड़ता है, इसलोकमें पुत्रके निमित्त पिण्डदान स्वेच्छानुसार कल्पित हुआ है, ऐसा समझके अत्यन्त पश्चात्तापसे परितापित होके चिन्ता करने लगे। उन्होंने सोचा, कि पहिले मुनियोंने जिसे नहीं किया, मैंने किस निमित्त उसका अनुष्ठान किया, ब्राह्मण लोग शापके द्वारा मुझे क्यों नहीं जलाते हैं? अनन्तर वह अपने वंशकर्त्ताका ध्यान करने लगे; ध्यान करते ही तपोधन अत्रि निमिको इस प्रकार पुत्रशोकसे दुःखित देखके अभिलषित वचनके सहारे अत्यन्त ही धीरज देने लगे। उन्होंने कहा, हे तपोधन निमि! तुम मत डरो, तुम्हारा सङ्कल्पित यह पितृयज्ञ पहिले स्वयं ब्रह्माके द्वारा धर्म्मरूपसे देखा गया है, तुम्हारा यह सङ्कल्पित धर्म्म स्वयं उत्तम रीतिसे विहित हुआ है, ब्रह्माके अतिरिक्त और कौन पुरुष श्राद्धसम्बन्धीय विधि बना सकता है। हे पुत्र! मैं तुम्हारी इस उत्तम श्राद्धसम्बन्धीय विधिकी व्याख्या करूंगा। हे पुत्र! यह ब्रह्माके द्वारा विहित है, इसलिये इसका अनुष्ठान करो और इसका विवरण मेरे समीप सुनो। हे तपोधन! पहिले मन्त्र पढ़के अग्निमें करणहोम करके फिर चन्द्रमा वरुण और विश्वदेव, जो कि पितरोंके सङ्ग सदा विचरते हैं, स्वयम्भूने उनके निमित्त स्वयं सब भाग कल्पित किये हैं। निरपधारिणी पृथ्वीकी इस ही समय वैष्णवी, काश्यपी और अक्षया कहके स्तुति करनी होगी। जल लानेके विषयमें प्रभु वरुणकी स्तुति करे। हे पापरहित! अग्नि और चन्द्रमाको तुष्ट करना होगा पितृ नामक जो देवगण स्वयम्भूके द्वारा निर्म्मित हुए हैं और जो सब महाभाग उष्णपगण हैं, उनका भी हिस्सा कल्पित है। वे सब श्राद्धके द्वारा पूजित होनेपर नरकादि रूप क्लेशसे छूटते हैं। सप्त पितृवंश पहिले ब्रह्माके द्वारा जाना गया है और अग्नि आदि विश्वदेवगण पहिले ही गिने गये हैं। इस समय उन हिस्सा लेनेवाले महानुभावोंका नाम कहता हूं। बल, धृति, विपाप्मा, पुण्यकृत, पावन पाष्णिक्षेमा समूह, दिव्यसानु, विवस्वान, वीर्य्यवान्, ह्रीमान्, कीर्त्तिमान, कृत, जितात्मा, मुनिवीर्य्य, दीप्तरोमा, भयङ्कर, अनुकर्म्मा, प्रतीत, प्रदाता, अंशुमान, शैलाभ, परम क्रोधी, धीरोष्णी, भूपति, स्रज, वज्री, वरी, सनातन विश्वदेवगण, विद्युद्वर्चा, सोमवर्चा, सूर्य्यश्री, सोमप, सूर्य्यसावित्र, दत्तात्मा, पुण्डरीयक, उष्णीनाभ, नभोद, विश्वायु दीप्ति, चमूहर, सुरेश, व्योमारि, शङ्कर, भव, ईश, कर्त्ता, कृति, दक्ष, भुवन, दिव्य, कर्म्मकृत, गणित, पञ्चवीर्य्य, आदित्य, रश्मिवान, सप्तकृत, सोमवर्चा, विश्वकृत, कवि, अनुगोप्ता, सुगोप्ता, नप्ता और ईश्वर, इस कालकी गतिके अनुसार

जिन्हें खाना जा सकता है, वेही सब अन्नभाग श्राद्धमें वर्णित हुए। इसके अनन्तर जो वस्तु श्राद्धमें अदेय है, उन्हें कहता हूं। कोदों धान्य और पुलाक अर्थात् टूटे हुए चावल, तुच्छ धान्य, हींगसे बनी वस्तु, सब भांतिके शाक, प्याज, लहसुन, सोभाञ्जन, कोविदार अर्थात् लाल पीले रङ्गके फूल, गृञ्जन प्रभृति, कुम्हड़ा जातीय सब वस्तु, अलाबू, काला नमक पाले हुए सूअरका मांस और कुछ बेजानी वस्तु हों, कालाजीरा, बोटलवन, जो सब अन्न शरद्-ऋतुमें पकते हैं, सिंघाड़ा और बधकरीर प्रभृति अङ्कुर श्राद्धमें वर्ज्जित हैं; सब प्रकारके नमक और जामुनका फल श्राद्धमें त्यागना चाहिये, श्राद्धके समय अवक्षुत और रोदन वर्ज्जित है, पितरोंके उद्देश्यसे दान कार्य्य और हव्यकव्यमें सुदर्शन शाक अत्यन्त निन्दनीय है। श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर चाण्डाल और स्वपच जातिवाले पुरुषोंको बहुत दूरमें स्थित करे। यदि वे लोग हविको देख लेवें, तो उसे पितर और देवगण ग्रहण नहीं करते। श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर गेरुआ वस्त्रवाले, कुष्टरोगी, पतित, ब्रह्महत्यारे, नीचयोनिमें जन्मे हुए ब्राह्मण और पतित पुरुषसे संसर्ग रखनेवाले पुरुष, इन सबको पण्डित लोग उस समय वहां पर न आने देवें। पहले समयमें तपोधन अत्रि भगवान् निजवंशमें उत्पन्न हुए निमिऋषिसे ऐसी कथा कहके ब्रह्माकी दिव्य सभामें चले गये।

९१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भारत! निमिके इस प्रकार श्राद्ध करनेमें प्रवृत्त होनेपर सब महर्षिवृन्द विधि दृष्ट कर्म्मके सहारे पितृयज्ञ करने लगे। धर्म्मनिष्ठ यतव्रती ऋषि लोग श्राद्ध करके लोगोंके जलसे तर्पण करने लगे। ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंके द्वारा निवाप पाके पितर और देवगण तृप्त होके उस समय अन्नजीर्ण करने लगे। पितरोंके सहित देववृन्द प्रतिदिन प्राप्त हुए अन्नके पचानेमें असमर्थ होके अजीर्ण रोगसे ग्रस्त हुए। उस समय वे लोग अन्नसे पीड़ित होकर चन्द्रमाके समीप गये। वे अजीर्णसे पीड़ित पितृगण चन्द्रमाके निकट आके बोले, हम अन्नसे पीड़ित होरहे हैं, इसलिये जिस प्रकार इस विषयमें हमारा कल्याण हो, आप वैसा ही उपाय करिये। अनन्तर चन्द्रमाने उन लोगोंको उत्तर दिया कि, हे सुरगण! यदि तुम लोगोंको कल्याणकी इच्छा हुई हो, तो ब्रह्माके स्थानपर जाओ, वह तुम्हारे कल्याणको उपाय करेंगे। हे भारत! पितरोंके सहित वे सब देवगण चन्द्रमाका वचन सुनके सुमेरु पर्व्वतके शिखरपर सुखसे बैठे हुए ब्रह्माके निकट गये।

पितरवृन्द बोले, हे भगवन्! हम लोग निवाप अन्नसे अत्यन्त पीड़ित होरहे हैं। हे देव! इसलिये आप प्रसन्न होके हमारे कल्याणका विधान करिये। ब्रह्मा उन लोगोंका ऐसा वचन सुनके बोले, मेरे निकटमें स्थित यह अग्निदेव तुम्हारे कल्याणका विधान करेंगे।

अग्निदेव बोले, पितरोंके उद्देश्यसे दान उपस्थित होनेपर हम सब कोई मिलके उसे भक्षण करेंगे, हमारे सङ्ग खानेसे तुम लोग अन्नको निःसन्देह पचा सकोगे। पितर लोग अग्निका ऐसा वचन सुनके उस समय शोकरहित हुए। हे महाराज! इस ही निमित्त पहले अग्निके निमित्त अन्न दिया जाता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! पहले अग्निको निवाप देनेसे ब्रह्मराक्षसगण उसे नष्ट करनेमें समर्थ नहीं होते और अग्निदेवके उपस्थित रहनेपर राक्षसवृन्द दूर भागते हैं।

पहले पिताको पिण्ड देवे, फिर पितामहको पिण्ड देना योग्य है, अनन्तर प्रपितामहको पिण्ड प्रदान करे, इस ही प्रकार श्राद्धकी विधि वर्णित हुई है। श्राद्धकालमें समाहित

लोके प्रत्येक पिण्ड देनेके समय गायत्री अपि और "सोमाय पितृमते" इत्यादि वचन कहना योग्य है। श्राद्धके समयमें रजस्वला, वधिरी, तथा अंगहीन स्त्रीको वहांपर न आने दे अर्थात् वे लोग निवापको न देखने पावें और दूसरे वंशकी स्त्रियोंको पाकके निमित्त संग्रह न करे। जलमें उतरके पितामह आदिका नाम उच्चारण करे और नदीमें स्नान करके पितरोंको पिण्ड दे तथा तर्पण करे। पहले अपने वंशवालोंको जलसे तर्पण करके फिर सुहृद और सम्बन्धियोंको अञ्जली भरके जल देवे। विचित्र उपवाले दो गौवोंसे युक्त गाड़ी तथा नौकाके ऊपर चढ़कर जो लोग अपार जलसे पार होते हैं, उनके पितर उनके समीप गजके पूंछके सहित तर्पणकी अभिलाष किया करते हैं। इसलिये जो लोग इसे जानते हैं, वे सावधान होकर शकट अथवा नौकाके सहारे नदी उतरनेके समय पितरोंका तर्पण करते हैं। अर्द्धमासके कृष्णपक्षकी अमावस्या तिथिमें पितरोंका श्राद्ध करना योग्य है, पितृभक्ति रहनेपर पुष्टि, आयु, बल और श्री हुआ करती है। हे कुरुकुलश्रेष्ठ! पितामह, पुलस्त्य, वशिष्ठ, पुलह, अंगिरा, क्रतु और कश्यप, ये महायोगीश्वर नामसे वर्णित हुए हैं, ये भी पितर हैं। हे महाराज! यही श्रेष्ठ श्राद्धकी विधि है, इस श्राद्धकर्मके सहारे परलोकमें गये हुए पितरोंका प्रेतत्व छूट जाता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! यह निर्दिष्ट श्राद्धकी उत्पत्तिका विषय शास्त्रके अनुसार कहा गया; इसके अनन्तर दानका विषय कहता हूं।

९२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! जो व्रतयुक्त ब्राह्मण लोग दशाह आदिमें यजमानकी इच्छासे हवनीय वस्तु अथवा अन्न भोजन करते हैं, वो कैसा है? अर्थात् इसमें व्रत करनेवाले ब्राह्मणोंका व्रतलोप होता है अथवा ब्राह्मणकी कामनाभंग गुरुतर है?

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर! अवेदोक्त व्रतधारी ब्राह्मण लोग ब्राह्मणोंकी इच्छासे भोजन करके पर व्रतहीन नहीं होते और जो लोग वेदविहित यज्ञांगभूत व्रताचरण करते हैं, वे ब्राह्मणकी कामनानुसार श्राद्धमें भोजन करनेसे लुप्तव्रत हुआ करते हैं, इसलिये उन्हें व्रतलोपके हेतु प्रायश्चित्त करना योग्य है, साधारण ब्राह्मण न मिलनेपर व्रती ब्राह्मण श्राद्धमें भोजन करके प्रायश्चित्त करें, परन्तु श्राद्धलोप न करें।

युधिष्ठिर बोले, साधारण लोग जो उपवासको तपस्या कहते हैं, उस उपवासको ही इस स्थलमें तपस्या कहा है अथवा अन्य भांतिके किसी नियमसे तपस्या होती है?

भीष्म बोले, साधारण लोग जो एक महीना अथवा अर्द्धमासके उपवासको तपस्या कहते हैं, वह तपस्या नहीं होसकती, क्यों कि जो पुरुष अपने शरीर और कुटुम्बको कष्ट देकर उपवास करता है, वह तपस्वी वा धर्मज्ञ नहीं है, धन दानका भी श्रेष्ठ तपस्या कहा जाता है। व्रतधारी मनुष्य सदोपवासी होते हैं, जो ब्राह्मण सदा वेदमन्त्र जपता है, वह मुनि हुआ करता है। धर्मकी इच्छा करनेवाला मनुष्य कुटुम्बिक और सदा अस्वप्न होवे सर्व्वदा अमांसाशी हुआ करे और सदा पवित्र जप करे, सदा सत्य बोले और निरन्तर स्थिर होके निवास करे; सदा विघसाशी और अतिथिप्रिय होवे; सर्व्वदा अमृताशी और पवित्र रहे।

युधिष्ठिर बोले, हे राजन्! किस प्रकार लोग सदा उपवासी होते हैं? किस भांति ब्रह्मचारी हुआ करते हैं? किस प्रकार विघसाशी होते और किस प्रकार अतिथिप्रिय हुआ करते हैं?

भीष्म बोले, जो मनुष्य प्रातर्भोजन और सन्ध्याकालके भोजनके अतिरिक्त फिर भोजन

नहीं करते, वेही ब्रह्मचारी होते हैं। जो लोग ऋतुकालमें भार्य्या गमन करते हैं और जो मनुष्य सत्यवादी तथा दानशील हैं, उन्हें ब्रह्मचारी कहा जाता है। यज्ञ आदिके अतिरिक्त जो लोग वृथा मांस भक्षण नहीं करते वे अमांसाशी होते हैं जो लोग दान करते हैं, वे पवित्र होते हैं। जो लोग दिनको नहीं सोते, उन्हें अस्वप्न कहा जाता है। हे युधिष्ठिर। जो मनुष्य सबके तथा अतिथियोंके भोजन करनेके अनन्तर भोजन करता है, जान रखो, कि वही अमृत भोजन किया करता है। जो मनुष्य ब्राह्मणके भूखा रहनेपर भोजन नहीं करता, उस अभोजन निबन्धनसे वह स्वर्गको जीतता है। देवताओं पितरों और आश्रितोंको अन्न देकर जो लोग शेषमें बचा हुआ अन्न खाते हैं, और लोग उन्हें ही विघसाशी कहते हैं। हे प्रजानाथ! ब्रह्माके स्थानमें उन विघसाशी पुरुषोंके लोकोंकी सीमा नहीं है, उनके निकट गन्धर्व्वोंके सहित अप्सरावृन्द उपस्थित होती हैं। जो लोग देवता, अतिथि और पितरोंके सहित भोजन करते हैं, वे पुत्र-पौत्रोंके सहित सुख भोग किया करते हैं और उन्हें श्रेष्ठ गति प्राप्त होती है।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! जो लोग ब्राह्मणोंको विविध वस्तु दान करते हैं, उन देनेवाले और लेनेवालोंमें क्या विशेषता है?

भीष्म बोले, जो ब्राह्मण साधु वा असाधु पुरुषोंसे प्रतिग्रह लेता है, वह गुणवान पुरुषोंके निकट ग्रहण करनेके हेतु थोड़ा दोषी होता है और निर्गुण पुरुषके समीप ग्रहण करनेसे पापमें डूबता है। हे भारत! प्राचीन लोग इस विषयमें वृषादर्भि और सप्तर्षियोंके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि, ये सप्तऋषि हैं और पतिव्रता अरुन्धती इन लोगोंकी सखी गण्डा नामक एक पूरी थी, पशुसखनाम शूद्र उसका पति हुआ था, वे सब कोई समाधिके द्वारा सनातन ब्रह्मलोक पानेके निमित्त इस पृथ्वीमण्डलपर विचरते थे। हे कुरुनन्दन! अनन्तर अनावृष्टि होनेपर उस समय सब कोई क्षुधातुर होके कृच्छ्रप्राण हुए थे। पहिले समय किसी यज्ञमें शिविराजके पुत्र शैव्यने ऋत्विकोंको दक्षिणा देनेके लिये अपना पुत्र प्रदान किया था। इस ही समयमें वह अल्पायु नष्ट होनेसे मर गया, क्षुधासे परिपीड़ित ऋषियोंने उस मृतराजपुत्रको घेर लिया। हे भारत! क्षुधासे आर्त्त ऋषियोंने उस राजपुत्रको मरा हुआ देखके उसे स्थालीमें पकाया। यह मर्त्यलोक अन्नसे रहित होनेपर तपस्वियोंने शरीररक्षाकी इच्छा करके कृच्छ्रवृत्ति अवलम्बन की थी। अनन्तर पृथ्वीनाथ शैव्य वृषादर्भिने मार्गमें विचरते हुए उन क्लेशित ऋषियोंको पाक करते देखा।

वृषादर्भि बोले, दान लेनेसे पुरुष क्लेशसे छूट जाता है। हे तपस्विगण! इसलिये आप लोग पुष्टिके लिये प्रतिग्रह ग्रहण करिये। मेरे समीप जो वस्तु हो, उसे आप लोग मांगिये। मांगनेवाले ब्राह्मण ही मुझे अत्यन्त प्रिय हैं, इसलिये मैं आप लोगोंको सहस्र अश्वतरी देता हूं, मैं आप लोगोंको एक एक वृषभके सहित शीघ्रगामी सफेद रोमवाली सद्यप्रसूत गऊ दान करता हूं और बंधको पालनेमें समर्थ बोझा ढोनेवाले एक एक सौ सफेद बैल सबको देता हूं, पहिले ही गाभिन हुई काल शरीरवाली श्रेष्ठ उत्तम सद्यप्रसूता गऊ देता हूं, श्रेष्ठ ग्राम, व्रीहि, रस, यव और इसके अतिरिक्त जो सब दुर्लभ रत्न हैं, कहिये उनके बीच से क्या दूं? आप लोग इस अभक्ष्य वस्तुमें ऐसा अभिप्राय न करिये। आपलोगोंकी पुष्टिके निमित्त कौनसी वस्तु दूं?

ऋषिगण बोले, हे महाराज! राजाओंका प्रतिग्रह मधुकी भांति स्वादयुक्त होता है,

किन्तु विषके समान है, तुम उसे जानके भी किस निमित्त हमें लोभ दिखा रहे हो? देवताओंको ब्राह्मण शरीरका सहारा है, वे देवतास्वरूप ब्राह्मण तपस्याके द्वारा प्रसन्न होनेसे सबको प्रीतिका विधान करते हैं, ब्राह्मणकी एक दिनमें भी जो तपस्या उपार्ज्जित होती है, कदाचित प्राप्तहुआ राजप्रतिग्रह दावानलकी भांति उसे जलाया करता है, हे महाराज! दानके सहित सदा तुम्हारा कुशल होवे इसलिये तुम याचकोंको सब वस्तु दान करो, ऐसा कहके ऋषियोंने दूसरे मार्गसे गमन किया। वे महानुभावगण जो मांस पकाते थे, वह अपक्क ही रहा। अनन्तर वे सब कोई उसे छोड़के आहारकी इच्छासे बनमें चले गये। अनन्तर राजाके भेजनेपर उनके मन्त्रियोंने बनमें जाके उदुम्बरका फल तोड़के उन्हें देना आरम्भ किया और हेमगर्भ अन्य उदुम्बर देने लगे। तब उनके सेवक उन स्वर्णपूरित उदुम्बरोंको ग्रहण करनेके लिये दौड़े। अत्रिने उसे गुरुतर जानके अग्राह्य समझकर यह वचन कहा, 'हम मन्दविज्ञानी तथा मन्दबुद्धि नहीं हैं, जानता हूं, कि ये सब सुवर्णमय हैं, इसलिये सावधान होकर जागता हूं। इस लोकमें इसे ग्रहण करनेसे परलोकमें बहुत कष्ट होता है, इस लोक तथा परलोकमें जो लोग सुखकी अभिलाष करें उनकेलिये यह अप्रतिग्राह्य है।'

वशिष्ठ बोले, एकसौ उदुम्बरसे निष्क और सहस्र उदुम्बरसे संमित गिना जाता है, इस प्रकार बहुतसा सुवर्ण प्रतिग्रह करनेसे मनुष्यको पापियोंकी गति प्राप्त होती है।

काश्यप बोले, पृथ्वीमें जो सब ब्रीहि यव, हिरण्य, पशुवृन्द और स्त्रियां हैं, वे एककी ही पर्य्याप्त नहीं हैं, इसलिये विद्वान् ब्राह्मण शान्ति अवलम्बन करे। भरद्वाज बोले, उत्पन्न होके बढ़नेवाले रुरु मृगके सींग क्रमसे बढ़ते हैं, इसलिये पुरुषकी प्रार्थनाके सदृश कोई पात्र नहीं है।

गोतम बोले, लोकमें ऐसी वस्तु नहीं है, जो लोगोंको परिपूर्ण करे, पुरुष समुद्रसदृश है, इसलिये वह कभी पूर्ण नहीं होता।

विश्वामित्र बोले, काम्यविषयकी इच्छा करनेवाले मनुष्यकी तृष्णा जब पूरी रीतिसे बढ़ती है तब तृष्णारूपी दूसरा काम बाणकी भांति इस पुरुषको विद्ध करता है।

जमदग्नि बोले, निश्चय है, कि प्रतिग्रह विषयमें संयम ही तपस्याको धारण करता है, लोभ करनेसे ब्राह्मणका वह तपस्यारूपी धन नष्ट होता है।

अरुन्धती बोली, इस लोकमें धर्मार्थकेलिये द्रव्य सञ्चय करना पाण्डित्य सम्मत है, इसलिये इस लोकमें द्रव्य सञ्चयसे तपस्यासञ्चय करना ही श्रेष्ठ है।

गण्डाने कहा, मेरे प्रभु बलवान होके भी जब इस प्रचण्ड भयसे डर रहे हैं, तब मुझे निर्बलकी भांति इनसे भी अधिक भय है।

पशुसख बोला, लोभ आदि दोषोंसे धर्म्म भ्रष्ट होनेपर श्रेष्ठपद नहीं मिलता, ब्राह्मण लोग उस श्रेष्ठ पदको ही धन जानते हैं, इसलिये मैं उत्तम शिक्षाके लिये इन विद्वानोंकी उपासना करूं।

ऋषियोंने कहा, जिनकी प्रजा छलयुक्त फल दान नहीं करती, उस दाताके दानमें कुशल होता है,

भीष्म बोले, अनन्तर वे धृतव्रती ऋषि लोग हेमगर्भ फलोंको त्यागके दूसरी ओर चले गये।

मन्त्रिगण बोले, हे महाराज! आपको विदित होवे कि वे लोग छल करके उन फलोंको त्यागके दूसरे मार्गसे जा रहे हैं।

राजा वृषादर्भि मन्त्रियोंका ऐसा वचन सुनके बहुत ही क्रुद्ध हुए और उनके प्रतिकारके निमित्त सब कोई गृहपर गये। तब राजाने आवहनीय अग्निके समीप जाकर तीव्र नियम अवलम्बन करके संस्कृत मन्त्रोंसे

समान एक आकृति हो। उस अग्निसे लोक-भयङ्करी कृत्या निकली; वृषादर्भिने उसका यातुधानी नाम रखा। कालरात्रिकी भांति वह कृत्या हाथ जोड़के वृषादर्भिके निकट उपस्थित होके बोली, मैं क्या करूं?

वृषादर्भि बोले, सप्तर्षियों और अरुन्धतीके निकट जाओ, उनके तथा उनकी दासीगर्भा वा दासीके नामका अर्थ मनहीमन निश्चय करो और इन सबके नामको जानकर सबका ही नाश करो। उनके नष्ट होनेपर जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां जाना। यातुधानी स्वरूपिणी वह कृत्या "ऐसा ही करूंगी" इस प्रकार अङ्गीकार करके जिस वनमें वे महर्षिवृन्द विचरते थे, वहां गई।

भीष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर अत्रि प्रभृति महर्षिगण उस वनमें फलमूल खाते हुए विचरते थे, उस समय उन्होंने लाल हाथ, लाल चरण, लाल मुख और पीतोदरयुक्त एक स्थूल शरीरवाले परिव्राजकको कुत्ते के सहित भ्रमण करते हुए देखा। अरुन्धती उस सर्व्वाङ्गसुन्दर परिव्राजकको देखके ऋषियोंसे बोली, आप लोग ऐसे नहीं हैं।

वशिष्ठ बोले, इस समय हम लोगोंका अग्निहोत्र नहीं होता, सन्ध्या और सबेरे होम करना चाहिये, वह भी नहीं होता, इसलिये नित्यकर्म्मोंके लोप होनेसे हम लोग इस प्रकार कृशित हुए हैं। इनका नित्यकर्म्म लोप नहीं हुआ है, इसी लिये ये कुत्ते के सहित इस प्रकार लक्षित हैं।

अत्रि बोले, क्षुधासे हम लोगोंका बल जिस प्रकार नष्ट होरहा है और अत्यन्त कष्टसे पढ़ी हुई विद्या जिस भांति विनष्ट हुई है, इनकी वैसी नहीं हुई, इसी निमित्त ये इस प्रकार कुत्ते के सहित लक्षित हैं।

विश्वामित्र बोले, हम लोगोंका शास्त्र-प्रतिपादित धर्म्म जिस प्रकार जीर्ण हुआ है, हम जैसे भूखे आलसी और मूर्ख हुए हैं, ये वैसे नहीं हैं, इसीसे कुत्ते के सहित लक्षित हैं।

जमदग्नि बोले, हम लोग जिस भांति वार्षिक अन्न और काष्ठकी चिन्ता करते हैं, इन्हें उस प्रकार कुछ भी चिन्ता नहीं करनी पड़ती, इसीसे ये कुत्ते के सहित ऐसे लक्षित हैं।

कश्यप बोले, जैसे हमारे चारों सहोदर देहि देहि, करके भीख मागते हैं, इनके भाई वैसे नहीं हैं, इसीसे ये कुत्ते के सहित लक्षित हैं

भरद्वाज बोले, हम भार्य्याके अपवादवश जैसा शोक हुआ है, इस अल्पचित्त ब्रह्मबन्धुको वैसी घटना नहीं हुई, इसी लिये यह पुरुष कुत्ते के सहित ऐसे लक्षित हैं।

गौतम बोले, हम लोगोंकी कुशरज्जुसे गुंथा हुआ त्रिवर्षीय रंकुमृगचर्म्म जिस प्रकार पुराना हुआ है, इनका वैसा नहीं है, इसीलिये यह पुरुष कुत्ते के सहित ऐसा लक्षित है।

भीष्म बोले, अनन्तर उस परिव्राजकने सप्तर्षियोंको देखके उनके समीप जाकर न्याय-पूर्व्वक हाथसे स्पर्श किया और बोला, आप-लोगोंकी वनके बीच जिस प्रकार भूख मिटेगी, मैं उसी भांति तुम्हारी टहल करूंगा, पर स्वरके ऐसा कहनेपर वे सब कोई इकट्ठे होकर निवास करने लगे। वे सब एक ही कार्य्यके अभिलाषी होकर वनके बीच फलमूल ग्रहण करते हुए विचरनेमें प्रवृत्त हुए। किसी समय उन्होंने विचरते हुए उत्तम वृक्षोंसे पूरित और पवित्र जलसे युक्त एक सुन्दर तालाब देखा। वह तालाब बालारुणसदृश कमलोंसे सुशोभित था, वैदूर्य्य वर्णसदृश पद्मपत्रोंसे परिपूर्ण, अनेक प्रकारके जलचर पक्षियोंसे अलंकृत था, उसमें प्रवेश करनेके लिये एक ही द्वार था कोई उस कमल तथा तालाबके जलको नहीं ले सकते थे, उसमें जानेके लिये एक ही मार्ग था और कीचड़ नहीं था। वृषादर्भि राजाके द्वारा भेजी हुई वह भयङ्करी कृत्या ही यातुधानी

नामसे विख्यात थी, वह उस तालाबकी रक्षा करती थी। पशुसखके सहित महर्षि लोग मृणालके निमित्त उस कृत्यारक्षित तालाबकी ओर गये। अनन्तर महर्षियोंने तालाबके तट-पर स्थित यातुधानी कृत्याको देखके कहा, तुम अकेली किसके लिये यहांपर निवास करती हो? तालाबके तटको अवलम्बन करके तुम्हारे निवास करनेका क्या प्रयोजन है और तुम क्या करनेकी इच्छा करती हो, उसे कहो।

यातुधानी बोली, मैं चाहे जो कोई क्यों न होऊं, मुझसे तुम लोगोंको कुछ पूछना न चाहिये। हे तपस्वीवृन्द! तुम्हें मालूम हो, कि मैं इस तालाबकी रक्षामें नियुक्त हूं।

ऋषिवृन्द बोले, हम लोग क्षुधासे आर्त हैं हमारे पास कुछ भी नहीं है, तुम्हारी सम्मति हो, तो हम लोग मृणाल लें।

यातुधानी बोली, तुम लोग एक नियमके अनुसार अपने नामका अर्थ कहके स्वेच्छा-पूर्व्वक इसमेंसे मृणाल ग्रहण करो।

भीष्म बोले, अनन्तर क्षुधासे व्याकुलचित्त अत्रिने उस यातुधानी कृत्याको नामका अर्थ जाननेमें समर्थ और ऋषियोंके मारनेकी इच्छा जानके यह वचन कहा।

अत्रि बोले, जो इस सारे जगत्को पापसे उबारता है, वेद उसे अत्रि नामसे पुकारता है, इसलिये जो पापसे परित्राण करता है, वह अत्रि है और काम क्रोध आदि शत्रु जिसे अव-लम्बन किया करते हैं, उसे अर अर्थात् पाप कहा जाता है, उस पापसे जो बचाता है, वह अरात्रि है, इसलिये जो अरात्रि हो, वही अत्रि है; अत् शब्दका अर्थ मृत्यु है, उससे जो त्राण करता है, वही भी अत्रि कहा जाता है, इसलिये धर्म्म भी अत्रिपदवाच्य है, अथवा अर्थात् वर्त्तमान कालमें जो तीनवार अधिगत नहीं होता, अतीत पुत्रादिके अनुत्पत्ति समयमें आग-तक निबन्धन, उत्पत्तिकालमें वर्त्तमान हेतु और नाश होनेपर अतीतत्वके द्वारा जो जाना नहीं जाता, जिसका इस त्रिवार अधिगम नहीं है, केवल वर्त्तमान ही है; जो अवस्था शास्त्रोंका शाश्वत अगत्कारणप्राप्ति सर्व्व पापविनाशिनी है, उसे ही अरात्रि कहते हैं। हे सुन्दरी! इसलिये जब मैं ही अरात्रि हूं, तब तुम मेरा नाम अत्रि निश्चय करो।

यातुधानी बोली, हे महाद्युति! तुमने मेरे समीप जो नाम कहा, वह मनमें भी धारण करना बहुत कठिन है। इसलिये तुम जाओ तालाबमें उतरो।

वसिष्ठ बोले, अग्नि, पृथ्वी, वायु, आकाश, स्वर्ग, आदित्य, चन्द्रमा, नक्षत्रगण और श्रुति प्रसिद्ध वसु अर्थात् जिन्हें अवलम्बन करके सब कोई वास करते हैं, ये जिसके अधीन होते हैं, वह अणिमा आदि ऐश्वर्य्यशाली महायोगी हैं, ये सब मेरे वशीभूत हैं, इस ही निमित्त मैं वसिष्ठ और अत्यन्त महान् होनेसे वरिष्ठ तथा सब आश्रमोंके उपजीव्य वास योग्य गृहस्थाश्र-ममें निवास किया करता हूं, इसलिये वसि-ष्ठत्व और वास करनेसे मुझे वसिष्ठ जानो, मैं सबका अवलम्ब हूं, इसलिये देवता लोग मेरी रक्षा करते हैं।

यातुधानी बोली, तुमने जो अपने नामका निरुक्त कहा, उसका अक्षरार्थ अत्यन्तदुःखसे बोध होता है, इसलिये इसकी धारणा नहीं की जा सकती; अच्छा जाओ, तुम तालाबमें उतरो।

कश्यप बोले, मैं प्रति शरीरमें एक हूं, इस-लिये मेरा नाम कश्यप है। अर्थात् कशाहै अश्वरूपी इन्द्रियोंको कश्य कहते हैं, उन इन्द्रि-योंका अवलम्ब शरीर भी कश्य है, इसलिये कश्यको रक्षा करनेसे कश्यप हिज और कु अर्थात् पृथ्वीको जो रक्षा करता है, उसे कुप अर्थात् जल कहा जाता है, उस कुप अर्थात् जलको जो पीता तथा सोखता है, वह कुलप अर्थात् द्वादश-सूर्य्य मेरा पुत्र है, इसलिये मैं कुलप

हूं, दीप्तिमान होनेसे कच्च और कामपुरुषसदृश वेगयुक्त होके सदा तपस्यासे प्रदीप्त हूं।

यातुधानी बोली, हे महाद्युति! तुमने मेरे समीप जिस प्रकार अपना नाम कहा, वह मनमें भी धारण नहीं किया जाता, इसलिये जाओ तालाबमें उतरो।

भरद्वाज बोले, मैं अभिष्य अर्थात् शासन न करने योग्य शत्रुओंको भी करुणासे वशीभूत करके प्रतिपादन करता और असुत अर्थात् उदासीन, दीन हीन लोगोंको प्रतिपालन किया करता हूं, देवताओंको भरण करता और द्विजोंको भी भरण किया करता हूं, भार्य्या, पुत्र और सेवकोंको दूसरे लोग जिस प्रकार पालते हुए पृथ्वी की भांति सर्व्वसह और अन्नप्रद होते हैं, मैं भी वैसा ही हूं। हे सुन्दरि! इसलिये मैं अनघ, अर्थात् मायाके द्वारा लोकहितके लिये उत्पन्न होनेसे अनव्याज हूं; इससे तुम मुझे भरद्वाज जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका ऐसा निर्वचन तथा अक्षराथ कहनेमें अत्यन्त कष्ट होता है, यह धारण नहीं किया जा सकता; इसलिये जाओ तालाबमें उतरो।

गौतम बोले, मैं जितेन्द्रिय होनेसे गोपद वाच्य, स्वर्ग और भूमिको वशीभूत करनेसे गोदम तथा धूमरहित अग्नितुल्य होनेसे अधूम हूं, इसलिये तुममें समदर्शन निबन्धनसे अदम अर्थात् दूसरेसे दमनीय नहीं हूं। हे यातुधानी कृत्या! मेरे जन्मते ही मेरी गो अर्थात् किरणोंके सहारे तम अर्थात् अन्धकार नष्ट हुआ था, इसलिये मेरा नाम गौतम जानो, मैं अग्निकी भांति तुम्हारे लिये दुष्प्रधर्ष हूं।

यातुधानी बोली, हे महामुनि! मेरे समीप तुमने जो नाम कहा, वह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालाबमें उतरो।

विश्वामित्र बोले, ब्रह्माण्डके देवगण मेरे मित्र हैं और मैं इन्द्रियोंका मित्र हूं। हे यातुधानी! इसलिये तुम मुझे विश्वामित्र जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे इस नामका निरुक्त और इसका अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालाबमें उतरो।

जमदग्नि बोले, यज्ञादिकोंमें जो बारबार हवि भक्षण करते हैं, उन्हें याजमन्त्र कहा जाता है। उस याजमन्त्र अर्थात् देवगणका जिसके द्वारा यजन किया जाता है, उसका नाम जम अर्थात् अग्नि जानो। हे सुन्दरि! उसके आविर्भावमें मैंने जन्म लिया है, इसलिये तुम मुझे जमदग्नि जानो।

यातुधानी बोली, हे महामुनि! तुमने जिस प्रकार मेरे समीप अपना नाम कहा, वह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तालाबमें उतरो।

अरुन्धती बोली, मैं पतिकी अनुगामिनी होकर धर अर्थात् पर्व्वत, धारणी और वसुधा अर्थात् देवगणोंके निवास स्थान स्वर्गमें वास करती हूं, तथा पतिके मनका अनुरोध किया करती हूं, इसलिये मुझे अरुन्धती जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निर्व्वचन और इसका अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारण करनेके योग्य नहीं है, इसलिये तुम भी जाओ तालाबमें उतरो।

गण्डा बोली, हे अग्निसम्भवे! मुखके एक स्थानको पण्डित लोग गण्ड कहते हैं, मेरा वह स्थान ऊंचा है, इसलिये मुझे गण्डा जानो।

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निरुक्त और अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारणाके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तुम भी तालाबमें उतरो।

पशुसख बोला, हे अग्नि सम्भवे! मैं पशु अर्थात् जीवोंको देखते ही रक्षा वा रञ्जन किया करता हूं, इसलिये मैं सदा पशुओंका सखा हूं, इस ही गुणके सम्बन्धसे मेरा [illegible]

यातुधानी बोली, तुम्हारे नामका निरुक्त और अक्षरार्थ अत्यन्त दुःखसे कहा जाता है, यह धारणा करनेके योग्य नहीं है, इसलिये जाओ तुम भी तालावमें उतरो।

शुनःसख बोले, हे यातुधानी! इन लोगोंने जिस प्रकार अपना अपना नाम कहा, मैं उस भांति कहनेका उत्साह नहीं करता, इसलिये मुझे शुनःसखा अर्थात् धर्म्मके सखा मुनियोंके सखारूपसे निश्चय करो।

यातुधानी बोली, तुमने सन्दिग्ध भाषासे निज नामका निर्व्वचन किया है, हे द्विज! इसलिये अब एकबार अपना यथार्थ नाम कहो।

शुनःसख बोले, मैंने एक बेर अपना नाम कहा, उसे यदि तू नहीं समझ सकी, तो इस त्रिदण्डकी चोटसे शीघ्र ही जलके खाक हो।

यातुधानी कृत्या उस समय ब्रह्मदण्डसदृश त्रिदण्डकी चोट सिरपर लगतेही पृथ्वीपर गिरके उसी समय भस्म होगई। शुनःसखा भी उस महाबलशालिनी यातुधानीको मारके पृथ्वीपर त्रिदण्ड रखके शाद्वल तृणके बीच बैठ गये।

अनन्तर वे मुनिवृन्द इच्छापूर्व्वक कमल मृणाल लेके हर्षित होकर तालावसे निकले। उन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे मृणालोंको इकट्ठा कर तालावके तटपर रखकर जलसे तर्पण किया। अनन्तर वे पुरुषश्रेष्ठ ऋषिगण जलसे निकलके स्थलमें आकर एकत्रित हुए, किन्तु मृणालको वहां नहीं देखा। ऋषिगण बोले, हम लोग क्षुधातुर होके खानेकी इच्छासे जो सब मृणाल लाये, उसे न जाने किस पापी नृशंस मनुष्यने हर लिया? वे द्विजसत्तमगण शङ्कित होके आपसमें इसी प्रकार पूछने लगे। हे अरिकर्षन! तब उन्होंने निषिद्ध कार्य्यके अकर्त्तव्यताच्छलसे शपथ करनेके लिये कहा। वे सब क्षुधार्त्त और अत्यन्त श्रमयुक्त थे, इसलिये ऐसा ही करूंगा, कहके सब कोई उस समय शपथ करनेको उद्यत हुए।

अत्रि बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह पांवसे गऊको स्पर्श करे, सूर्य्यकी ओर मूत्र पुरीष परित्याग करे और अनध्यायके समय अध्ययन करे।

वसिष्ठ बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह लोकके बीच अनद गाय परायण होके क्रीड़ा वा मृगालके निमित्त सारमेय आकर्षण करे, परिव्राट होके स्वेच्छाचारी होके, शरणागत पुरुषको मारे, निज दुहिताका उपजीव्य करे अर्थात् शुल्क लेकर अपनी कन्या बेंचके जीवन बितावे, तथा कर्षकके समीप धनकी अभिलाषा करे।

कश्यप बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह सब ठौर सब-[illegible]वर्यामें आलाप करे, न्यस्तधन लुप्त करे, झूठी साक्षी दे, यज्ञादि निमित्तके अतिरिक्त वृथा मांसाशी हो, नट कर्त्तक प्रभृतिको वृथा दान करे और दिनमें स्त्री सम्भोग करे।

भरद्वाज बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह धर्म्मत्यागी होकर स्त्रीजाति और गौवोंके विषयमें निठुर आचरण करे अथवा ब्राह्मणोंको जय करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह उपाध्यायको अग्राह्य करके ऋक् और यजुर्व्वेद पढ़े और तृणयुक्त अग्निमें होम करे।

जमदग्नि बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, जलमें विष्ठा फेंके, गौवोंको मारे तथा गौवोंके विषयमें द्रोहाचरण करे, ऋतुकालके अतिरिक्त अन्य समयमें मैथुन करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह सबका द्वेषी होवे, भार्य्याकी उपजीव्य करके जीवन बितावे, उसके बन्धुजन पृथक रहें, सदा वैर युक्त हो और परस्परमें अतिथि होवे।

गौतम बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, वह वेदोंको पढ़के उन्हें त्याग देवें, दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आवहनीय अग्निको

परित्याग करे, लोमविक्रयी होवे, एकमात्र कूएंके जलसे जिस स्थानमें जीवन धारण किया जाता है, वैसे देशमें ब्राह्मण होके भी जो वृषलीपति हुआ करता है,—जिसने मृणाल हरण किया है, वह वैसे ब्राह्मणोंकी सदृशताको प्राप्त होवे।

विश्वामित्र बोले, जिस पुरुषने मृणाल हरण किया है, उसके जीवित रहते ही दूसरे लोग उसके गुरुजनों तथा सेवकोंका पालन करें, वह गतिहीन और बहुपुत्र-युक्त होवे। जिसने मृणाल हरण किया है, उसके वेद अपवित्र हों, वह सम्पत्ति पानेपर अहङ्कार करे तथा वह कर्षक और मत्सरी हो, जिसने मृणाल हरण किया है, वह वर्षाकालमें विचरे, राजाका वेतन भागी सेवक हो, साधारण लोगोंका पुरोहित और अयाज्य पुरुषका अयाचक होवे।

अरुन्धती बोली, जो स्त्री मृणाल हरण किये हो, वह सदा सासको परिभव करे, स्वामीके समीप मन मलिन होवे, अकेली सुस्वादु वस्तु खावे। जिसने मृणाल हरण किया है, वह स्वजनोंका अनादर करके गृहमें रहके दिन बीतनेपर सत्तू खाय और अभोग्य तथा अवीर प्रसविनी होवे।

गण्डा बोली, जिसने मृणाल हरण किया हैं, वह सर्व्वदा झूठ बोले, बन्धुजनोंके सङ्ग विरोध करे, शुल्क लेके कन्यादान करे, जिसने मृणाल हरण किया है, वह अन्न पाक करके स्वयं भोजन करे, दास्यकर्म करके बूढ़ी होवे, और जारके द्वारा गर्भ धारण करके मृत्युको प्राप्त होवे।

पशुसख बोला, जिसने मृणाल हरण किया है, वह दास होकर जन्मे, सन्तान रहित हो, उसके कुछ न रहे और देवताओंको नमस्कार न करे।

शुनःसख बोले, जिसने मृणाल हरण किया हैं, वह चारों वेद जाननेवाले अथवा सामवेदग्य वा ब्रह्मचर्य्य युक्त ब्राह्मणको कन्यादान करे और वह विप्र अथर्व्ववेद पढ़के स्नान करे।

ऋषिगण बोले, हे शुनःसख! तुमने जो शपथ किया, वह तो ब्राह्मणकी ही अभिलषित है, इसलिये तुमने ही हम लोगोंका मृणाल हरण किया है। शुनःसख बोले, आप लोगोंने इस समय न्यस्तधनका न देखके कृतकर्म्मा होकर जो वचन कहा, वह सत्य है, इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है, मैंने ही मृणाल हरण किया है, देखिये, ये सब मृणाल मेरे द्वारा लुप्त हुए हैं। हे अनघगण! मैंने आप लोगोंकी परीक्षाके लिये ऐसा किया है, मैं तुम लोगोंकी रक्षाके लिये इस स्थानमें आया हूं, इस अत्यन्त क्रूर यातुधानी कृत्याने आप लोगोंके बधकी इच्छा की थी। हे तपोधनगण! राजा वृषादर्भिने इसे भेजा था, मैंने उसे मारा है। यह दुष्टा हिंसा पापिन आप लोगोंके निमित्त अग्निसे उत्पन्न हुई थी। हे विप्रगण! इस ही निमित्त मैं यहांपर आया हूं, आप लोग मुझे इन्द्र जानो। आप लोगोंने लोभत्यागनेसे सर्व्वकाम सम्पन्न लोकोंको पाया है। हे द्विजगण! इसलिये यहांसे चलिये, आप लोगोंको शीघ्रही वे समस्त लोक प्राप्त होंगे।

भीष्म बोले, अनन्तर महर्षिवृन्द प्रसन्न होके इन्द्रसे बोले, "ऐसा ही होवे" इतना कहके देवराजके सङ्ग सुरपुरमें गये। इस ही भांति उन महात्माओंने राजाओंके द्वारा अनेक प्रकारके भोगोंसे प्रलोभित होनेपर भी भूखको बहुत ही सहा था, परन्तु उस समय कुछ भी लोभ न किया, इस ही निमित्त उन्होंने स्वर्गलोक पाया। इसलिये मनुष्य सब अवस्थामें ही लोभ परित्याग करे। हे राजन्! यही परम धर्म्म है, इसलिये अवश्य ही लोभ त्यागना योग्य है। मनुष्य इस सच्चरित्र विषयको जनसमाजमें कहनेसे अर्थ-भागी होता है, कदाचित उसे दुर्गम स्थान नहीं मिलते, पितर, ऋषि और देववृन्द उसपर प्रसन्न होते हैं, वह मनुष्य परलोकमें जाकर यश धर्म्म और अर्थभागी होता है।

९३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, प्राचीन लोग इस विषयमें यह पुराना इतिहास कहते हैं, तीर्थयात्राके समय शपथके विषयमें जो घटना हुई थी, उसे सुनो। हे भरतसत्तम महाराज! कमलनालके लिये इन्द्रने जिस प्रकार चोरीकर्म्म किया और मुनियोंने शपथ की थी, राजर्षि और द्विजर्षियोंके द्वारा उस ही भांति शपथ हुई थी। पश्चिम प्रदेशमें ऋषियोंने एकत्र होके प्रभास तीर्थमें यह विचार किया कि हम लोग समस्त पृथ्वीमण्डलमें विचरते हुए स्वेच्छानुसार पुण्य-तीर्थोंमें गमन करेंगे। हे राजन्! शुक्र, अङ्गिरा विद्वान् कवि, अगस्त्य, नारद, पर्व्वत, भृगु वसिष्ठ कश्यप, गौतम, विश्वामित्र, जमदग्नि, गालव ऋषि, अष्टक, भरद्वाज अरुन्धती और बालखिल्य मुनिगण, राजा शिवि, दिलीप, नहुष, अम्बरीष ययाति, धुन्धुमार और पुरु आदि राजाओंने महानुभाव वृत्रहन्ता देवराजको अगाड़ी करके तीर्थोंमें गमन किया; वे लोग अनेक तीर्थोंमें घूमकर माघीपूर्णिमाके दिन पुण्यतीर्थ कौशि-कीमें उपस्थित हुए।

अनन्तर उन अग्निसदृश तेजस्वी ऋषियोंने देवतीर्थके जलमें स्नान और पुष्करभोजन करके सब तीर्थोंके पापको नष्ट करते हुए ब्रह्मसरोव-रमें गये। हे महाराज! कोई कोई वहां बिष खनने लगे दूसरे ब्राह्मण लोग मृणाल लानेमें प्रवृत्त हुए। अनन्तर उन्होंने अगस्त्यको उस ह्रदमें बढ़े हुए कमलोंको तोड़ते देखा। अगस्त्य उन ऋषियोंसे बोले, किसने मेरा सुन्दर कमल लिया है? मैं तुम लोगोंपर शङ्का करता हूं, तुम लोग मुझे कमल दो, पद्मको हरण करना तुम्हें उचित नहीं है। मैंने सुना है, कि काल क्रमसे धर्म्मबल विनष्ट होगा, वही काल इस समय उपस्थित हुआ है, अधर्म्मसे पीड़ा होती है, जबतक इस लोकमें अधर्म्म विद्यमान नहीं होता है, उतने ही समयके बीच मैं सदाके लिये सुरलोकमें जाऊंगा, इसके अनन्तर ब्राह्मण लोग गांवके बीच स्पष्ट स्वरसे शूद्रोंको वेद सुनावेंगे और राजा लोग व्यवहारमें प्रजाके धर्म्मको न देखेंगे; इसलिये अब मैं परलोकमें जाऊंगा जबतक उत्तम पुरुषोंके मनुष्य निकृष्ट और मध्यम लोगोंकी अवज्ञा नहीं करते हैं, तथा जबतक यह जगत अज्ञानसे परिपूरित नहीं होता है, उतने ही समयके बीच मैं सदाके लिये परलोकमें जाऊंगा। इसके बाद बलवान मनुष्योंके द्वारा निर्ब्बल मनुष्योंको भुज्यमान देखूंगा, इसलिये मैं सदाके लिये परलोकमें जाऊंगा, इस लोकमें जीवोंको देखनेका उत्साह नहीं करता।

ऋषिवृन्द आर्त्त होकर उस महर्षिसे बोले, हे महर्षि! हमने आपका पुष्कर नहीं लिया है, आप हम लोगोंपर निरर्थक क्रोध न करिये। हम लोग तीव्र शपथ करते हैं। हे पुरुषेन्द्र! उस समय उन महर्षियोंने निश्चय करके इस धर्म्मको देखकर राजपुत्र और राजपौत्रोंके सहित क्रम क्रमसे शपथ करनेमें प्रवृत्त हुए।

भृगु बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह इस लोकमें निन्दित होके दूसरेकी निन्दा करे, ताडित होके दूसरेको मारे और पीठपर चढ़के वृषभ और ऊंटोंका मास भक्षण करे।

वसिष्ठ बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह लोकके बीच अस्वाध्यायपरायण होके कुत्तेको आकर्षण करे और पुरीके बीच भिक्षुक होके रहे।

कश्यप बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह सब ठौर समस्त वस्तुओंको पण करके क्रय विक्रय करे, न्यस्त धन लोप करे और मिथ्या साक्षी दे।

गौतम बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह बुद्धिहीनतासे विषम काम क्रोध आदिके सहारे अहंकारयुक्त होके जीवन धारण करे और कर्षक तथा मत्सरी होवे।

अङ्गिरा बोले, जिसने आपका कमल लिया

है, वह अपवित्र तथा कपटी ब्राह्मण होवे, कुत्तेको आकर्षण करे, ब्रह्महत्या करके प्रायश्चित्त न करे।

धुन्धुमार बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह मित्रोंके निकट अकृतघ्न होवे, शूद्राके गर्भमें जन्मे और उत्तम रीतिसे बने हुए अन्नको अकेला ही भोजन करे।

दिलीप बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह जिस गांवमें एक मात्र कूएंके जलसे जीवन धारण किया जाता है, वैसे गांवमें जो ब्राह्मण वृषलीपति होके वास करता है,—उसे प्राप्त होने योग्य लोकोंमें जावे।

पुरु बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह चिकित्सा करनेमें प्रवृत्त रहे, भार्य्याके सहारे पुष्टि लाभ करे और श्वसुरके द्वारा उसकी जीविका चले।

शुक्र बोले, जिसने आपका कमल हर लिया है, वह वृथा मांस भक्षण करे, दिनमें मैथुन करे और राजाका प्रेष्यदूत होवे।

यमदग्नि बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह अनध्यायमें पढ़े, श्राद्धकालमें मित्रोंको भोजन करावे।

शिवि बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह अनहिताग्नि होके मृत्युके मुखमें पड़े, यज्ञके समयमें विघ्न करे और तपस्वियोंसे सङ्ग विरोध करे।

ययाति बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह व्रती और जटाधारी होके ऋतुकालके अतिरिक्त अन्य समयमें भार्य्याके द्वारा सन्तान उत्पन्न करे और वेदोंका निरादर करे।

नहुष बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह सन्यासी होके गृहस्थ होवे, दीक्षित होके स्वेच्छाचारी बने और वेतन लेके विद्यादान करे।

अम्बरीष बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह धर्म्मत्यागी होके स्त्रीजाति और गौवोंके विषयमें नृशंस होवे तथा ब्रह्महत्या करे।

नारद बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह गृहमें ज्ञानी होके बाहरमें विस्वर-पद युक्त शास्त्र पढ़े और गुरुजनोंकी अवज्ञा करे।

नाभाग बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह सदा मिथ्या वचन कहे, साधुओंसे सङ्ग विरोध करे और पण लेके कन्या दान करे।

कवि बोले, जिसने आपका कमल हरण किया है, वह पांवसे गऊको मारे, सूर्य्यकी ओर मलमूत्र परित्याग करे।

विश्वामित्र बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह धनसे खरीदे जानेपर कृषि प्रतिबन्ध करे, राजाका पुरोहित हो और अयाज्य पुरुषोंका याचक होवे।

पर्व्वत बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह गांवमें सेवक होके रहे, गधेकी सवारीपर चढ़े और वृत्तिके निमित्त कुत्तोंको आकर्षण करे।

भरद्वाज बोले, जिसने आपका कमल लिया है, नृशंस व्यवहार और झूठ कहनेसे जो पाप होता है, उसे वही पाप सदा प्राप्त होवे।

अष्टक बोले, जिस राजाने आपका कमल लिया है, वह अकृतप्रज्ञ, काम वृत्तिवाला तथा पापी हो और अधर्म्मपूर्व्वक पृथ्वीको शासन करे।

गालव बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह मनुष्य पापियोंसे भी अपूज्य और पापी होवे और दान करके कहता फिरे।

अरुन्धती बोली, जिस स्त्रीने आपका कमल हरण किया है, वह श्वसुरकी निन्दा करे, पतिके समीप मन मारके स्थित रहे और अकेली स्वादिष्ट वस्तुओंको खाय।

बालखिल्यगण बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह वृत्तिके लिये गांवके पथमें एक चरणसे निवास करे और धर्म्म जाननेवाला होके भी धर्म्म त्यागी। शुनःसख बोले, जिसने आपका कमल लिया है, वह ब्राह्मण अग्निहोत्रका अनादर करके सुखसे सोवे और परिव्राट् होके भी स्वेच्छा चारी होवे।

सुरभि बोली, जिसने आपका कमल लिया है, वह केशज अथवा वल्वज तृणकी रस्सीसे गौओंको दुहनेके समय पांव बांधके दूसरे बछड़ेके द्वारा दूध दुहे और कांसेके बर्त्तन उसके पास होवें।

भीष्म बोले, हे कौरवेन्द्र! अनन्तर उन सबके अनेक प्रकारसे शपथ करते रहनेपर देवराज सहस्राक्ष उस मुख्य विप्रको क्रुद्ध देखके अत्यन्त हर्षित हुए। हे महाराज! अनन्तर देवराज उस क्रोधी तपस्वीसे वार्त्तालाप करके अपना अभिप्राय कहने लगे, कि ब्रह्मर्षि देवर्षि और राजर्षियोंके बीच सबको अपना जानो।

इन्द्र बोले, जिस ब्राह्मणने कमल हरण किया है, वह यजुर्व्वेद जाननेवाले ब्राह्मण तथा सामवेद अध्ययन करनेवाले विप्रको अथवा जिसने ब्रह्मचर्य्य किया हो, वैसे ब्राह्मणको कन्या दान करे और अथर्व्व वेद पढ़के स्नान करे। जिसने आपका कमल लिया, वह वेदोंको पढ़े पुण्यशील तथा धार्म्मिक हो और ब्रह्मलोकमें जावे।

अगस्त्य बोले, हे बलसूदन! तुमने जो शपथ किया, वह तो आशीर्व्वाद है, इसलिये मुझे मेरा कमल दो, यही सनातन धर्म्म है।

इन्द्र बोले, हे भगवन्! इस समय मैंने लोभसे कमल नहीं लिया है, धर्म्म सुननेके लिये मैंने हरण किया था, इसलिये मुझपर तुम्हें क्रोध करना योग्य नहीं है। यह ऋषियोंकी कही हुई धर्म्मश्रुतिका पूर्ण उत्कर्ष, अनामय, अव्यय शाश्वत धर्म्मरूपी तरनेका उपाय मैंने सुना। हे विद्वन् द्विजसत्तम! इस लिये यह अपना कमल लीजिये। हे अनिन्दित भगवन्! आपको मेरा अपराध क्षमा करना योग्य है। अत्यन्त क्रोधी बुद्धिमान अगस्त्य मुनि महेन्द्रके ऐसा कहनेपर अपना कमल लेके प्रसन्न हुए। अनन्तर उन वनवासी मुनियोंके संग फिर तीर्थयात्रा की और पवित्र तीर्थोंमें स्नान करने लगे।

जो लोग योगयुक्त होके प्रति पर्व्वमें इस इतिहासको पढ़ते हैं, उनके मूर्ख पुत्र नहीं जन्मते और वह स्वयं मूर्ख नहीं होते; कोई आपदा उन्हें स्पर्श नहीं करती, वह शोक-रहित होते और उन्हें जरा अवस्था नहीं प्राप्त होती, वे रजोगुणसे रहित और कल्याण-युक्त होके परलोकमें जाकर स्वर्गलोक पाते हैं जो ऋषियोंके द्वारा वर्णित शास्त्र पढ़ते हैं, वे उत्तम पुरुष अव्यय ब्रह्मलोकमें जाते हैं।

९४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! श्राद्धकर्म्ममें जो छत्र और पादुका दिया जाता है, वह किस पुरुषके द्वारा प्रवर्तित हुआ है? यह किस लिये उत्पन्न हुआ और किस निमित्त दिया जाता है, केवल श्राद्धकर्म्ममें ही क्यों, स्त्रियोंके व्रतादि पुण्योत्सवके समयमें भी पादुका और छत्र दिया जाता है। अनेक कारणोंसे यह पुण्यके अवलम्बसे दिया जाता है। हे राजन्! इसे विस्तारपूर्व्वक सुननेकी इच्छा करता हूं।

भीष्म बोले, हे महाराज! छत्र और पादुका जिस प्रकार लोकमें प्रचलित हुआ तथा जिसके द्वारा प्रवर्त्तित हुआ है, उसे विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सावधान होके सुनो। हे नरनाथ! यह जिस प्रकार अक्षय और पवित्र हुआ है, उसे मैं पूरीरीतिसे कहता हूं। हे प्रजानाथ! महाप्रभाव दिवाकर और जमदग्निके सम्वाद-युक्त इस पहले कहे हुए इतिहासको सुनो। हे महाराज! पहले समयमें भगवान् भार्गव स्वयं धनुष लेकर क्रीड़ा करते हुए सन्धान करके बाण चला रहे थे, रेणुका उस प्रदीप्त तेजसेयुक्त चलाये हुए बाणोंको बार बार लाके उन्हें देने लगी। अनन्तर वह उस बाणके शब्दसे अत्यन्त हर्षित होके बाण चलाने लगे, रेणुकाने उन बाणोंको फिर ला दिया। अनन्तर सूर्य्यके मध्य-

वैशाखी नक्षत्रोंके बीच रोहिणी मण्डल और ज्येष्ठाके समसूत्रमें जानेपर मध्याह्नके समय विप्रश्रेष्ठ जमदग्निने शीघ्रगामी बाण चलाकर रेणुकासे कहा, हे विशालनयनी ! आओ, धनुषसे छूटे हुए बाणोंको लाओ। हे सुन्दरि ! मैं फिर इन बाणोंको चलाऊंगा। हे प्रजानाथ ! रेणुका चलनेके समय सूर्य्यके धूपसे पांव और सिर झुलसनेपर वृक्षकी छायामें मुहूर्त्त भर ठहरी। वह असितेक्षणा कल्याणी मुहूर्त भर खड़ी रहके पतिके शापभयसे डरकर फिर बाणोंको लानेके निमित्त चली। यशस्विनी सुन्दरी रेणुका उन बाणोंको लेकर दोनों पांवोंमें फफोले पड़नेसे क्लेश पाके लौटी और पतिके भयसे कांपती हुई उनके समीप उपस्थित हुई, जमदग्निने क्रुद्ध होके उस उत्तम नेत्रवालीसे बार बार कहा, हे रेणुका ! तू किस लिये बहुत देरीमें आई ?

रेणुका बोली, हे तपोधन ! मेरा सिर और दोनों पांव बहुत परितप्त हुए थे मैंने सूर्य्यके तेजसे रुककर वृक्षकी छायाका सहारा लिया था, हे ब्रह्मन् इस ही निमित्त मैं बहुत देरीमें बाणोंको ले आई। हे विभु तपोधन ! आप ऐसा सुनके मुझपर क्रोध न करिये।

जमदग्नि बोले, हे रेणुके ! मैंने इसही समय तुम्हें दुःख देनेवाले सूर्य्यको अस्त्रानलके सहारे गिरा दूंगा।

भीष्म बोले, अनन्तर जमदग्नि दिव्य धनुष खींचके जिधर सूर्य्य जारहे थे, उस ही ओर मुंह करके खड़े हुए। हे कौन्तेय ! सूर्य्यदेव उन्हें बद्धकवच देखके ब्राह्मण स्वरूप धरके उनके समीप आके बोले, सूर्य्यने तुम्हारा क्या अपराध किया है ? सूर्य्य आकाशमें निवास करते हुए रसोंको आकर्षण करता है और वर्षाऋतुमें उन्हीं रसोंको बरसाता है, हे विप्र ! उस ही रससे मनुष्योंके सुखके लिये अन्न उपजता है, अन्नही प्राण है, यह वेदमें वर्णित है, अनन्तर सूर्य्य आकाशमें रहके किरणोंके द्वारा इस सप्तद्वीपवाली पृथ्वीपर जलकी वर्षा करता है। हे प्रभु ! वही जल औषधि, लता पुष्प और पत्रोंमें पड़के अन्नरूपसे उत्पन्न होता है। हे भार्गव ! जातकर्म्म प्रभृति सब कार्य्य, व्रत, उपनयन, गोदान, विवाह और यज्ञसमृद्धि, सब शास्त्र, सब भांतिके दान और धन सञ्चय, सब विषय जिसे तुम जानते हो, उनमें अन्नसेही पूरी रीतिसे प्रवृत्ति हुआ करती है। जो सब उत्तम विषय हैं और जो आरम्भ हुआ करते हैं, वह सब अन्नसेही उत्पन्न होता है, इसलिये जो मुझे विदित है, वह तुमसे कहता हूं। हे विप्र ! मैंने जो कहा, तुम वह सब विषय जानते हो। हे विप्र ! इसलिये मैं तुम्हें प्रसन्न करता हूं। सूर्य्यको गिरानेसे तुम्हें कौनसा फल मिलेगा ?

९५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, भगवान् सूर्य्यके ऐसा कहनेपर महातेजस्वी मुनिसत्तम जमदग्निने क्या किया ?

भीष्म बोले, हे कुरुसत्तम ! अग्नि सदृश प्रभायुक्त वह जमदग्नि मुनि सूर्य्यके ऐसी प्रार्थना करनेपर भी शान्त न हुए। हे नरनाथ ! अनन्तर विप्ररूपधारी सूर्य्य हाथ जोड़कर मुनिको प्रणाम करके मृदुस्वरसे बोले, हे विप्रर्षि ! सूर्य्य सदा चलता रहता है, इसलिये वह चललक्ष्य है, इसलिये अब सदा चललक्ष्य है। अब सदा गमनशील सूर्य्य चललक्ष्य हुआ तब तुम उसे किस प्रकार विद्ध करोगे ?

जमदग्नि बोले, मैं ज्ञाननेत्रसे तुम्हें स्थिर और गमनशील, दोनोंही जानता हूं, इसलिये आज मैं अवश्य तुम्हें शिक्षा दूंगा। हे दिवाकर ! तुम मध्याह्नमें अर्द्ध निमेषभर ठहरते हो, उसी समय मैं तुम्हें विद्ध करूंगा। हे भास्कर ! इस विषयमें मुझे कुछ विचार नहीं है।

सूर्य्य बोले, हे धन्विवर! तुम मुझे अवश्य ही विद्ध करोगे इसमें सन्देह नहीं है। हे भगवन्! यद्यपि मैंने तुम्हारा अपकार किया है, तोभी इस समय मुझे अपना शरणागत जानो।

भीष्म बोले, अनन्तर भगवान् जमदग्निने उनसे कहा। हे सूर्य्य! तुम्हें डरना उचित नहीं है, क्योंकि तुम प्रणत हुए हो। ब्राह्मणोंमें जो सरलता है, पृथ्वीमें धैर्य्य, चन्द्रमामें मनोहरताई, वरुणमें, गम्भीरता, अग्निमें प्रकाश, सुमेरुमें प्रभा और सूर्य्यमें ताप इन सबको जो मनुष्य अतिक्रम करता है, वही शरणागत पुरुषको मार सकता है। जो पुरुष शरणमें आये हुएको मारता है, वह पुरुषही ब्रह्महत्यारा हुआ करता और वह मनुष्यही सुरा पीता है। हे तात! इसलिये इस दुर्नीति विषयके नियमको बिचारो, तुम्हारी किरणसे तापित मार्गके बीच जिस प्रकार सुखसे लोग चल सकें, उसका उपाय कहो।

भीष्म बोले, भृगुसत्तम जमदग्नि इतना कहके चुप होरहे। अनन्तर सूर्य्यदेवने उन्हें शीघ्र ही छत्र और पादुका दिया। सूर्य्यने कहा, हे महर्षि! मेरी किरण जिससे निवारित होती है, उस शिरस्त्राण और पदत्राण (दोनों चर्म्म-पादुका) ग्रहण करो, आजसे इस लोकमें इसको समस्त पुण्यकार्य्योंमें परम अक्षयरूपसे प्रचार होगा।

भीष्म बोले हे भारत! छत्र और पादुका दान सूर्य्यके द्वारा प्रवर्त्तित हुआ है, तीनों लोकमें यह परम पवित्र रूपसे प्रसिद्ध है; इसलिये तुम ब्राह्मणोंको उत्तम छत्र और पादुका दान करो, उससे तुम्हें महान् धर्म्म होगा, इस विषयमें हम लोगोंको विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! जो लोग द्विजातियोंको एक सौ शलाकासे युक्त छाता दान करते हैं, वे परलोकमें जाके सुखी होते हैं। हे भरतर्षभ! वे लोग अप्सरा, गन्धर्व और द्विजोंसे पूजित होकर इन्द्रलोकमें निवास करते हैं। हे महाबाहो! जो लोग तापयुक्त स्नातक ब्राह्मण तथा संशितव्रती द्विजातियोंको दो पादुका दान करते हैं, वे भी देवताओंसे पूजित लोकको प्राप्त होते हैं तथा वे परलोकमें जाकर प्रीतियुक्त होके गोलोकमें निवास करते हैं। हे भरतसत्तम! यह मैंने विस्तारपूर्व्वक तुमसे छत्र और पादुकादानका फल कहा है।

९६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! आप समस्त गार्हस्थ्यधर्म्म वर्णन करिये, मनुष्य क्या करनेसे इस लोकमें समृद्धि पाता है?

भीष्म बोले, हे भरतकुल तिलक प्रजानाथ! इस विषयमें मैं तुमसे श्रीकृष्ण और पृथ्वीके सम्वादयुक्त प्राचीन इतिहास कहूंगा। हे भरतश्रेष्ठ! तुमने मुझसे इस समय जो प्रश्न किया है, प्रतापवान् कृष्णने पृथ्वीदेवीको यथा योग्य स्तुति करके यही विषय पूछा था।

श्रीकृष्ण बोले, हे पृथ्वी! मैं अथवा मेरे समान पुरुष गृहस्थधर्म्मका अवलम्बन करके नियमपूर्व्वक कौनसा कार्य्य करें तथा क्या करनेसे वह सिद्ध होगा?

पृथ्वी बोली, हे माधव! ऋषि, देवता, पितर और मनुष्यवृन्द गृहस्थ पुरुषोंके लिये अवश्य ही पूजनीय हैं, यज्ञकर्म्म अवश्य करना चाहिये, और भी मुझसे सुनो। हे मधुसूदन! देवता सदा यज्ञसे तृप्त होते और मनुष्य सदा आतिथ्यके द्वारा तृप्त होते हैं, इसलिये अभिप्रायके अनुसार पूजनीय लोगोंकी सदा सेवा करनी योग्य है, ऐसे कार्य्यसे ऋषि लोग प्रसन्न होते हैं। सदा अभुक्त रहके अग्निकी परिचर्य्या करे, तथा बलिवैश्वदेव दान करे, उससे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। गृहस्थ पुरुष प्रतिदिन पितरोंकी प्रीतिका विधान करते हुए अन्न और

अथवा दूध, फल, मूल आदिके सहारे, श्राद्ध करे, सिद्ध अन्नके द्वारा विधिपूर्व्वक वैश्वदेव होम करे और हुताशनमें अग्नि, चन्द्रमा अनन्तर धन्वन्तरिके लिये होम करे, प्रजापतिके निमित्त पृथक् होम करना योग्य है। आनुपूर्व्विक क्रमसे बलि देनी चाहिये, दक्षिण दिशामें यमको, पश्चिममें वरुण, उत्तरमें चन्द्रमा, वास्तुके बीच प्रजापतिको, पूर्व्वोत्तर भागमें धन्वन्तरि और पूर्व्व दिशामें इन्द्रको पूजाका उपहार प्रदान करे तथा मनुष्योंको गृहके द्वारपर अन्न प्रभृति दान करे। हे माधव! ऋषि लोग इसे ही बलि कहा करते हैं। मरुद्गण तथा देवताओंको गृहके भीतर बलि प्रदान करे और विश्वदेवगणोंको सूने स्थानमें बलि देनी योग्य है, निशाचर और भूतगणोंको रात्रिके समयमें बलि दे। इस ही भांति सबको बलि देके ब्राह्मणोंको भिक्षा देवे ब्राह्मणोंकी अनुपस्थितिमें अन्नका अग्राशन अग्निमें डाले। जब मनुष्य पितरोंके श्राद्ध करनेकी इच्छा करे, तब श्राद्धकर्म्मके पूर्ण होनेपर पितरोंकी तृप्तिका विधान करनेके अनन्तर विधिपूर्व्वक बलि देना चाहिये। अनन्तर वैश्वदेव करके ब्राह्मणोंको निमन्त्रण करे। शेषमें अन्नादिसे अतिथियोंका सत्कार करके भोजन करावे। हे महाराज! ऐसा कार्य्य करनेसे अतिथिवृन्द मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न हुआ करते हैं। जिनके आनेकी तिथि नियत न हो, उन्हें अतिथि कहते हैं। आचार्य्य, पिता, मित्र, आप्त पुरुष और अतिथियोंको 'मेरे गृहमें आज भोजनकी ये वस्तु उपस्थित हैं' गृहस्थ पुरुष सदा ऐसा निवेदन करे, ऐसा ही धर्म्म विहित है। हे कृष्ण! गृहस्थ पुरुष सदा सबके शेषमें अन्न भोजन करे, राजा, ऋत्विक, स्नातक, गुरु और श्वशुरके वर्षभर तक गृहमें वास करनेपर भी उनकी मधुपर्कसे पूजा करे। कुत्ते, चाण्डाल और पक्षियोंकी सन्ध्या और सबेरे पृथ्वीपर अन्न देवे, इसहीका नाम वैश्वदेव विहित है। जो लोग असूयारहित होके इन गृहस्थधर्म्मोंको प्रतिपालन करते हैं, वे इस लोकमें ऋषियोंसे वर पाके परलोकमें सुरपुरमें निवास किया करते हैं।

भीष्म बोले, प्रतापवान् श्रीकृष्णने पृथ्वीका वचन सुनके वैसा ही आचरण किया था, इसलिये तुम भी इस ही प्रकार अनुष्ठान करो। हे प्रजानाथ! तुम इस गृहस्थधर्म्मका अनुष्ठान करनेसे इस लोकमें यश पाके परलोकमें स्वर्ग पाओगे।

९७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतर्षभ! दीप दान कैसा है? यह किस प्रकार उत्पन्न हुआ और इसका क्या फल है, यह विषय आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे भारत! इस विषयमें प्राचीन लोग प्रजापति मनु और सुवर्णके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे भारत! सुवर्ण नाम कोई तपस्वी थे, वह रूपमें सुवर्णसदृश होनेसे सुवर्ण नामसे विख्यात हुए उन्होंने कुलशील गुणयुक्त स्वशाखोक्त वेदपाठमें पारदर्शी होकर निज गुणोंके सहारे स्ववंशीय अनेक पुरुषोंको अतिक्रम किया था। किसी समय उस ब्राह्मणने प्रजापति मनुको देखा और देखते ही उनके समीप उपस्थित हुआ; उस समय उन दोनोंने परस्परमें कुशल प्रश्न किया। अनन्तर वे दोनों सत्यसंकल्प सुवर्ण शैल सुमेरुके बीच एक रमणीय शिलापर बैठे। उस स्थानमें वे दोनों वार्त्तालाप करते हुए महानुभाव ब्रह्मर्षियों देवताओं और दैत्योंकी अनेक प्रकारकी पुरातन कथा जान सके। सुवर्णने स्वायम्भुव मनुसे कहा, हे प्रजानाथ! आपको सब जीवोंके हितके निमित्त मेरे प्रश्नका उत्तर देना योग्य है। मनुष्य लोग जो फूलोंसे

देवताओंकी पूजा करते हैं, यह किस प्रकार उत्पन्न हुआ और इसका फल क्या है? आप मुझसे यह विषय कहिये।

मनु बोले, इस विषयमें प्राचीन लोग महानुभाव शुक्र और बलिके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। विरोचनपुत्र बलि जब त्रिभुवन शासन कर रहे थे, उस समय उनके निकट भृगुकुलधुरन्धर शुक्राचार्य्य आये। बहुतसी दक्षिणा देनेवाले, दानशील असुरराज बलि विधिपूर्व्वक अर्घ आदिसे भार्गवकी पूजा करके आसनपर बैठे। तब फूल, दीप और धूप दान करनेसे क्या फल होता है, तुमने इस विषयमें जैसा प्रश्न किया है, वैसा ही वहांपर प्रश्न हुआ था। अनन्तर दैत्येन्द्रने शुक्राचार्य्यसे उत्तम प्रश्न किया।

बलि बोले, हे ब्रह्मवित् द्विजश्रेष्ठ! फूल, धूप और दीप-दान करनेसे क्या फल होता है? आप इसे कह सकते हैं।

शुक्र बोले, पहले तप उत्पन्न हुआ था, फिर धर्म्म प्रकट हुआ, इसके अनन्तर लता, ओषधी, अमृत, विष और तुल्य जाति विविध लता तथा अनेक प्रकारकी सोमलता पृथ्वीपर उत्पन्न हुई। अमृत मनको प्रसन्न करनेवाला तथा सदा सन्तोष, प्रदान करता है और प्रचण्ड विषकी गन्ध मनको सब प्रकारसे ग्लानियुक्त करती है। अमृतको मङ्गल और विषको महा-अमङ्गल जानना चाहिये। ओषधियां अमृत और अग्निसे उत्पन्न हुआ तेज ही विष है। सब पुष्प मनको प्रसन्न तथा शोभायुक्त करते हैं, इस ही लिये पुण्यकर्म्म करनेवाले मनुष्य पुष्प फलोंको सुमनस कहा करते हैं। जो मनुष्य पवित्र होके देवताओंको सुमनस दान करता है, देववृन्द उसपर प्रसन्न होके उसे पुष्टि प्रदान करते हैं। हे प्रभु दैत्यराज! जिन जिन देवताओंके उद्देश्यसे फल दिये जाते हैं, वे दाताके मङ्गलके निमित्त उनपर प्रसन्न होते हैं। बहुवीर्य्य और अनेक रूपवाली पृथक् पृथक् ओषधियोंको उग्र, मनोहर और तेजस्वी जानो। उन्होंमें जो यज्ञीय तथा अयज्ञीय हैं, वह मुझसे सुनो और जो सब माला देवताओं तथा जो असुरोंके लिये हितकर हैं, वह भी सुनो। जो फूल राक्षस, सर्प और यक्षोंको प्रिय हैं, तथा जो मनुष्य पितरोंके लिये मनोहर हैं, उसे विस्तारपूर्व्वक सुनो। जो फल जङ्गली और ग्रामीण हैं, तथा जो भूमि खोदके लगाये गये हैं; जो फूल पर्व्वतीय, कांटेरहित और कांटेयुक्त हैं; जो सुगन्धि, सुन्दरताई और रसमय हैं, उनका विषय सुनो। फूलकी दो प्रकारकी गन्ध होती है, एक इष्ट दूसरी अनिष्ट, जिनकी सुगन्धि इष्ट हैं, उन्हें ही देवताओंके फूल निश्चय करो। कांटेरहित वृक्षोंके फूल प्रायः सफेद होते हैं, उन वृक्षोंके फूल सदा देवताओंके अभिलषित हैं। कमल प्रभृति जो सब जलज पुष्प उत्पन्न होते हैं, बुद्धिमान् मनुष्य उन फूलोंको यक्ष सर्प और गन्धर्व्वोंको प्रदान करे। कटु और कांटेयुक्त ओषधियां तथा लाल पुष्प शत्रुओंके अभिचारके निमित्त अथर्व्ववेदमें वर्णित हुए हैं। तीक्ष्णवीर्य्य, कांटे युक्त, दुरालम्भ, लाल काले फूल भूतोंको उपहार देवे। मन और हृदयके आनन्दको बढ़ानेवाले, मलनेमें मधुर, मनोहर फूल मनुष्योंके लिये विहित हैं। विवाहादि पुष्टियुक्त कार्य्यों और सुरतादि विजन कार्य्योंमें श्मशान और देवस्थानमें उत्पन्न हुए पुष्पोंको न लाना चाहिये। हे सौम्य! पर्व्वतीय वृक्षोंके फूलोंको धोके शास्त्रके अनुसार यथायोग्य देवताओंको प्रदान करे। देवगण फूलकी सुगन्धिसे प्रसन्न होते हैं, यक्ष और राक्षस फूलको देखनेसे सन्तुष्ट होते हैं। सर्पगण पूरी रीतिसे फूलोंको उपभोग करनेसे प्रसन्न होते हैं और मनुष्य लोग सूंघने देखने और उपभोग इन तीन प्रकारकी उपायसे सन्तुष्ट हुआ करते हैं। सब फूल देवताओंको निवेदन करते ही प्रसन्न

करती हैं; वे सङ्कल्पसिद्ध हैं, इसलिये प्रसन्न होके मनुष्योंका मनोरथ इच्छितके सहारे वर्द्धित करती हैं। देववृन्द प्रसन्न होनेपर मनुष्योंको सदा प्रीतियुक्त करते हैं, वे सम्मानित होनेपर मनुष्योंको सम्मानयुक्त करते और अवज्ञात तथा अवधूत होनेपर अधम मनुष्योंको निश्चय ही जला देते हैं। अब धूपदान विधिका फल मुझसे सुनो। धूप अनेक प्रकारका है, उसमें उत्तम और निकृष्ट दो भेद हैं। गुग्गल प्रभृति निर्यासोंसे बने हुए एक प्रकारके धूपको निर्यास कहते हैं। काठ और अग्निके संयोगसे निकाले हुए धूपका नाम सारि है और अष्टगन्ध द्रव्योंमें बने हुए धूपको कृत्रिम कहते हैं, इस प्रभेदके अनुसार धूप तीन प्रकारका है। गन्ध इष्ट और अनिष्ट भेदसे दो प्रकार है उसे मेरे समीप विस्तारपूर्वक सुनो। सल्लकीरहित निर्यास धूप देवताओंको दिया जाता है, सब निर्यासोंके बीच गुग्गल ही श्रेष्ठ कहके निश्चित हुआ है। यक्ष, राक्षस और नागियोंके भोगके लिये सारवान वस्तुओंके बीच अगरु ही श्रेष्ठ है। दैत्योंको सल्लकी तथा उसके सदृश दूसरे निर्यास ही अभिलषित हैं। हे राजन्! सर्ज्जरस आदि गन्ध और देवदारुको सुगन्ध फूली हुई मल्लिका प्रभृति फूलोंकी मकरन्द गन्धके सङ्ग मिलनेपर जो धूप बनती है, वह मनुष्योंके लिये विहित है और ऐसा वर्णित है, कि वह देव, दानव तथा भूतोंको सदा प्रीतियुक्त करती है। इसके अतिरिक्त जो विशेष भावके उपयुक्त है, वह मनुष्योंके लिये विहित है। दीपक दान करनेसे जो उत्तम फल मिलता है और जिस समयमें जिसके द्वारा जिस प्रकार जैसा दीपक दान करना चाहिये; वह भी कहता हूं। यह भी कहा जाता है, कि ज्योति यामा दीपादि तेज तथा कान्ति प्रदान करते हैं; दीपदानसे मनुष्योंके तेजकी वृद्धि होती है। अन्धकार और दक्षिणायन अन्धतम नाम नरक स्वरूप है; इसलिये उत्तरायणकी रात्रिमें दीपदान करना उत्तम है, दीप ज्योति ऊर्द्धग और अन्धकारका नाशक है, इस ही लिये वह ऊर्द्धगति प्रदान करती है, इस विषयमें ऐसा ही निश्चय है। दीपदानसे ही देववृन्द तेजस्वी, भावयुक्त और प्रकाशमान हुए हैं और दीपदान करनेसे राक्षसोंका तामस भाव प्राप्त हुआ है; इसलिये दीपदान करना उचित है। मनुष्य दीपदान करनेसे नेत्रवान और प्रभायुक्त होते हैं, इसलिये दीपदान करके हिंसा न करे, न हरे और नष्ट न करे। जो पुरुष दीपक हरता है, वह अन्धा होता है अन्धकारमें चलता है, तथा उसकी उत्तम प्रभा नहीं रहती और दीपक दान करनेवाला स्वर्गलोकमें दीपमालाकी भांति विराजता है। घृतसे दीप दान करना प्रथम कल्प है, तिल, सरसों और औषधियोंके तेलसे दान करना द्वितीय कल्प है। जो मनुष्य पुष्टिकी कामना करे, उसे उचित है, कि चर्व्वी, मेद, हड्डी प्रभृति प्राणियोंके अवयवोंसे निकले हुए तेल और निर्यासके द्वारा दीप दान न करे। जो अपने ऐश्वर्य्यकी अभिलाष करे उसे पहाड़के झरने; वन, चैत्यस्थान और चौहारोंमें सदा दीप दान करना चाहिये, दीप दाता सदा कुलप्रदीप और पवित्रचित्त होके प्रकाशित होता और उसे ज्योतिगणोंके सदृश लोक प्राप्त होते हैं। देव, यक्ष, सर्प, मनुष्य, भूत और राक्षसोंके बलिकर्म्मके विषयमें कर्म्मफल उदय होनेसे जो उत्कर्षता प्राप्त होती है, उसे कहता हूं।

ब्राह्मण, देवता, अतिथि और बालकवृन्द जिसके गृहमें अगाड़ी भोजन नहीं करते, उन निर्लज्जकुचित्त अमांगलिक लोगोंको राक्षस जानना चाहिये; इसलिये देवताओंको पूजित अन्नका अग्रभाग प्रदान करना योग्य है तथा सावधान और अतन्द्रित होके माथे चढ़ाके दी हुई बलिको देववृन्द सदा ग्रहण करते हैं, आगन्तुक अतिथि और यक्ष, राक्षस, सर्प उसके

गृहमें आनेसे प्रकृत होते हैं। देवता और पितर लोग इस लोकमें दी हुई हव्यकव्य बलिके द्वारा जीवन धारण करते हैं, वे प्रसन्न होके दाताको आयु, यश और धनसे सदारे सन्तुष्ट किया करते हैं। दही, दूधयुक्त, पवित्र, सुगन्धित और उत्तम बलि फूलके सहित देवताओंको देवे। यक्ष राक्षसोंको रुधिर और मांसयुक्त बलि देनी योग्य है; उस सारी बलिको सुरा द्रव और अरक विभूषित करे। पद्मोत्पल-मिश्रित बलि सर्पोंको प्रिय है। गुड़युक्त तिल भूतोंको उपहार देवे। अग्रदाता अगाड़ी भोजन करनेवाला, बल और वर्णयुक्त होता है इसलिये देवताओंको पूजित अन्नका अग्रभाग प्रदान करे। गृह और गृहके देवता रात दिन प्रज्वलित होते हैं, इसलिये ऐश्वर्य्यकी कामना करनेवाला मनुष्य उन्हें प्रसूताग्र प्रदान करके उनकी पूजा करे। भृगुनन्दन शुक्राचार्य्यने असुरेन्द्र बलिसे यह सब कथा कही थी। मनुने उसी सुवर्णसे कहा, सुवर्णने नारदसे और नारदने मेरे समीप यह सब फलका विषय कहा था। हे महातेजस्वी पुत्र! तुम भी यह सब मालूम करके ऐसा ही आचरण करो।

९८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! मैंने फूल धूप प्रभृति दान करनेवालोंका फल और बलि विधानका विषय सुना, यह विषय आपको फिर कहना योग्य है, धूपदान और दीपदानका क्या फल है? किस लिये गृहस्थ लोग बलि दिया करते हैं? इसे विस्तारपूर्व्वक वर्णन करिये।

भीष्म बोले, प्राचीन लोग इस विषयमें अगस्त्य, भृगु और नहुषके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे महाराज! महातपा राजर्षि नहुषने इस लोकके सुकृत कर्म्मोंसे देवराज्य पाया था। हे महाराज! राजा नहुष दिव्य और मानुष विविध क्रिया करने लगे। हे महाराज! उस महात्माकी मानुषी क्रिया तथा स्वर्गीय क्रिया उस स्वर्गके बीच निभने लगीं। अग्निकार्य्यमें समिध, कुश, पुष्प और दूबके सहित धूपदान तथा दीप दान प्रभृति सब कार्य्य उस महानुभाव राजाके स्थानमें होने लगे, वह सुरपुरमें भी जप यज्ञ और मनोयज्ञ करने लगा। हे अरिन्दम! वह देवताओंका राजा होनेपर भी उनकी विधिपूर्व्वक पूजा करता था। अनन्तर "मैं इन्द्र हूं" ऐसा जानके वह अहङ्कारयुक्त हुआ। हे महाराज! उसके अभिमानयुक्त होनेपर उसकी सब क्रिया नष्ट हुई। उसने वर पाके मतवाला होकर ऋषियोंको सवारी ढोनेमें प्रवृत्त किया और क्रियारहित होके अत्यन्त निर्बल होने लगा। उसके अहङ्कारयुक्त होके मुख्य तपस्वी ऋषियोंको वाहन बनाते रहते बहुत समय व्यतीत हुआ। हे भारत! अनन्तर वह पर्य्यायक्रमसे सब ऋषियोंको सवारी ढोनेके लिये नियुक्त करनेमें उद्यत हुआ, कालक्रमसे अगस्त्य मुनिका समय उपस्थित हुआ ब्रह्मवादियोंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी भृगु उस समय अगस्त्यके आश्रममें आके यह वचन बोले, हे महामुनि! हम इस नीच बुद्धि देवेन्द्र नहुषके ऐसे असत्कारको किस प्रकार क्षमा करेंगे?

अगस्त्य बोले, हे मुनिवर! वरदाता प्रजापतिने जिसे वर दिया है, मैं उसे किस प्रकार शाप देनेमें समर्थ होऊंगा? आपसे भी यह छिपा नहीं है। जब वह स्वर्गमें जाने लगा, तब प्रजापतिके समीप यह वर मांगा, कि 'मैं जिसे देखूं' वह मेरे वशमें हो जाय, इस ही निमित्त वह निःसन्देह मेरे अथवा तुम्हारे तथा अन्य किसी मुख्य ऋषिके द्वारा भस्म तथा स्वर्गसे च्युत नहीं हुआ। महानुभाव पितामहने पहले समयमें इसे पीनेके लिये अमृत दिया था इस ही निमित्त हम उसे नष्ट करनेमें असमर्थ

हुए हैं। प्रजापतिने इसी प्रणापुण्यसे दुःखकर वर दिया है, इसीसे यह पुरुषाधम ब्राह्मणोंके विषयमें अधर्म्मयुक्त व्यवहार करता है। हे वरूवर! उस विषयमें हम लोगोंके लिये जो समय उपस्थित हुआ है, आप उसे ही कहिये, आप जैसा कहेंगे, मैं निःसन्देह वैसाही करूंगा।

भृगु बोले, दैववशसे मोहित बलशाली नहुषको प्रतिकार करनेके लिये मैं पितामहकी आज्ञानुसार आपके समीप आया हूं। वह नीचबुद्धि देवराज आज आपको रथमें नियुक्त करेगा, मैं आज ही इस अनिन्द्रको निज तेजके प्रभावसे गर्व्वित करूंगा। मैं आज ही आपके सम्मुखमें उस अत्यन्त नीचबुद्धि पापीको इन्द्रपदसे पृथक् करके शतक्रतुको निजपदपर स्थापित करूंगा। आज ही वह मन्दबुद्धि कुदेवराज दैववशसे अपने नाशके लिये पांवसे तुम्हें प्रधर्षित करेगा। मैं धर्षणानिबन्धनसे अत्यन्त क्रोधित होके उस विधर्म्मी द्विजद्रोही पापीको क्रोधवशसे "सर्प होजाओ" कहके शाप दूंगा। हे महामुनि! अनन्तर उस अत्यन्त दुर्बुद्धि राजाको धिक् शब्दसे तेजरहित करके आपके सम्मुखमें ही पृथ्वीपर गिरा दूंगा। हे मुनि! ऐश्वर्य्यबलसे मोहित पापी नहुषको जिस प्रकार करनेके लिये आपकी जैसी रुचि होगी, मैं वैसा ही करूंगा। मैत्रावारुणि अविनाशी अगस्त्य मुनि भृगुके ऐसा वचन सुनके परम प्रसन्न और शोकरहित हुए।

९९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, राजा नहुष किस प्रकार विपदग्रस्त हुए? किस प्रकार पृथ्वीपर गिरे? किस लिये इन्द्रत्व पदसे भ्रष्ट हुए? यह विषय आपको वर्णन करना योग्य है।

भीष्म बोले, अगस्त्य और भृगुके इस प्रकार वार्त्तालाप करते रहनेपर महात्मा नहुष राजाके दिव्य और मनुष्य कार्य्य होने लगे। सब सामग्रियोंसे युक्त दीपदान, बलिकर्म्म तथा पृथक् पृथक् रीतिसे उसके सब कार्य्य प्रवृत्त थे। देवलोक और नरलोकमें जो सब सदाचार वर्णित हुए हैं, महानुभाव देवराज नहुषके वे सब कार्य्य पूरे हुए। हे राजेन्द्र! यदि साधुसम्मत सदाचार पूर्ण हो, तो गृहस्थ मनुष्य समृद्धियुक्त होता है। धूपदान, दीपदान, नमस्कार, ब्राह्मणको सिद्धान्नका अग्रभाग प्रदान और गृहमें बलि देनेसे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। बलिकर्म्म विषयमें गृहस्थ पुरुष जिस प्रकार सन्तुष्ट होता है, देवताओंको उसमें उन लोगोंसे एक सौ गुणा अधिक प्रीति हुआ करती है; इसलिये साधु पुरुष आत्मगुणी वह नमस्कारयुक्त धूप और दीप दान किया करते हैं। विद्वान् पुरुष पवित्र जलसे स्नान करके जो कुछ कार्य्य करता है, उससे देववृन्द प्रसन्न होते हैं। महाभाग पितर, तपस्वी, ऋषि और गृहदेवता विधिपूर्व्वक पूजित होनेपर प्रसन्न होते हैं। राजा नहुषने इस ही निमित्त ऐसी बुद्धि अवलम्बन करके महत सुरेन्द्रत्व पाके भी अद्भुत रीतिसे पूर्व्वोक्त कार्य्योंको किया था। कुछ समयके अनन्तर भाग्यक्षयका समय उपस्थित होनेपर पूर्व्वोक्त कार्य्योंको अवज्ञा करके वह नीचे कहे हुए कार्य्य करनेमें प्रवृत्त हुए थे। अनन्तर वह देवेन्द्र होके बलिकर्म्मसे रहित हुए और धूपदीप दान तथा पितरोंका तर्पण विधिपूर्व्वक करनेमें विरक्त रहे; अन्तमें उनके यज्ञ स्थानमें राक्षस लोग विचरने लगे। अनन्तर उस महाबली राजाने गर्व्वित होकर सरस्वतीके तटसे अगस्त्य महर्षिको सवारी ले चलनेके लिये शीघ्र ही बुलाया। तब महातेजस्वी भृगु अगस्त्यसे बोले, मैं जबतक तुम्हारी जटाके बीच प्रवेश करूं, तबतक तुम अपने नेत्र मूंद रक्खो। अनन्तर अगस्त्यके पर्व्वतकी भांति अचलभावसे स्थित होनेपर महातेजस्वी भृगुने राजा नहुषको

स्वर्गसे च्युत करनेके लिये उनके जटाजूटमें प्रवेश किया। हे नरनाथ! अनन्तर देवराजने सवारी से चलनेके लिये अगस्त्य मुनिको पाया, तब अगस्त्यने सुरपतिसे कहा, हे सुरराज! मुझे जल्दी सवारीमें नियुक्त करो, मैं तुम्हें किस स्थानपर ले चलूं? हे देवराज! आप जहां कहो, वहां हो मैं आपको ले चलूंगा; नहुषने अगस्त्यका वचन सुनके उन्हें सवारीमें नियुक्त किया; भृगु उनके जटाजूटमें रहके अत्यन्त हर्षित हुए। वह महानुभाव नहुषके वर पानेका प्रभाव जानते थे, इसलिये उस समय उनके नेत्रके सामने नहीं हुए। नहुषने जब अगस्त्यको सवारीमें नियुक्त किया, तब भी वह उनपर क्रुद्ध नहीं हुए।

हे भारत! राजा नहुषने उन्हें कोड़ेसे मारा, उसपर भी वह धर्मात्मा क्रुद्ध न हुए, अनन्तर देवराजने क्रुद्ध होके उस समय अगस्त्यके सिर पर बाईं लात मारी। अगस्त्यके सिरपर लात मारनेसे उनके जटाके भीतर भृगुने अत्यन्त क्रुद्ध होकर उस पापबुद्धि नहुषको शाप दिया। रे नीचबुद्धिवाले! तूने क्रोधके वशमें होकर इस महामुनिके सिरपर लात मारी है, इसलिये शीघ्र ही सर्प होकर पृथ्वीमें जाओ। हे भरत र्षभ उस समय नहुष अगोचर भृगुके द्वारा इस प्रकार शापयुक्त होके पतित हुए। हे महाराज! यदि नहुष उस समय भृगुको देख लेते तो वह निज तेजसे उन्हें भ्रष्ट न कर सकते। हे महाराज! राजा नहुष पृथ्वीमें गिरके भी पूर्व्वोक्त धूप दीप प्रदान करने तथा तप-नियमसे सदाचार सम्पत्तिसे युक्त थे, वह शापके अन्त होनेके लिये भृगुको प्रसन्न करने लगे। हे महाराज! अनन्तर अगस्त्यने कृपायुक्त होके शापान्तके लिये भृगुको प्रसन्न किया; उन्होंने कृपालु होके शापान्तका नियम कह दिया।

भृगु बोले, युधिष्ठिर नाम एक वंशधर राजा होगा, वही तुम्हें शापसे मुक्त करेगा; इतना कहके भृगु अन्तर्द्धान हुए। महातेजस्वी अगस्त्य भी शतक्रतुका कार्य्य करके द्विजातियोंसे पूजित होके अपने आश्रमपर गये। हे महाराज! इस ही निमित्त नहुषका तुमने उद्धार किया है। हे प्रजानाथ! नहुष तुम्हारे द्वारा शापसे छूटके तुम्हारे सम्मुखमें ही ब्रह्मलोकको गये हैं। उस समय भृगु नहुषको पृथ्वीपर गिराके ब्रह्माके स्थानमें गये और उन्हें सब वृत्तान्त सुनाया। अनन्तर ब्रह्मा देवराजको बुलाके देवताओंसे बोले, हे देवगण! मेरे वरदानसे नहुषने देवराज्य पाया था; वह क्रुद्ध अगस्त्यके द्वारा भ्रष्ट होके पृथ्वीपर गया है। हे देवगण! राजाके बिना किसी स्थानमें कोई वास नहीं कर सकता; इसलिये पाकशासनको तुम लोग फिर देवराज्यपर अभिषिक्त करो। हे नरनाथ पार्थ! देवताओंने ब्रह्माका वचन सुनके अत्यन्त हर्षित होकर 'एवमस्तु' कहके उनकी बात स्वीकार की। हे नृपवर! इन्द्र भगवान् ब्रह्माके द्वारा देवराज्यपर अभिषिक्त होके पहलेकी भांति विराजमान हुए। नहुषके विषयमें व्यतिक्रम होनेसे पहले ऐसी घटना हुई थी, उन्हें पूर्व्वोक्त कर्म्मोंके सहारे पूरी रीतिसे सिद्धि प्राप्त हुई; इसलिये गृहमेधी पुरुषोंको सन्ध्याके समय दीपदान करना उचित है। दीपदान करनेवाला मनुष्य परलोकमें जाके दिव्यनेत्र पाता है। जबतक अक्षिनिमेष प्रकाशमान रहते हैं, उतने वर्ष पर्य्यन्त दीपदान करनेवाले पूर्णचन्द्रके समान स्वर्गमें विराजते हैं और दीपदान करनेवाले मनुष्य रूपवान तथा बलवान होते हैं।

१०० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ! जो नीचकर्म्म करनेवाले मन्दबुद्धि मूढ़ मनुष्य ब्राह्मणका धन हरते हैं, वे किस लोकमें जाते हैं?

भीष्म बोले, हे भारत! प्राचीन लोग इस विषयमें किसी क्षत्रिय और चाण्डालके सम्वाद-

युक्त पुराना इतिहास कहा करते हैं। ऋषी बोला, रे चाण्डाल ! तू बूढ़ा होनेपर भी बालककी भांति क्यों चेष्टा करता है ? तू कुत्ते और गधोंकी धूलिसे अवगुण्ठित होकर किसलिये गौओंको व्याकुल करता है ? साधु लोग चाण्डालके कार्य्यको अत्यन्त निन्दित कहते हैं। तू किसलिये खारबुन्दसे युक्त गौवोंको जलकुण्डके बीच कर रहा है ?

चाण्डाल बोला, हे राजन् ! पहले समयमें किसी ब्राह्मणकी गौवें हरी गई थीं, उनके स्तनसे गिरे हुए दूधने सोमरसको नष्ट किया था। ब्राह्मणोंने उस सोमरसको पिया और यज्ञ करनेवाले राजाने भी उन्हीं गौवोंके दूधसंयुक्त सोमपान करनेपर यज्ञ करानेवालोंके सहित उस ब्रह्मस्वको भोगनेसे नरकमें प्रवेश किया था। जिन ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा दूसरे मनुष्योंने उस गऊ हरनेवालेके गृहमें घी, दही वा दूध पीया था, वे सब कोई नरकमें डूबे। गौवें साधु व्यवहारसे पशुओंकी प्रतीक्षा करती, स्वामी और बछड़ोंके वियोगसे काँप रही थीं, वैसी दशामें जिसने उन्हें हरण किया था, उनके पुत्र पौत्र और दम्पती अल्पायु हुए। हे महाराज ! मैं ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर उस गऊ हरनेवाले मनुष्यके गृहमें निवास करता था। हे नरनाथ ! उन हरी हुई गौवोंकी धूलिसे मेरा भिक्षान्न विनष्ट हुआ था, हे नरनाथ ! मैंने वही गोरजसे युक्त अन्न खाया था, इसीसे मैं चाण्डाल हुआ और वह ब्रह्मस्व हरनेवाला राजा भी अप्रतिष्ठित हुआ इसलिये कभी किसी ब्राह्मणका धन हरना उचित नहीं है। ब्रह्मस्वके रजसे परिपूरित भिक्षान्न खाके मैं जैसा हुआ हूं, उसे देखिये। विपश्चित पुरुष कदापि सोम-विक्रय न करे, इस लोकमें सोमविक्रय करनेसे मनोषिवृन्द विशेष रीतिसे निन्दा किया करते हैं। हे तात ! जो लोग सोमरस बेचते हैं, तथा जो मनुष्य उसे मोल लेते हैं, वे सब कोई यमके समीप पहुंचके रौरव नरकमें पड़ते हैं। यह मत समझो, कि श्रोत्रिय ब्राह्मण अविधिपूर्व्वक ब्रह्मस्व संयुक्त सोमरस बेचके वार्द्धुषी अर्थात् व्याजजीवी होके शीघ्र नष्ट नहीं होता; वह तीस नरकमें भ्रमता हुआ विष्ठा भक्षण करता है। नीचसेवा, अभिमान और मित्रकी स्त्रीके साथ अत्याचार, इन तीनोंको ही तुलादण्डपर रखके तुल्य जाने, अभिमानी मनुष्य धर्म्मका अतिक्रम करनेसे अधिक पापी होता है अर्थात् अभिमानी मनुष्य नीचसेवी और मित्रकी स्त्री हरनेवालेसे अधिक पापी है। देखिये पापी कुत्ता विवर्ण और कृश होता है, कुत्ते सब प्राणियोंके विषयमें क्रुद्ध होके अभिमानसे ही ऐसी गतिको प्राप्त हुए हैं। हे विभु ! मैं दूसरे जन्ममें धनयुक्त बड़े कुलमें उत्पन्न होके ज्ञानविज्ञानसे युक्त हुआ था, उस समय इन दोषोंके विषयको जानके भी मैं अभिमानपूर्व्वक क्रुद्ध होके लोगोंका पृष्ठमांस भक्षण करता था। मैं उस ही चरित्र तथा वैसे भोजनसे ऐसी अवस्थामें पड़ा हूं; इसलिये समयका विपर्य्यय अवलोकन करो। मुझे तीक्ष्णतुण्डवाले भौरोंके झुण्डसे पीड़ित आदीप्त चेलान्तसदृश अत्यन्त संरब्ध होके दौड़ते हुए तथा रजोगुणसे युक्त देखिये। गृहमेधी मनुष्य स्वाध्यायपाठ तथा अनेक प्रकारके दानसे महत् पाप हरण करते हैं; पण्डित लोग जैसा कहा करते हैं, उसहीके अनुसार आश्रमस्थ पापी विप्रको वेद उद्धार करता है। हे क्षत्रियश्रेष्ठ भूपाल ! मैं पापयोनिमें पड़ा हूं, निश्चय नहीं कर सकता, कि किस प्रकार मुक्त हूंगा। हे महाराज ! मैं पूर्व्वजन्मके किये हुए किसी शुभकर्म्मसे जातिस्मर हुआ हूं, उस ही निमित्त मोक्षकी अभिलाष किया करता हूं। हे सत्तम ! आप मुझ शरणागत संशय जिज्ञासु पुरुषके ऊपर कृपा करके बताइये, मैं चाण्डालत्वसे किस प्रकार मुक्त हूंगा।

क्षत्रिय बोला, रे चाण्डाल! तू जिसके सहारे मोक्ष पावेगा, उस विषयमें प्रतिज्ञा कर, तू ब्राह्मणके निमित्त प्राणत्यागनेसे अभिलषित गति पावेगा। ब्राह्मणके निमित्त राक्षसोंको शरीर दान करके युद्धरूपी अग्निमें प्राण समर्पण करनेसे तुम्हें मोक्ष प्राप्त होगो, अन्यथाचरण करनेसे मोक्ष न होगी।

भीष्म बोले, हे शत्रुतापन! उस समय चाण्डालने उस क्षत्रियका ऐसा वचन सुनके ब्राह्मणके निमित्त युद्धमें मरके अभिलषित गति पाई थी। हे भरतश्रेष्ठ महाबाहो वत्स! यदि तुम शाश्वती गतिकी इच्छा करते हो, तो सदा ब्रह्मस्वकी रक्षा करना।

१०१ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! सुकृतशाली मनुष्य एक लोकमें ही निवास करते हैं, अथवा उस स्थानमें भी वे लोग पृथक् पृथक् लोकोंमें वास किया करते हैं। मेरे समीप आप यह विषय वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे पार्थ! मनुष्य निज कर्म्मके सहारे अनेक प्रकारके लोकोंमें गमन किया करते हैं, पुण्य करनेवाले पुरुष पुण्यलोकमें जाते हैं और पापी मनुष्य पापलोकोंमें जाते हैं। हे तात! प्राचीन लोग इस विषयमें इन्द्र और गौतम मुनिके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। गौतम नाम जितेन्द्रिय, मृदुस्वभाव, दम, शौच और व्रत करनेवाले किसी ब्राह्मणने वनके बीच मातारहित तथा अत्यन्त दुःखी एक हाथीके बच्चेको देखकर दयायुक्त होके उसे पालके जिला रखा था। हाथीका बच्चा बहुत समयके अनन्तर अत्यन्त बलवान और बड़ा हुआ। पर्व्वतसदृश उस महाहस्तीको देखके इन्द्रने धृतराष्ट्रका रूप धरके उस हाथीको ले लिया। महातपस्वी संशितव्रती गौतम उस हाथीको हरते हुए देखके राजा धृतराष्ट्रसे बोले, हे अकृतज्ञ धृतराष्ट्र! अत्यन्त कष्टसे पाले हुए मेरे इस पुत्रतुल्य हाथीको मत हरो। हे महाराज! साधुलोग सात पग बार्त्तालापसे ही मित्रता कहा करते हैं, इसलिये तुम्हें मित्रद्रोह स्पर्श न करे। यह हाथी यूथसे बिछुड़ कर मेरे आश्रममें निवास करके मुझे काष्ठ और जल ला देता है, यह आचार्य्यकुलमें अत्यन्त बिनीत, गुरुके कार्य्यमें रत, शिष्ट, धार्म्मिक, कृतज्ञ और सदा मुझे प्रिय है। हे महाराज! इसलिये मेरे इस प्रकार चिल्लाते रहनेपर तुम्हें हाथी हरना उचित नहीं है।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! मैं आपको एक हजार गऊ, एक सौ दासी, पांच सौ सुहर तथा और भी अनेक प्रकारका धन देता हूं, आप ब्राह्मण हैं, आपको हाथी लेनेसे क्या प्रयोजन है?

गौतम बोले, हे नरनाथ महाराज! गऊ, दासी और मुहरोंके सहित अनेक प्रकारके रत्न और बहुतसा धन तुम्हारे ही रहे, इस लोकमें ब्राह्मणोंको धनसे क्या प्रयोजन है।

धृतराष्ट्र बोले, हे विप्र! ब्राह्मणोंको हाथीसे सहार कुछ कार्य्य नहीं होता, हाथी क्षत्रियोंके ही चढ़नेके लिये हैं, इसलिये अपने चढ़नेके लिये इस श्रेष्ठ हाथीको लेजानेसे मुझे कुछ अधर्म्म नहीं है। हे गौतम! इसलिये आप इस कार्य्यसे निवृत्त हो।

गौतम बोले, हे महात्मन् जिस स्थानमें पुण्य कर्म्म करनेवाले प्रेत आनन्दित होते हैं और पापी प्रेत शोक किया करते हैं, उस ही यमके स्थानपर मैं तुमसे यह अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग क्रिया रहित, नास्तिक, श्रद्धावर्ज्जित, पापी और इन्द्रियोंके विषयोंमें फंसे हैं, वे ही यमयातना भोगते हैं, परन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, यमपुरी सब लोगोंको संयमन कारिणी है, जहांपर झूंठ नहीं कहा जाता,

केवल सत्य ही विराजता है, जहां निर्बल लोग बलवानोंको दुःखभोग कराते हैं, उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो मदमत्त मनुष्य जेठो बहिन और पितामाताके विषयमें प्रत्याचरण करते हैं, वैसे लोगोंके लिये यमपुरी बनी है, किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, कुबेरराजमें भोगियोंको प्रविष्ट करानेवाली महाभागा मन्दाकिनी नदी है, जिसको गन्धर्व अप्सरा और यक्षगण सदा सेवा किया करते हैं; उसी स्थानमें मैं निज फल-स्वरूप हाथीको तुमसे लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग सदा अतिथि और ब्राह्मणोंको आश्रय देते हैं तथा आश्रितोंको देकर शेषमें अन्नादि भोजन करते हैं; वेही मन्दाकिनीको विभूषित किया करते हैं, किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, सुमेरुके अग्रभागमें जो उत्तम रीतिसे फूला हुआ किन्नरी गीतसे युक्त वन विराजमान है और जहांपर सुदर्शन जामुनका विशाल वृक्ष विद्यमान है, उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना फल स्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो ब्राह्मण मृदुस्वभाव, सत्यशील और अनेक शास्त्रोंके जाननेवाले हैं, तथा जो सब प्राणियोंके मनोहर इतिहासके सहित पुराणोंको पढ़ा करते हैं, वा मधुआहुतिसे ब्राह्मणोंको प्रसन्न करते हैं। हे महर्षि! वैसे ही लोगोंके लिये ऊपर कहे हुए लोक बने हैं, परन्तु मैं वहां न जाऊंगा। इसलिये यदि आपको मेरे योग्य कोई स्थान मालूम हो तो बताइये, मैं वहां जाऊं?

गौतम बोले, सुन्दर फूलोंसे युक्त किन्नर-राजसेवित, देवर्षि नारद, गन्धर्व्व और अप्सराओंके लिये सदा प्रिय नन्दन नाम एक वन है, वहांपर मैं तुमसे अपना फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो मनुष्य नृत्य-गीत आदि विषयोंमें निपुण, अयाचक और सदा संहतियुक्त होके विचरते हैं यह लोक वैसे ही लोगोंके लिये बना है किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे नरेन्द्र! जहांपर उत्तर कुरुदेशवासी लोग देवताओंके सङ्ग सुख भोगते हैं। जहां अग्नियोनिज, जलयोनिज और पर्व्वत योनिज प्राणी निवास किया करते हैं, जहांपर इन्द्र अभिलषित विषयोंकी वर्षा करता है; जहां स्त्रियां कामचारिणी होती हैं, जहां नर-नारियोंमें परस्पर ईर्षा नहीं है, उसी स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो लोग सब जीवोंके विषयमें निवृत्तिकाम होके मांस भक्षण नहीं करते और न्यस्तदण्ड होके विचरते हैं, जो लोग स्थावर जङ्गम जीवोंकी हिंसा नहीं करते, जो सब जीवोंको आत्मवत्, आशारहित, निर्म्मल, रागहीन, हानि लाभ, स्तुति और निन्दाको समान जानते हैं, ऐसे ही लोगोंके लिये वह लोक बना है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, उससे श्रेष्ठ, पवित्र, सुगन्धयुक्त रजोगुण तथा शोकवर्ज्जित सनातन लोक महात्मा सोमराजके स्थानमें शोभित है, वहां ही मैं तुमसे निज फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो दानशील मनुष्य प्रतिग्रह नहीं करते तथा दूसरेसे धन नहीं लेते, पूज्य पुरुषोंके लिये जिनके निकट कुछ भी अदेय नहीं है, जो सबका ही आतिथ्य किया करते हैं; तथा जो लोग प्रसन्न, क्षमाशील हैं और लोगोंके समीप अपने दुःखको जल्पना नहीं करते, जीवोंके विषयमें आच्छादन स्वरूप होके सदा सबकी रक्षा किया करते हैं, तथा जो लोग पुण्यशील हैं, उन्हींके लिये यह लोक बना है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे महात्मन्! आदित्य लोकमें उस ही प्रकारके रज और तमोगुणसे रहित

शोकहीन सनातन लोक सुशोभित है, वहां भी मैं तुमसे निज फलस्वरूप हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे महर्षि! जो लोग स्वाध्यायशील गुरुसेवामें रत, तपस्वी, उत्तमव्रती, सत्यसन्ध, आचार्य्यके विषयमें अनुकूल वचन कहनेवाले, सदा उद्योगी और गुरुके कार्य्यमें सर्व्वदा स्वयं प्रवृत्त रहते हैं, वैसे ही वाग्यत तथा सत्यमें स्थित महात्माओंके लिये यह लोक विहित हुआ है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, हे महात्मन्! उसके अतिरिक्त और भी सनातन लोक वरुणराजके स्थानमें विराजमान हैं, वे लोक पवित्र, सुगन्धयुक्त, रजोगुणसे रहित और शोकहीन हैं; उस ही स्थानमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो मनुष्य सदा चातुर्म्मास्य याग किया करते हैं, जो लोग दस सौ यज्ञका फल पाते हैं; जो मनुष्य यथा समयमें स्नान करके श्रद्धापूर्व्वक तीन वर्ष अग्निहोत्रमें होम करते हैं, जो धर्म्मात्मा पुरुष धर्म्मभार उठानेके लिये उत्तम रीतिसे अपनी रक्षा किया करते हैं, जो लोग शास्त्रोक्त मार्गमें निवास करते हैं, उन्हीं महात्माओंको उक्त लोकमें गति प्राप्त होती है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, इन्द्रलोक रजोगुणसे रहित शोकहीन, दुरत्यय और मनुष्योंका अभिलषित है। हे महाराज! मैं अत्यन्त तेजसे युक्त इन्द्रलोकमें तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो शूर मनुष्य एक सौ वर्ष तक जीवित रहके अप्रमत्त होकर वेद पढ़ते तथा यज्ञ करते हैं, वेही इन्द्रलोकमें जाते हैं, किन्तु मैं वहांपर न जाऊंगा।

गौतम बोले, स्वर्गके ऊपर शोकहीन महत् पुष्कल प्राजापत्य लोक वर्त्तमान है, वह सबको ही अभिलषित है; इसलिये मैं उस ही स्थानमें तुमसे यह हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो राजा राजसूय यज्ञमें अभिषिक्त हुए हैं, जो धर्म्मात्मा प्रजाके रक्षक हैं, तथा जिन्होंने अश्वमेध यज्ञमें अवभृत् स्नान किये हैं, उन्हीं लोगोंके निमित्त प्राजापत्य लोक विहित है; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, इससे पवित्र, सुगन्धयुक्त, रजोगुणसे रहित शोकहीन सनातन गोलोक शोभित होरहा है, उस दुर्लभ अधर्षणीय गोलोकमें मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा।

धृतराष्ट्र बोले, जो दानशील मनुष्य प्रतिवर्षमें एक लाख गऊदान करते हैं, तथा जो लोग शक्तिके अनुसार एक हजार गोदान करते अथवा जो लोग इस लोकमें दस पुरुषोंको एक गऊ देते हैं, वा पांच पुरुषोंको एक गऊ दान किया करते हैं, तथा जो ब्रह्मचर्य्य व्रत करते हुए बूढ़े होते हैं, जो लोग सब भांतिसे वेदवाक्यकी रक्षा करते हैं, वे सब तीर्थयात्रा करनेवाले मनस्वी पुरुष गोलोकमें सस्त्रीक होके निवास किया करते हैं। प्रभास, मानस तीर्थ, पुष्कर, महत् सरोवर, पवित्र, नैमिष तीर्थ, बाहुदा, करतोया, गङ्गा, गयशिरा, विपाशा, स्थूलबालुका, कृष्णागङ्गा, पञ्चनद, महाह्रद गोमती, कौशिकी, पम्पा, सरस्वती, दृषद्वती और यमुना तीर्थमें जो सब व्रत करनेवाले महानुभाव मनुष्य जाके स्नान करते हैं, वेही गोलोकमें दिव्य शरीर धारण करके दिव्य मालासे विभूषित और पवित्र गन्धसे युक्त होके निवास करते हैं; किन्तु मैं वहां न जाऊंगा।

गौतम बोले, जिस स्थानमें शर्दी और गर्म्मीका कुछ भी भय नहीं है, जहां भूख प्यासकी ग्लानि और सुख दुःख नहीं होता, जहांपर कोई शत्रु, मित्र, बन्धु, द्वेषी वा प्रिय नहीं है; जहांपर जरा मृत्यु और पुण्य-पाप कुछ भी नहीं है, उस रजोगुणसे रहित निर्म्मल प्रकाशस्वमें स्थित पवित्र स्वयंभूके स्थानमें तुम मुझे हाथी प्रदान करोगे।

धृतराष्ट्र बोले, जो लोग सर्व्वसङ्ग रहित, कृत-

कृत्य, यतव्रती, अध्यात्म योग स्थापन करनेमें नियुक्त रहके स्वर्गमें गये हैं, वेही सतोगुणसे युक्तपुरुष पवित्र ब्रह्मस्थानमें गमन किया करते हैं। हे महामुनि! वहांपर आप मुझे न देखेंगे।

गौतम बोले, जहांपर बृहत् रथान्तर सामवेद गाया जाता है, जहां सफेद सरसिजके द्वारा सब वेदी शोभित हैं, जहांपर लोग घोड़ेके सहारे चन्द्रलोकमें गमन किया करते हैं, वहांपर मैं तुमसे अपना हाथी लूंगा। मैं यह जानता हूं, कि तुम वृत्रहन्ता इन्द्र सब लोकोंमें विचरते हो। मैंने मनके पराभववश कदापि वचनके सहारे तुम्हारा कुछ अपराध तो नहीं किया है?

इन्द्र बोले, मैं देवराज हूं, हाथीके अपवाद विषयमें प्रजासमूहके मार्गका अनुगमन किया है; इसलिये मैं प्रणत होता हूं; कहिये आपकी क्या आज्ञा है? आप जो कहेंगे मैं वह सब कार्य्य पूर्ण करूंगा।

गौतम बोले, हे सुरेन्द्र! मेरा श्वेतवर्ण दशवर्षीय बालक पुत्रस्वरूप जिस हाथीको तुमने हर लिया है, मेरे अकेले वनमें वास करनेपर जो हाथी द्वितीय हुआ था, आप मुझे वही हाथी दीजिये।

इन्द्र बोले, हे द्विजवर! वह तुम्हारा पुत्रस्वरूप हाथी तुम्हें देखकर आ रहा है, अपने सूण्डसे तुम्हारे दोनों चरण सूंघता है। मैं आपको प्रणाम करता हूं, इसलिये मेरे कल्याणके लिये चिन्ता करिये।

गौतम बोले, हे सुरेन्द्र! मैं सदा ही तुम्हारे कल्याणकी चिन्ता करता तथा सर्व्वदा तुम्हारी पूजा किया करता हूं। हे देवराज! आप भी मेरा कल्याण करिये, आपका दिया हुआ हाथी प्रतिग्रह करता हूं।

इन्द्र बोले, जिन सत्यवादी महानुभाव मनीषियोंके हृदयाकाशमें वेद स्थित है, उनके बीच आप ही एक मात्र महानुभाव हैं; तुम्हारे द्वारा सावधान होनेसे इस समय मैं तुमपर प्रसन्न हुआ हूं। हे विप्रवर! आप निज पुत्र कुञ्जरके सहित सदाके लिये शुभ लोक पानेके निमित्त शीघ्र ही चलिये। वज्रधारी इन्द्र पुत्रस्वरूप हाथीके सहित गौतमको सङ्ग लेकर साधुओंके दुरासद सुरलोकमें गये। जो लोग जितेन्द्रिय होके सदा इस कथाको सुनते वा पढ़ते हैं, वे गौतम ब्राह्मणकी भांति ब्रह्मलोकमें गमन किया करते हैं।

१०२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! आपने अनेक प्रकारके दानके विषय शान्ति, सत्य, अहिंसा और निज स्त्रीमें सन्तुष्टि तथा दान करनेसे जो फल होते हैं, उन्हें वर्णन किया; तपबलके अतिरिक्त और दूसरा आपको क्या विदित है? तपस्यासे श्रेष्ठ दूसरा क्या है? इसे आप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर! जबतक तपस्याकी कथा कही जाती है, तबतक लोक विश्रुत रहते हैं, मेरा यह मत है, कि अनशनसे बढ़के दूसरी तपस्या और कुछ भी नहीं है। प्राचीन लोग इस विषयमें ब्रह्मा और भगीरथके सम्वादयुक्त यह पुरातन इतिहास कहा करते हैं। हे भारत! मैंने सुना है, कि भगीरथ सुरलोक और गोलोकको अतिक्रम करके ऋषिलोकमें गये। ब्रह्माने उस भगीरथको देखके यह वचन कहा, हे भगीरथ! तुमने किस प्रकार इस दुरासद लोकमें आगमन किया? हे भगीरथ! देव, गन्धर्व्व और मनुष्यगण बिना तपस्या किये इस स्थानमें आनेमें समर्थ नहीं होते; इसलिये तुम किस प्रकार आये?

भगीरथ बोले, हे विद्वन्! मैंने सदा ब्राह्म-व्रत अवलम्बन करके सौ हजार निष्क, एक सौ आठ पलके परिमित सुवर्ण दान किया था, उसके फलसे इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक

रात्रिमें दश तथा पांच रात्रिसाध्य दश यज्ञ और ग्यारह रात्रिमें सिद्ध होनेवाले ग्यारह यज्ञ तथा एक सौ ज्योतिष्टोम यज्ञ किया था, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। मैंने जो एक सौ वर्षतक तपस्या करते सदा गङ्गाके तटपर निवास किया था, और उस ही स्थानमें एक हजार अश्वतरी तथा कन्याभवन प्रदान किये थे, उसके फलसे इस स्थानमें नहीं आया हूं। पुष्कर तीर्थमें द्विजातियोंको दश अयुत घोड़े और तीन अयुत गोदान किया था; चन्द्रमाकी भांति सफेद सुवर्णके आभूषण धारण करनेवाली साठ हजार उत्तम कन्या दान की थी; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे लोकनाथ! मैंने प्रति गो सव यज्ञमें एक एक ब्राह्मणको दश दश गऊ दान करते हुए बछड़ेयुक्त दूधवाली सुवर्णमय दोहनपात्रसे युक्त दश अर्बुद गऊ दान की है, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। सोमयागमें प्रत्येक ब्राह्मणको उत्तम व्यायी हुई दूध देनेवाली रोहिणी गऊ दान करते हुए सैकड़ों तथा सहस्रों गऊ दान की है। हे ब्रह्मन्! अन्तमें मैंने हर एक ब्राह्मणको एक एक सौ गऊ दान की थी, उसके फलसे यहांपर नहीं आया हूं। दश अयुत सुवर्ण मालायुक्त श्वेतवर्ण वाह्लिज घोड़े दान किये हैं, उसके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे ब्रह्मन! एक एक यज्ञमें प्रतिदिन अट्ठारह करोड़ स्वर्णमुद्रा दान किया है, उसके फलसे यहां नहीं आया। हे पितामह! हे ब्रह्मन्! मैंने काले हरे रङ्गवाले स्वर्णमालायुक्त सत्तरह करोड़ घोड़े और ईखसदृश दांतयुक्त बड़े शरीरवाले, सोनेकी मालासे विभूषित सत्तरह हजार हाथी दिये हैं। हे देवेश! सोनेके दिव्य आभूषणोंसे अलंकृत सुवर्णखचित दश हजार रथ दान किये हैं और वेदमें जो दक्षिणाके अङ्गरूपसे वर्णित हुए हैं, वैसे ही अलंकृत घोड़ोंसे युक्त रथ ब्राह्मणोंको दान दिये हैं, दस बार वाजपेय यज्ञमें पूर्व्वोक्त रथादि दिये गये हैं। यज्ञ और विक्रमके सहारे इन्द्रके सदृश प्रभावयुक्त सोनेकी सुन्दर गलेमें पहरनेवाले एक हजार राजाओंको दक्षिणामें दान दिया है। हे पितामह! मैं सब राजाओंको जीतके आठ राजसूय यज्ञ किये थे, उस हेतुसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे जगत्पति! मेरी दी हुई दक्षिणासे गङ्गाके सब स्रोत परिपूरित होगये थे, उस कारणसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक एक सौ स्वर्णमुद्रा भूषित दो दो हजार घोड़े और एक एक सौ उत्तम गांव मैंने हर एक ब्राह्मणको तीन बार दान किये थे, मैंने शान्ति अवलम्बन करके वाग्यत नियताहारी और तपस्वी होके हिमालयमें बहुत दिनोंतक गङ्गाकी उस दुस्सह धाराको धारण किया था, जिसे महादेवने सिरपर रक्खा; हे पितामह! मैं उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। पृथुबुध अर्थात् स्थूल और गोलाकार काष्ठदण्ड बलवान् पुरुषके द्वारा फेंके जानेपर जितनी दूरमें गिरता है, जिस यज्ञमें उतने ही परिमाणसे वेदी हुआ करती है, उसे शम्याक्षेप यज्ञ कहते हैं। हे देव! मैं उस ही शम्याक्षेप यज्ञ, पुण्डरीक और सद्यस्क नाम अयुत यज्ञ तथा बारह वा तेरह दिनोंमें पूर्ण होनेवाले यज्ञोंसे देवताओंकी पूजा की थी; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। मैं हर एक ब्राह्मणको आठ हजार ककुद्मी सोनेके सींगसे युक्त सफेद वृषभ दान किये हैं और उन्हें सुवर्णके कण्ठेसे युक्त गऊ भी प्रदान की हैं। सुवर्ण, रत्न, रत्नोंके पर्व्वत और धनधान्यसे युक्त एक एक हजार गांव दान किये हैं। निरालसी होके बहुतेरे महायज्ञोंमें देवताओंकी पूजा करके ब्राह्मणोंको एक एक सौ उत्तम व्यायी हुई गऊ दान किया है; उसके फलसे भी यहां नहीं आया हूं। हे देव! मैंने ग्यारह दिनमें दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ

किया और दो बार बारह दिनमें अश्वमेध यज्ञ तथा सोलह बार वाजपेय नाम यज्ञ किया है। हे ब्रह्मन्! इनके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। एक योजन लम्बा अत्यन्त चौड़ा रत्नविभूषित सुवर्णमय वृक्षोंसे युक्त वन दान किया है, उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। तीस वर्षतक क्रोधहीन रहके अनभिभवनीय उत्तरायणव्रत किया है, प्रतिदिन ब्राह्मणोंको नव सौ गोदान किया है। हे लोकनाथ सुरेश! मैंने सदा ब्राह्मणोंको बैल और दूध देनेवाली गऊ प्रदान की है; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे ब्रह्मन्! मैंसदा अग्निहोत्र करते हुए तीस वर्षतक निवास किया है। आठ सर्व्वमेध, सात नरमेध, एक हजार अठारह विश्वजित यज्ञ किया है। हे देवेश! उसके फलसे भी मैं इस स्थानमें नहीं आया हूं। सरयू, बाहुदा, गङ्गा और नैमिषक्षेत्रमें सौ अयुत गौ दान किया है; उसके फलसे भी इस स्थानमें नहीं आया हूं। हे वरेण्य! इन्द्रके हृदयाकाशमें तपस्याके द्वारा प्रवेश करकेशुक्रने जो कुछ प्राप्त किया था शुक्रके तेजसे जो इस लोकमें प्रकाशित है, मैंने उसे सिद्ध किया है, मेरे द्वारा वह कार्य्य सिद्ध होनेपर ब्राह्मण लोग मुझपर सन्तुष्ट हुए थे और उस ही स्थानमें एक हजार ऋषि इकट्ठे हुए थे। हे प्रभु! वे लोग मुझसे बोले, 'तुम ब्रह्मलोकमें जाओ।' एक हजार ब्राह्मणोंने प्रसन्न होके मुझसे ऐसा ही कहा है, इस ही निमित्त मैं इस स्थानमें आया हूं। इसलिये आप इस विषयकी चर्चा न करिये। हे सुरश्रेष्ठ! विधाताने जिसका विधिपूर्व्वक विधान किया है और मुझसे पूछा है, कि मुझे भी यथारीतिसे कहना योग्य है। मेरा यही मत है, कि उपवाससे बढ़के दूसरी कोई तपस्या श्रेष्ठ नहीं है। हे देव! मैं आपको प्रणाम करता हूं, आप मुझपर प्रसन्न होइये।

भीष्म बोले, जब राजा भगीरथने येह सब कथा कही, तब प्रजापति ब्रह्माने विधि विहित कार्य्यसे उस पूजने योग्य राजाकी पूजा की। इसलिये तुम अनशन व्रत अवलम्बन करके प्रतिदिन ब्राह्मणोंकी पूजा करो, ब्राह्मणोंके वचनसे इस लोकमें सब कामना सिद्ध होती हैं। वस्त्र, अन्न, गऊ और शुभस्थानके सहारे ब्राह्मण लोग देवताओंको सन्तुष्ट करनेवाले हैं, इसलिये लोभरहित होके इस परम गोपनीय विषयका अनुष्ठान करो।

१०३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! पुरुष शतायु तथा शतवीर्य्य होके जन्मता है, परन्तु बाल्य अवस्थामें भी मनुष्य किस कारणसे मृत्युके मुखमें पड़ता है? किस प्रकार मनुष्य आयुष्मान हुआ करता है और किसलिये अल्पायु होता है? किस भांति कीर्त्ति प्राप्त होती है और कैसे लक्ष्मी मिलती है? तपस्या ब्रह्मचर्य्य, जप, होम, औषध, कर्म्म, मन और वचन, इन सबके बीच किस कारणसे ऊपर कहे हुए कार्य्य हो सकते हैं? हे पितामह! मेरे समीप आप यही विषय वर्णन करिये।

भीष्म बोले, तुमने मुझसे जो प्रश्न किया है अर्थात् मनुष्य जिस प्रकार अल्पायु तथा दीर्घायु हुआ करता है, जिस भांति कीर्त्तिमान और लक्ष्मीयुक्त होता है तथा जिस प्रकार रहनेसे पुरुषका कल्याण होता है, वह विषय तुमसे कहता हूं। आचारसे ही पुरुषकी आयु बढ़ती है, आचारहीसे लक्ष्मीयुक्त होता है और आचारसे ही इस लोक तथा परलोकमें कीर्त्ति प्राप्त होती है। दुराचारी मनुष्यको इस लोकमें दीर्घायु नहीं मिलती; जिससे जीवोंको भय तथा परिभव प्राप्त होती है, उसे ही महान् दुराचारी कहा जाता है; इस ही लिये यदि पुरुष अपने हितकी अभिलाष करे, तो इस

लोकमें सदाचरण करे, सदाचरण पापयुक्त शरीरका भी कुलक्षण हर लेता है। आचार, लक्षण, धर्म्म और चरित्रसे साधु लोग जाने जाते हैं; साधुओंका चरित्र ही आचारका लक्षण है। सत्कर्म्म करनेवाले धर्म्मचारी पुरुषोंको बिना देखे ही लोक समाजमें सब कोई उनका नाम सुनते हैं, उन्हें प्रिय समझते हैं। जो लोग नास्तिक क्रियारहित पुरुष गुरु और शास्त्रका वाक्य उल्लङ्घन करते हैं, जो अधर्म्मी तथा दुराचारी हैं, वेही गतायु होते हैं। जो लोग दुःशील मर्य्यादा तोड़नेवाले, सदा सङ्कीर्णताके सहित मैथुन करते हैं, वे इस लोकमें अल्पायु होके मरनेके अनन्तर नरकमें गमन करते हैं, जो मनुष्य सब लक्षणोंसे रहित होके भी सदाचारी होता है, जो श्रद्धावान् और असूयारहित है, वह एक सौ वर्ष तक जीवित रहता है। जो अक्रोधी, सत्यवादी, जीवोंकी हिंसा न करनेवाला, अनसूय और कपटरहित है, वह एक सौ वर्षतक जीवित रहता है। जो मनुष्य ढेलोंको फोड़ता तिनका तोड़ता, नखवादी, उच्छिष्टभोजी और सदा अस्थिर चित्तवाला होता है, वह इस लोकमें दीर्घायु नहीं पा सकता। ब्राह्म मुहूर्त्तमें सावधान होवे और उस समय धर्म्म अर्थका विचार करे; उठके आचमन करके हाथ जोड़के पूर्व्वसन्ध्याकी उपासना करे। उदयशील सूर्य्यको न देखे और अस्त होते हुए भी दिवाकरको न देखना चाहिये, राहुग्रस्त, जलके बीच और आकाशके मध्यमें गये हुए सूर्य्यको देखना योग्य नहीं है। ऋषि लोग सदा सन्ध्यावन्दन करते हैं, इसीसे उन्हें दीर्घायु प्राप्त हुई है; इसलिये पूर्व्व और पश्चिम सन्ध्याके समय वाग्यत होके रहे। जो ब्राह्मण प्रातः और सायं सन्ध्या नहीं करते, धार्म्मिक राजा उनसे शूद्रोंका कार्य्य करावे सत्पुरुषोंके बीच कदापि पराई स्त्री गमन करना उचित नहीं है; पुरुषके लिये जैसा परस्त्री गमन आयुका नाशक है, लोकमें वैसा अनायुष्य और कुछ भी नहीं है। स्त्रियोंके शरीरमें जितने रोम हैं, परस्त्री गामी पुरुष उतने ही सहस्र वर्ष तक नरकमें निवास करता है। केश संवारना अञ्जन लगाना, दांत धोना और देवताओंकी पूजा पूर्व्वाह्णमें ही करनी योग्य है मल-मूत्र न देखे और कदापि वहां निवास न करे। अत्यन्त भोर, मध्यान्ह और सन्ध्याके समय मल-मूत्र परित्याग न करे, अनचीन्हे पुरुषके सङ्ग न चले, अकेले अथवा चाण्डालके सहित मार्गमें चलना उचित नहीं है। दूसरेका पहरा हुआ वस्त्र और पादुका न पहरे; सदा ब्रह्मचारी होवे पांवसे पांवका आक्रमण न करे, ब्राह्मण, गऊ, राजा, वृद्ध, बोझा ढोनेवाले, गर्भिणी स्त्री और निबल पुरुषको देखके उन्हें जानेके लिये मार्ग देवे। विख्यात वनस्पतियोंकी प्रदक्षिणा करे, चौराहोंकी प्रदक्षिणा करनी उचित है। मध्यान्ह रात्रि, विशेष करके आधी रात, सन्ध्या और भोरके समय चौराहे पर न जावे। अमावस्या पूर्णमासी, दोनों पक्षकी चतुर्दशी और अष्टमीमें सदा ब्रह्मचर्य्य करे। वृथा मांस भक्षण न करे और पृष्ठमांस खानेसे विरत होवे; आक्रोश, परिवाद और चुगलखोरी न करनी चाहिये। किसीके ऊपर गुस्सा न करे, निठुर वचन न कहे; नीच पुरुषसे श्रेष्ठ द्रव्य लेना अनुचित है। जिस बातसे दूसरा पुरुष घबड़ाय, वैसी पापयुक्त अकल्याणकारी बात न कहे। जो वाक्यवाण मुखसे बाहर होते हैं, उससे घायल हुए पुरुष रात दिन शोक करते हैं, वे वाक्यरूपी वाण मनुष्योंके मर्म्मस्थलके अतिरिक्त और कहीं नहीं लगते; इसलिये पण्डित पुरुष वैसे वाक्य वाणोंको न चलावे। वाणविद्ध और परशुसे कटा हुआ वन फिर अङ्कुरित होता है, किन्तु जो मर्म्मभेदी वचनसे घाव होता है, वह फिर पूरित नहीं होता। कर्णि, नालीक और वाण शरीरसे निकाल

जाते हैं, परन्तु हृदयमें लगे हुए वाक्यवाणको निकालनेमें किसीको सामर्थ नहीं होती। हीन अङ्गवाले अत्यन्त विकलाङ्ग, निन्दनीय, विद्या-रूप और धनसे रहित तथा निर्बल पुरुषकी निन्दा न करे। नास्तिकता, वेद और देवता-ओंकी निन्दा, द्वेष, दम्भ, अभिमान तथा तीक्ष्णता परित्याग करे। दूसरेके ऊपर दण्ड न चलावे, क्रुद्ध होके दूसरेके ऊपर प्रहार न करे, केवल पुत्र और शिष्यको शिक्षाके निमित्त ताड़न करनेमें कोई बाधा नहीं है। ब्राह्म-णोंकी निन्दा और नक्षत्र निर्देश न करे, पक्ष-सम्बन्धीय तिथि न कहे, तो आयु नहीं घटती। मलमूत्र त्यागने, मार्गसे आने, वेदपाठ और भोजनके समय पैर धोवे। देवताओंने ब्राह्म-णोंके लिये तीन विषयोंको पवित्र रूपसे कल्पना किया है, अदृष्ट जल प्रक्षालन तथा जो वचनके द्वारा उत्तम होता है संयाव (घृत-दूधसे बना हुआ पिष्टक कृशर) तुल्य तिलान्न, मांस, पूरी और पायस अपने ही लिये न बनावे, देवताओंके उद्देश्यसे प्रस्तुत करे। सदा अग्निकी परिचर्य्या करे, प्रतिदिन भिक्षा देवे और वाग्यत होके नित्य दतून करे, सूर्य्य उदय होनेपर सोता न रहे, सूर्य्य उदय होनेपर सोनेवाला मनुष्य प्राय-श्चित्त करनेके योग्य होता है। उठके पहले मातापिताको प्रणाम करे, अनन्तर आचार्य्य और दूसरे गुरुजनोंकी वन्दना करे, तो दीर्घायु प्राप्त होती है। दतून करके उसे त्याग देवे, वह सदा ही त्यागने योग्य है। उत्तर ओर मुख करके समाहित होकर शौचकार्य्य करे, बिना दतून किये देवपूजा न करे और बिना देवपूजा किये कदापि गुरु, वृद्ध, धार्म्मिक तथा पण्डि-तोंके अतिरिक्त दूसरे किसी स्थानमें न जावे। बुद्धिमान मनुष्य मलिन आरसी न देखे, अन-चीन्ही स्त्रीके निकट कदापि न जावे और गर्भिणी स्त्री गमन करना अनुचित है। उत्तर और पश्चिम ओर सिर करके न सोवे, बुद्धिमान मनुष्य पूर्व्व और दक्षिण ओर सिर करके शयन करे। टूटी फटी शय्यामें सोना अनुचित है अत्यन्त अन्धेरे स्थान, नारीयुक्त शयनगृहमें और उलटा होके कदापि न सोवे, कार्य्य वा समय वशसे कदाचित नास्तिकके निकट न जावे; पांवसे आसन आकर्षण करके मनुष्य उसपर न बैठे। वस्त्रहीन होके नदी प्रभृति अथवा रात्रिके समयमें कदापि स्नान न करे, बुद्धिमान मनुष्य स्नान करनेके अनन्तर शरीर मार्जन न करे; बिना स्नानके अनुलेपन विहित नहीं है, स्नानके अनन्तर वस्त्र धोना अनुचित है। मनुष्य सदा भींगे वस्त्रको न पहरे, गलेसे स्वयं माला निकालके फेंकना योग्य नहीं है, बाहिरी हिस्सेमें माला न धारण करे। रजस्वला स्त्रीके सङ्ग कदापि वार्त्तालाप न करे, खेत और गांवके समीप मलत्याग न करे, जलमें मल मूत्रका त्यागना वर्जित है। अन्न भोजनकी इच्छा करनेवाला मनुष्य मुखमें तीनबार जल स्पर्श करे; अन्न भोजन करके उसी भांति तीनबारके अनन्तर फिर दो बार मुंह धोवे। प्रतिदिन पूर्व्व ओर मुंह करके चुप होकर अन्नकी निन्दा न करके भोजन करे। भोजन करके किञ्चित शेषान्न छोड़ दे और भोजनके अनन्तर मनहीमन अग्नि स्पर्श करे परमायु बढ़नेकी इच्छासे पूर्व्व ओर मुंह करके भोजन करे; यशकी कामनासे दक्षिण ओर मुंह करके भोजन करे, धन प्राप्तिकी इच्छासे पश्चिम ओर मुंह करके भोजन करना चाहिये और कल्या-णकी इच्छावाले मनुष्य उत्तर ओर मुंह करके भोजन किया करते हैं। अग्नि स्पर्श करके जलसे नासिका प्रभृति ऊर्द्ध छिद्र शरीर, नाभि और करतल धोवे तुष, केश, राख और कपा-लिकाके ऊपर कदापि न बैठे, दूसरेके नहानेका जल दूरसे ही परित्याग करे, शान्ति और होम करे, तथा गायत्री मन्त्र जपै, बैठके भोजन करे, चलते कदापि न खावे। खड़ा होकर

पेशाब न करे, भस्म और गोस्थानमें पेशाब न करना चाहिये। भीगे पांवसेयुक्त होके न सोवे पांव धोके भोजन करे, जो लोग पैर धोकर भोजन करते हैं, वे एक सौ वर्षतक जीवित रहते हैं। जूठे रहके अग्नि, ब्राह्मण और गऊ इन तीनों तेजस्वियोंको कदापि न छूवे, छूनेसे आयु नष्ट होती है। सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र इन तीनों तेजस्वियोंको जूठे रहके कदापि न देखना चाहिये। बूढ़े पुरुषके सम्मुख आनेपर युवा पुरुषोंके प्राण ऊपरको उठते हैं, उठके प्रणाम करनेसे वेही प्राण फिर निजस्थानमें स्थापित हुआ करते हैं। बूढ़ोंको प्रणाम करे और उन्हें स्वयं आसन देवे, हाथ जोड़के उनके सामने खड़ा रहे, जब वे चलने लगें, तो उनके पीछे पीछे चले। कटे फटे आसनपर न बैठे कांसेका पात्र परित्याग करे, एक वस्त्र होकर भोजन न करे, वस्त्ररहित होके स्नान करना उचित नहीं है। वस्त्रहीन होके न सोवे, जूठे रहके सोना न चाहिये; जूठा रहके सिर न छूवे, क्यों कि समस्त प्राण सिरकाही अवलम्बन करके रहते हैं; केश ग्रहण न करे, शिरमें प्रहार न करे और दोनों हाथोंसे सिर न खुजलावे, बार बार सिरपर जल डालके स्नान न करे, इन कार्य्योंके करनेसे आयु नष्ट होती है। सिरमें तेल मलके दूसरे अङ्गको स्पर्श न करे; तिलसंयुत भ्रष्ट वस्तु न खावे; जो लोग इन कार्य्योंको करते हैं, उनकी परमायु नष्ट होती है। जूठा रहके कदापि न पढ़ावे और पढ़ना भी अनुचित है। वायुयुक्त तथा दुर्गन्धित स्थानका मनसे भी ध्यान न करे; इतिहास जाननेवाले पण्डित लोग इस विषयमें यमकी कही हुई गाथा वर्णन करते हैं,—"जो पुरुष जूठे मुहसे चलता और स्वाध्याय पाठ करता है, मैं उसकी आयु नष्ट करता तथा उसके पुत्रोंको ग्रहण किया करता हूं।" जो ब्राह्मण अनध्यायके समय मोहवशसे वेदाभ्यास करता है, उसके वेद विनष्ट होते और आयु क्षीण होजाती है; इसलिये अनध्यायके समय कदापि न पढ़े। सूर्य्य, अग्नि, गऊ और ब्राह्मणके सम्मुख जो लोग मलमूत्र फेंकते हैं, वे गतायु होते हैं। दिनमें उत्तर ओर और रात्रिमें दक्षिण ओर मुह करके मलमूत्र परित्याग करनेसे आयु नहीं घटती। जो जीवित रहनेकी इच्छावाले मनुष्य दीर्घायुकी आशा करते हैं उन्हें उचित है, कि वे ब्राह्मण, क्षत्रिय और सर्पको निबल जानके अवज्ञा न करें, क्यों कि ये तीनों ही आशीविष स्वरूप हैं। जैसे सर्प नजरसे देखकर जलाया करता है, वैसे ही जब क्षत्रिय क्रुद्ध होके देखता है, तो उस ही समय तेजके सहारे भस्म करता है; ब्राह्मण क्रुद्ध होनेपर ध्यान और नजरके सहारे तत्क्षण ही वंशनाश करता है; इसलिये पण्डित लोग यत्नपूर्व्वक इन तीनोंकी सेवा करे। हे युधिष्ठिर! गुरुके साथ कभी शत्रुता न करना चाहिये, गुरुके क्रुद्ध होनेपर उनको मान्य तथा उन्हें प्रसन्न करना योग्य है। गुरुके मिथ्या प्रवृत्ति होनेपर भी पूरी रीतिसे उनके समीप उपस्थित रहना उचित है। गुरुनिन्दा निःसन्देह मनुष्योंकी आयु हरती है, हितपी मनुष्य आश्रमके बाहर पेशाब करे और हाथ पैर धोवे; दूर जाके जूठ फेंके। पण्डित लोग कमल और कुवलयके अतिरिक्त दूसरे लाल रङ्गके फूलोंकी माला न पहरें, पण्डितोंको सफेद फूलोंकी माला पहरनी उचित है। लालरङ्गके फूल तथा वानेय पुष्पोंको सिरपर रखना योग्य है, काञ्चन पुष्पकी माला पहरनेमें कदापि कुछ दोष नहीं होता।

हे नरनाथ! स्नात पुरुषको सदा आर्द्र वर्णक दान करे, बुद्धिमान मनुष्य दोनों वस्त्रोंको उलट फेर न करे अर्थात् धोतीको दुपट्टा और दुपट्टाकी धोती बनाना अनुचित है। हे पुरुषश्रेष्ठ! दूसरेके पहरे हुए तथा

दशाहीन वस्त्रको पहरना योग्य नहीं है, शय्या और वस्त्र स्वतन्त्र होना चाहिये, मार्गमें चलनेके समय पृथक् वस्त्र और देवपूजाके समय पृथक् वस्त्र पहरना योग्य है। बुद्धिमान् मनुष्य प्रियङ्गु, चन्दन, बेल तथा तगरसे अनुलेपन करके केशरसे पृथक् अनुलेपन करे। स्नात, शुचि और अलङ्कृत होके ब्रह्मचर्य्य करे, सब पर्व्वोंमें ब्रह्मचारी होके रहे। हे प्रजानाथ! एक पात्रमें दो मनुष्य समान अन्न भोजन न करें और रजस्वलाके हाथसे बना हुआ भोजन करना अनुचित है। जिसका सारपदार्थ निकाला गया हो, वैसी वस्तु न खावे और भोजनके समयमें यदि कोई देखता रहे, तो उसे भोजनकी वस्तु बिना दिये भोजन करना विहित नहीं है। साधुओंके समीप मेधावी मनुष्य अपवित्र होके अन्न भोजन न करे, श्राद्धादिक प्रतिषिद्ध वस्तुओंको श्राद्धके अभावमें भक्षण करना अनुचित है; कल्याणकी इच्छा करनेवाले श्रेष्ठ पुरुष पीपल, बट, शणशाक और उडुम्बर न खावे। बकरीका दूध और मयूरका मांस त्याग देवे, सूखा मांस और बासी अन्न त्यागने योग्य है। विद्वान् पुरुष हथेलीमें और रात्रिके समय नमक, दही, शक्कर, सत्तू न खाय, वृथा मांस खाना उचित नहीं है। समाहित पुरुष सन्ध्या, सबेर और समयके शेषमें भोजन न करे, केशयुक्त अन्न आदि न खाना चाहिये और शत्रुके श्राद्धमें भोजन करना अनुचित है। वाग्यत होके एक वस्त्र पहरके और बिना बैठे कदापि भोजन न करे, सदा भूमिमें बैठके भोजन न करे, भोजन करनेके समय चुप रहे। हे नरनाथ! बुद्धिमान मनुष्य अतिथियोंको पहले जल देके, तब अन्न दान करे, अनन्तर एकाग्रचित्त होकर स्वयं भोजन करे, हे महाराज! एक पांतमें बैठे हुए सुहृदोंको समभावसे बिना भोजन कराये जो पुरुष स्वयं भोजन करनेमें प्रवृत्त होता है वह हलाहल विष खाता है। जल, सत्तू, पायस, दूध, दही, घृत और मधु खाके उसका शेषभाग पुत्रादिके अतिरिक्त दूसरे लोगोंको न देवे। हे पुरुषश्रेष्ठ! मनुष्य भोजन करते समय भोज्यवस्तु परिपक्व होगी, वा नहीं, ऐसी शङ्का न करे; परिपक्व होनेके निमित्त छाछ पीये, आचमन करके एक हाथसे दाहिने पांवके अङ्गूठेके जलसे धोवे, सिरपर हाथ रखके अग्निको स्पर्श करके जो लोग समाहित होते हैं, व्यवहारमें निपुण उन मनुष्योंको स्वजनोंके बीच श्रेष्ठता प्राप्त होती है। जलसे प्राण स्थित करके नाभि और पाणितल स्पर्श करके प्रस्थान करे, भीगे हाथसे स्पर्श न करे, अङ्गूठेके नीचे ब्राह्मतीर्थ कही गई है और कनिष्ठा अङ्गुलीके नीचे देवतीर्थ वर्णित हुई है। हे भारत! अंगूठा और तर्जनी अङ्गुलीके मध्यभागके सहारे जल स्पर्श करके दूसरेका अपवाद न करे कदापि अप्रिय वचन न कहे, मङ्गलकी कामना करनेवाला मनुष्य किसी भांति क्रोध न करे। पतित पुरुषोंके साथ वार्त्तालाप न करे, उसे देखना न चाहिये और उसका सङ्ग न करे, तो दीर्घायु प्राप्त होती है। दिनमें मैथुन न करे, कन्या, रजस्वला और व्रती स्त्री गमन न करे, इन नियमोंका प्रतिपालन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। निज निज तीर्थोंमें आचमन करके पूरी रीतिसे उपस्थित कार्य्योंमें तीनबार जलसे मुख धोके दो बार कुल्ला करनेसे मनुष्य पवित्र होता है। पुरुष एक बार सारी इन्द्रियोंको स्पर्श करते हुए तीन बार आचमन करके वेदविहित कार्य्योंके सहारे देव और पितृकर्म करे। हे कुरुनन्दन! ब्राह्मणोंके लिये जो शौचाचार विहित हुआ है और भोजनके पहले तथा शेषमें जो पवित्र और हितकर है, वह भी सुनो। सब प्रकारके शौचकार्य्योंमें ब्राह्मतीर्थके द्वारा जल स्पर्श करे, मल त्यागने और क्षौर-

आर्थ्य करानेपर जल स्पर्श करके पवित्र होवे, वृद्धों, स्वजनों और मित्रोंके दरिद्र होनेपर उन्हें निज गृहमें रक्खे ; ऐसा करनेसे धन और आयुकी वृद्धि होती है। कबूतर तथा शुकशारिका प्रभृतिके गृहमें रहनेसे समृद्धि हुआ करती है ; ये तथा तैलपायिका प्रभृति गृहमें रहनेसे अनिष्टके कारण नहीं होती, बल्कि अभ्युदयकी हेतु हुआ करती हैं। उद्दीपनकारी गिद्ध वनके कपोत और भौंर यदि गृहके बीच सहसा प्रविष्ट हों, तो उस समय शान्ति अवलम्बन करे ; ये सब कार्य्य तथा महात्माओंके विषयमें आक्रोश प्रकाश करना अमांगलिक है, महात्माओंके अत्यन्त गोपनीय विषयको किसी स्थानमें कहना उचित नहीं है। हे युधिष्ठिर ! अगम्या स्त्रीगमन न करे ; राजपथमें, वृद्ध बालक और वैद्यकी स्त्री, सखी, सेवककी भार्य्या, वधु, ब्राह्मणी, शरणागत पुरुषकी स्त्री और सम्बन्धियोंकी स्त्रियोंसे रमण करना अनुचित है ; हे राजेन्द्र ! इन सब विषयोंका पालन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। हे नरनाथ ! ब्राह्मण तथा ज्योतिषियोंकी सम्मतिके द्वारा जो स्थान बनाया जाय, कल्याणकी इच्छा करनेवाला मनुष्य सदा उसहीमें वास करे। हे महाराज ! मधावी मनुष्य सन्ध्याके समय न सोवे तथा विद्याभ्यास और भोजन न करे ; इन नियमोंके पालनेसे मनुष्य दीर्घायु होता है। रात्रिके समय पितृकार्य्य न करे और भोजनके अनन्तर केश सवारना अनुचित है,–जो लोग ऐश्वर्य्यकी इच्छा करते हैं, उन्हें रात्रिमें स्नान आदि जलक्रिया न करनी चाहिये। हे भारत ! रातके समय सत्तू खाना वर्ज्जित है, भोजनके समय शेषान्न निर्म्मल होनेपर भी जलमें न छोड़े। जबतक एक मनुष्य तृप्त न होजाय, तबतक दूसरे पुरुषको भोजन कराना उचित नहीं है ; रात्रिके समय निज अन्नको भोजन करनेमें उत्तम आचरण न करे। पक्षियोंको मारना उचित नहीं है, पक्षिमांस खावें, परन्तु स्वयं न मारके मोल लिया हुआ मांस भक्षण करे। अत्यन्त प्राज्ञ पुरुष महत कुलमें उत्पन्न हुई श्रेष्ठ लक्षणयुक्त यथायोग्य अवस्थावाली कन्याके साथ विवाह करनेके योग्य होगा। हे भारत ! अनन्तर पुत्र उत्पन्न करके वंश स्थापित करते हुए उन्हें ज्ञान और कुलधर्म्म सिखानेके लिये विद्वान् पुरुषके निकट समर्पण करे और कन्या उत्पन्न होनेके अनन्तर सद्वंशमें उत्पन्न हुए बुद्धिशक्तिसे युक्त पात्रको दान करे, पुत्रोंको भी सत्कुल सम्बन्धमें व्याह करे, मनुष्य जिस नक्षत्रमें जन्मा है, उसमें पूर्व्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका और स्वाती नक्षत्र छोड़के नवसे भाग करनेपर जो तारा पञ्चमी होवे, उस प्रत्यरि नक्षत्र तथा दारुण नक्षत्रोंमें देव और पितृकर्म्म न करे। हे भारत ! ज्योतिष शास्त्रमें ये सब विषय कहे गये हैं ; पूर्व्व और उत्तर ओर मुंह करके समाहित होकर क्षौरकार्य्य करावे। हे राजेन्द्र ! ऐसा आचरण करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। अपना तथा दूसरेका अपवाद न करे, हे भरतश्रेष्ठ ! ऐसा वर्णित है, कि परिवाद अधर्म्मका हेतु हुआ करता है। हे पुरुषोत्तम ! न्यूनाङ्गी स्त्री और कन्याका परित्याग करे, तुल्य प्रवर, विरूद्धाङ्गी, अधिकाङ्गी, मातृकुलमें उत्पन्न हुई, वर्षीयसी, प्रव्रजिता, पतिव्रता, निकृष्टवर्णा और श्रेष्ठ वर्णवाली कन्या परिवर्ज्जन करे। बुद्धिमान् मनुष्य कुलशीलको बिना जाने तथा हीन कुलमें उत्पन्न हुई स्त्रीके सङ्ग रमण न करे। तुम्हें पिङ्गल वर्णवाली और कुष्ट रोगग्रस्त स्त्रीगमन करना योग्य नहीं है। हे नरनाथ ! अपस्मार युक्त पुरुषके गृहमें जो कन्या उत्पन्न हुई, जो कन्या श्वित्ररोगयुक्त पुरुषके कुलमें उत्पन्न हुई हो तथा जो कन्या अत्यन्त हीन कुलमें जन्मी हो उसे ग्रहण न करे। जो कन्या सुल-

रूप तथा श्रेष्ठ लक्षणोंसे युक्त हो, मनोहर और दर्शनीय हो उसके साथ तुम विवाह कर सकते हो। हे युधिष्ठिर! महत् वंश तथा सद्वंशकुलमें विवाह करना योग्य है, ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्य हीनवर्णवाली और पतित स्त्रीको ग्रहण न करे। यत्नपूर्व्वक तीनों अग्नि उत्पन्न करके वेदमें जो सब क्रिया वर्णित हुई है, ब्राह्मणोंके द्वारा उनका अनुष्ठान करे। स्त्रियोंके विषयमें ईर्षा न करनी चाहिये, स्त्रियोंकी सब प्रकारसे रक्षा करनी उचित है; स्त्रियोंके विषयमें ईर्षा करनेसे आयु घटती है, इसलिये ईर्षा न करनी चाहिये, दिनका तथा भोरका सोना आयुको घटाता है, जो लोग रात्रिके प्रथमभागमें सोते तथा जूठे रहके निद्रित होते हैं, वे अल्पायु होते हैं। परनारी हरनेसे आयु घटती है, क्षौरकर्म कराके स्नान न करनेसे आयुकी ह्रास हुआ करती है। हे भारत! सन्ध्याके समय भोजन, अध्ययन और स्नान न करना चाहिये; उस समय ध्यानयुक्त होवे और वक्र कार्य्य न करे। हे भारत! स्नान करके ब्राह्मणोंकी पूजा करे, व्रती होकर देवपूजा करे और गुरुजनोंको प्रणाम करे। हे भारत! विना निमन्त्रित हुए पुरुष कहीं न जावे, केवल यज्ञस्थल देखनेके लिये जा सकता है, जाके सत्कृत न होनेसे आयु क्षीण होती है। एक पुरुषके साथ देशान्तरमें जाना उचित नहीं है और रात्रिके समय मार्गमें चलना अनुचित है, सन्ध्या न होते ही गृहमें आके निवास करना चाहिये। माता, पिता और गुरुजनोंकी आज्ञा माननी उचित है। उनके उपदेशसे चाहे भलाई हो वा बुराई होवे किसी भांति उसमें विचार करना उचित नहीं है। हे भारत! धनुर्व्वेद, वेदपाठ, हाथी और घोड़ोंकी पीठपर चढ़ने और रथ हांकनेके विषयमें यत्न करना योग्य है। हे राजेन्द्र! तुम्हें यत्नवान होना चाहिये, यत्नवान मनुष्य सुखी होता है और शत्रुओं सेवकों तथा स्वजनोंके विषयमें अनभिभवनीय हुआ करता है, प्रजा पालनेमें नियुक्त रहके कहीं भी क्षतिग्रस्त नहीं होता। हे भरतकुलवर्द्धन नरनाथ! तुम्हें युक्तिशास्त्र, शब्दशास्त्र, गन्धर्व्व और नृत्यगीतादि विद्या जाननी योग्य है; पुराण, इतिहास, आख्यान और महानुभाव मनुष्योंमें चरितोंको सदा सुनना उचित है। बुद्धिमान मनुष्य रजस्वला स्त्रीके निकट न जावे और उसे आवाहन भी न करे, चौथे दिन ऋतुस्नात स्त्रीके निकट जावे; पांचवें दिनमें कन्या और छठे दिनमें पुत्र जन्मता है, पण्डित पुरुष इसही विधिके अनुसार भार्य्याके निकट जाय। स्वजन, सम्बन्धी और मित्रगण सब भांतिसे पूजनीय हैं। शक्तिके अनुसार विविध दक्षिणायुक्त यज्ञसे देवताओंकी पूजा करना चाहिये। हे नरनाथ! इसके अनन्तर वनवासी होना उचित है। हे युधिष्ठिर! मैंने तुम्हारे निकट आयुष्कर लक्षणोंको संक्षेपमें कहा है, अवशिष्ट लक्षणोंको तीनों वेदोंके जाननेवाले पण्डितोंके समीप मालूम करना। आचारसे ऐश्वर्य्य होता है, आचारही कीर्त्तिको बढ़ाता है, आचारसे ही आयु बढ़ती है, आचारही अलक्षणोंको हरता है, सब शास्त्रोंमें आचार ही श्रेष्ठरूपसे वर्णित हुआ है। आचारसे ही धर्म्म होता है, धर्म्मसे ही परमायुकी वृद्धि हुआ करती है। ब्रह्माने सब आगमोंके विषयमें कृपा करके यह यशदायक, आयु बढ़ानेवाला और स्वर्ग-सुखकर महत् स्वस्त्ययन कहा है।

१०४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! जेठा भाई कनिष्ठ सहोदरोंके सङ्ग जैसा व्यवहार करे और कनिष्ठोंका जैसा आचरण करना योग्य है, वह विषय आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे तात! तुम ज्येष्ठकी भांति सदा व्यवहार करते हो, क्योंकि तुम ही जेठे

हो। हे भारत! गुरुके विषयमें शिष्योंको जैसा व्यवहार करना योग्य है, अकृतप्रज्ञ गुरुके निकट शिष्यगण उस प्रकार उपस्थित नहीं रह सकते। हे भारत। गुरुके लिये जैसी दीर्घ दर्शिता होनी चाहिये शिष्योंको भी वैसी ही दूरदर्शिताकी आवश्यकता होती है। गुरुके दोष देखनेके समय अन्धा होवे, अर्थात् जड़ होके रहे उसमें यदि कुछ व्यतिक्रम रहे, तो उस विषयको टालके अन्य वार्त्ता करे। हे कौन्तेय! शत्रुगण भ्रातृभेदकी इच्छा करते हैं उनकी श्री देखकर उनका हृदय विदीर्ण होता है, इसलिये वे भाइयोंमें फूट कराइते हैं। ज्येष्ठ चाहे वंशकी वृद्धि करे अथवा कुलका नाश करे; वह सब कुछ विनष्ट कर सकता है, क्यों कि उसहीसे वंशकी उत्पत्ति होती है। जो ज्येष्ठ भ्राता कनिष्ठोंको ठगता है, वह जेठा नहीं है, वह अंशभागी नहीं होसकता, राजाओंको योग्य है, कि वैसे जेठेको शासित करें। अवज्ञक मनुष्य निःसन्देह पापलोकोंमें जाता है, ऐसा वर्णित है, कि बेतसके पुष्प सदृश पिताका वैसा पुत्र निरर्थक ही है। जिस वंशमें पापी मनुष्य जन्म लेता है, वहां सब अनर्थ हुआ करते हैं, वह अकीर्त्ति उत्पन्न करके कीर्त्ति लोप करता है। कुकर्म्मी सहोदरगण पैतृक अंश ग्रहण करनेके योग्य नहीं होते कनिष्ठोंको बिना हिस्सा दिये जेठा भाई कदापि दायविभाग न करे। प्रवासी पुरुष पैतृक धनमें हस्तक्षेप न करके निज अङ्गाश्रमसे उत्पन्न हुआ फल पाता है, अकाम मनुष्य स्वयं समाहित होनेसे प्राप्त धनको दान करनेमें समर्थ नहीं होता, अविभक्त भाइयोंको भोजनादि तथा धनविभाग एक साथ करना योग्य है, पिता कदापि पुत्रोंको विषम भाग प्रदान न करे। जेठा भाई चाहे दुष्कृती हो अथवा सुकृती हो, कदापि उसको अवज्ञा न करनी चाहिये। स्त्री अथवा कनिष्ठ भ्राता यदि दुष्कृत कर्म्म करें, तौभी जिस भांति उनका कल्याण हो, वैसा कार्य्य करे। धर्म्म जाननेवाले पुरुष कल्याणको ही धर्म्म कहते हैं, दश आचार्य्योंसे उपाध्याय श्रेष्ठ है, दश उपाध्यायसे पिता श्रेष्ठ है और दश पितासे माता श्रेष्ठ कही गई है, माता गौरवके सहारे सारी पृथ्वीको अभिभव करती है। इसलिये माताके समान गुरु नहीं है, माताके गरीयसी होनेसे ही लोग उसका मान्य किया करते हैं। हे भारत! पिताके परलोकमें जानेपर जेठा भाई पितातुल्य है। क्यों कि वही कनिष्ठ भाइयोंका वृत्तिदाता है, वही इन्हें प्रतिपालन करता है छोटे भाई बड़ेके वशवर्त्ती होके उसे नमस्कार करें और जैसे पिताके आसरे जीवन बिताते थे, वैसे ही जेठे भाईके अवलम्बसे जीवनका समय बितावें। हे भारत। मातापिता इस शरीरको उत्पन्न करते हैं और आचार्य्यके शासन अनुसार जो उत्पत्ति होती है, वह सत्य, अजर तथा अमर है। हे भरतश्रेष्ठ! जेठी बहिन मातातुल्य और जेठे भाईकी भार्य्या भी मातृसदृश है क्यों कि बाल्यावस्थामें उसके स्तनका भी दूध पीया जाता है।

१०५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, सब वर्णों तथा म्लेच्छोंको भी उपवास करनेकी मति देखता हूं, किन्तु मैं इसका कारण कुछ भी नहीं जानता, ब्राह्मण और क्षत्रियोंको विषयमें ही मैंने नियमाचरणको विधि सुनी है। हे पितामह! परन्तु उन लोगोंको किस प्रकार उपवास करना चाहिये? हे राजन्! सबके ही नियम और उपवासके विषय वर्णन करो। हे तात! उपवासयुक्त मनुष्यकी कैसी गति प्राप्त होती है? उपवास परम पुण्य और उपवासही परम अवलम्ब है। हे नरश्रेष्ठ! इस लोकमें उपवास करनेसे कैसा फल मिलता है? किसके सहारे

मनुष्य अधर्म्मसे छूटता है? हे भरतसत्तम! मनुष्य किस प्रकार पुण्यात्मा होता और स्वर्ग-लोक पाता है? हे नरनाथ! उपवास करके क्या दान किया जाता है? जिस धर्म्मके सहारे सब सुखदायक विषय प्राप्त होते हैं आप उसे वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब धर्म्मपुत्र धर्म्मज्ञ कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने ऐसा प्रश्न किया तब धर्म्मतत्त्वके जाननेवाले शान्तनुनन्दन भीष्म उनसे कहने लगे।

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ महाराज! उपवासविषयमें जो सब गुण हैं, उस विषयमें मैंने यह पुरातन प्रबन्ध सुना था। हे भारत! जैसा तुमने मुझसे पूछा है, इस ही भांति मैंने पहले तपोधन अङ्गिरा ऋषिसे प्रश्न किया था। हे भरतसत्तम! जब मैंने अग्निपुत्र अङ्गिरा ऋषिसे इस पवित्र उपवास विषयमें प्रश्न किया, तब उन्होंने मेरे प्रश्नका उत्तर दिया।

अङ्गिरा बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ कुरुनन्दन! ब्राह्मण और क्षत्रियोंके लिये त्रिरात्र उपवास विहित है, द्विरात्र, त्रिरात्र और एक रात्र भी निर्दिष्ट है जो वैश्य और शूद्र मोहके वशमें होकर द्विरात्र अथवा त्रिरात्र उपवास करते हैं, उन्हें उससे कुछ भी फल नहीं मिलता। वैश्य और शूद्रके लिये चतुर्थ भक्त क्षपण अर्थात् एक दिन अहोरात्र उपवास कहा गया है और पहले तथा दूसरे दिन एकबार भोजन करना विहित है, धर्म्मदर्शी धर्म्मज्ञ ऋषियोंने वैश्यों और शूद्रोंके लिये त्रिरात्र उपवासकी विधि नहीं कही है। हे भारत! पञ्चमी, षष्ठी और पौर्णमासी तिथिमें नियतात्मा जितेन्द्रिय मनुष्य एक-भक्त-द्वारा उपवास करनेसे क्षमावान, रूपवान और श्रुतवान हुआ करता है। बुद्धिमान मनुष्य इसी भांति उपवास करनेसे कदापि पुत्रहीन तथा दरिद्र नहीं होता। पञ्चमी और षष्ठी तिथिमें यज्ञ करनेवाला मनुष्य सत्कुलमें उत्पन्न हुए ब्राह्मणोंको भोजन करावे। हे कुरुनन्दन! कृष्णपक्षकी चतुर्द्दशी तिथिमें उपवास करनेसे मनुष्य व्याधिरहित तथा वीर्य्यवान होता है। मार्गशीर्ष महीनेमें जो पुरुष दिनमें एक बार भोजन करके महीना व्यतीत करता और भक्तिपूर्व्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है, वह व्याधि तथा पापोंसे छूट जाता है। सर्व्वकल्याणमय तथा सर्व्वौषधियुक्त मनुष्य पूर्व्वोक्त तिथिमें उपवास करनेसे व्याधिरहित और वीर्य्यवान होके जन्मता है, वह कृषिभागी तथा अधिक धनधान्ययुक्त होता है। हे कौन्तेय! जो लोग दिनमें एक बार खाके पूस महीना बिताते हैं, वे सुन्दर, दर्शनीय और यशभागी होते हैं। जो लोग माघ महीनेभर दिनमें एक बार भोजन करके समय व्यतीत करते हैं, वह लक्ष्मीयुक्त वंशमें स्वजनोंके बीच महत्व पाते हैं। फाल्गुन महीने भर जो लोग दिनमें एक बार भोजन करके समय बिताते हैं, वे स्त्रियोंके प्यारे होते और स्त्रियें उनके वशमें रहती हैं। जो लोग दिनमें एक बार भोजन करके चैत महीना बिताते हैं, वे सुवर्ण, मणि और मुक्तायुक्त महत्कुलमें जन्मते हैं। जो जितेन्द्रिय स्त्री अथवा पुरुष दिनमें एक बार भोजन करके वैसाख महीना व्यतीत करता है, उसे स्वजनोंमें श्रेष्ठता प्राप्त होती है। जेठ महीनेमें जो लोग दिनमें एकबार भोजन करके समय बितानेवाले पुरुष वा स्त्री उत्तम अतुल ऐश्वर्य्य प्राप्त होती है। जो लोग एकाहारी और अतन्द्रित होकर आषाढ़ महीना व्यतीत करते हैं, वे अधिक धनधान्य युक्त तथा बहुतसे पुत्रोंके पिता होते हैं। जो मनुष्य सदा एकबार भोजन करके सावन महीना बिताता है वह किसी स्थानमें अवश्य अभिषिक्त होकर ज्ञातिवर्द्धक हुआ करता है। जो मनुष्य भादों महीनेमें एकाहारी होके रहता है, वह धनाढ्य होके समृद्धि तथा अचल ऐश्वर्य्य पाता है और जो मनुष्य एकाहारी होके

आश्विन महीना बिताता है, वह पतिव्रता स्त्री और बहुपुत्रयुक्त तथा बाहनाढ्य होता है। कार्त्तिक महीनेमें जो मनुष्य एकाहारी होके रहता है, वह शूर बहुतसी स्त्रियोंसे युक्त और कीर्त्तिमान होता है। हे नरश्रेष्ठ महाराज! प्रति महीनेमें एकाहारी पुरुषोंको जो फल मिलता है, वह कहा गया; अब तिथियोंके नियम सुनो। हे भारत! एक एक पक्ष बीतनेपर जो लोग भोजन करते हैं, वे गोधन, बहुपुत्र-युक्त तथा दीर्घायु होते हैं। बारह वर्ष-तक जो लोग महीने महीने त्रिरात्र व्रत करते हैं, उन्हें अनाविल, निःसपत्नी और गणाधिपत्य प्राप्त होता है। हे भरतश्रेष्ठ! प्रवृत्तिके वशवर्त्ती मनुष्योंको बारह वर्षतक इन नियमोंको प्रतिपालन करना चाहिये। हे नरनाथ! जो पुरुष भोरसे सन्ध्यापर्य्यन्त भोजन करनेके अनन्तर जल नहीं पीता और अहिंसामें रत होके अग्निमें होम करता है, वह निःसन्देह छः वर्षके बीच सिद्ध होता है, वही अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है, वह रजोगुणसे रहित सुकृती मनुष्य अप्सराओंके नृत्यगीतयुक्त स्थानमें सहस्र स्त्रियोंमें घिरके क्रीड़ा करता है, तपाये हुए सुवर्ण सदृश प्रभायुक्त विमानपर चढ़ता है और पूरे एक हजार वर्षतक ब्रह्मलोकमें निवास करता है; अन्तमें पुण्यक्षीण होनेपर इस लोकमें आके महानुभावताको प्राप्त होता है। जो मनुष्य पूरे वर्ष भरतक एकाहार करता है, वह अतिरात्र यज्ञका फल भोग किया करता है और दश हजार वर्ष स्वर्गलोकमें निवास करके पुण्यक्षय होनेपर इसलोकमें आनेसे उसे बहुतसी सहायता मिलती है। जो लोग अहिंसामें रत, सत्यवादी जितेन्द्रिय होके सम्वत्सरके चतुर्थ भाग अर्थात् तीन महीनेतक एकाहारी होते हैं, वे वाजपेय यज्ञका फल भोगते और एक हजार वर्ष स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। हे कौन्तेय! दिनके छठवें भागमें भोजन करके जो मनुष्य एक वर्षतक समय बिताते हैं। उन्हें अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है और वे चक्रवाकके द्वारा चलनेवाले विमानपर चढ़के गमन करते हैं तथा चालीस हजार वर्षतक देवलोकमें परम सुखसे निवास किया करते हैं। हे महाराज! जो मनुष्य दिनके आठवें भागमें भोजन करके वर्षभर जीवित रहते हैं, वे गवामय यज्ञका फल पाते हैं, हंस सारसयुक्त विमानपर चलते और पचास हजार वर्ष देवलोकमें प्रमुदित हुआ करते हैं। हे राजन्! एक पक्ष बीतनेपर दूसरे पक्षमें जो लोग भोजन किया करते हैं, उनका वर्षभरके बीच छः महीना अनशन व्रत होता है,—भगवान अङ्गिराने कहा है, कि ऐसे व्रतधारी पुरुष साठ हजार वर्षतक स्वर्गलोकमें निवास करते हैं। हे नरनाथ! वे निद्रित होनेपर वीणा, वल्लकी और बांसुरीकी मधुरध्वनिके सहारे जागते हैं। हे महाराज! जो लोग वर्ष भरके बीच एक महीनेतक केवल जल पीके जीवन धारण करते हैं, वे विश्वजित् यज्ञका फल पाते हैं और सिंह व्याघ्रयुक्त विमानके द्वारा चलते हैं तथा सत्तर हजार वर्षतक सुरलोकमें प्रमुदित होते हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! एक महीनेसे अधिक उपवास करनेकी विधि नहीं है। हे पार्थ! धर्म्म जाननेवाले पुरुष अनशन व्रत किया करते हैं, जो पुरुष अनार्त्त और व्याधिरहित होके अनशन अवलम्बन करता है, उसे निःसन्देह पद पदमें यज्ञका फल मिलता है, वह हंसयुक्त विमानके सहारे सुरलोकमें भ्रमण करता है, सौ हजार वर्षतक देवलोकमें प्रभु होके आनन्दित होता है, एक सौ अप्सरा उस पुरुषको प्रमुदित करती हैं। आर्त्त अथवा व्याधिग्रस्त मनुष्य यदि उपवास करे, तो वह सौ हजार वर्षतक सुरपुरमें आनन्द भोगता, निद्रित होके काञ्ची और नूपुरके शब्दसे जाग्रत होता और सहस्र हंसयुक्त विमानके सहारे गमन करता है। हे

भरतश्रेष्ठ ! वह स्वर्गमें जाके एक सौ स्त्रियोंसे युक्त उत्तम मनोहर स्थानमें रमण करता है । अनशन व्रतके द्वारा क्षीण लोगोंको आप्यायन देखी गई है, घायल पुरुषके घाव आरोग्य हुए देखे गये हैं । उपवास व्याधियुक्त पुरुषके लिये परम औषधी है, क्रुद्ध पुरुषोंको प्रसन्न करनेवाला, पथ और मानका हेतु तथा दुःखित पुरुषोंके दुःख दूर करनेका उपायस्वरूप है । सुखसम्भोगके अभिलाषी चोष्यलादि अवस्था युक्त स्वर्गकाम मनुष्योंको इन आप्यायन आदि विषयोंमें अभिरुचि नहीं होती, बल्कि वैसे पुरुष अनशन आदि दुःखसहिष्णु होके निज तपस्याकी वृद्धि करते हैं, इसलिये वे पवित्र पुरुष सकाम और अलंकृत होकर एक सौ स्त्रियोंसे युक्त सुवरण सदृश विमानमें विहार किया करते हैं । स्वस्थ, सफल, सङ्कल्पसुखी और निष्पाप पुरुष अनशन व्रत करके उसका फल भोगते हैं वे लोग बाल सूर्य्य तथा सुवर्णसदृश प्रभायुक्त वैदूर्य्य मुक्ताखचित वीणा, पखावजकी ध्वनिसम्पन्न पताका, दीपिका और दिव्य घण्टा शब्दसे परिपूरित एक हजार स्त्रियोंसे भरे हुए विमानमें सुखभोग किया करते हैं । हे पाण्डव ! उनके शरीरमें जितने रोए रहते हैं, उतने हजार वर्ष तक वे सुरपुरमें प्रमुदित होके वास करते हैं । वेदसे श्रेष्ठ शास्त्र नहीं है, माताके समान गुरु नहीं है, धर्म्मसे बढ़के परम लाभ कुछ भी नहीं है, गङ्गाके समान नदी नहीं और उपवाससे बढ़के दूसरी श्रेष्ठ तपस्या कुछ भी नहीं है । जैसे इस लोक और स्वर्गलोकमें ब्राह्मणोंसे पावन अन्य कोई नहीं है, वैसे ही उपवासके समान तप दूसरा कुछ भी नहीं है । देवताओंने विधिपूर्व्वक तपस्या करके त्रिदिवलोक पाया है, ऋषियोंको भी उपवाससे परम सिद्धि प्राप्त हुई है । बुद्धिशक्तिसे युक्त विश्वामित्रको सहस्र वर्षतक एकाहारी होनेसे क्षमा गुण प्राप्त हुआ था, इसीसे उन्हें ब्राह्मणत्व पद मिला । च्यवन, जमदग्नि, वशिष्ठ, गौतम और भृगु प्रभृति क्षमाशील महर्षिवृन्द स्वर्गलोकमें गये हैं । पहिले समयमें अङ्गिराने यह विषय महर्षियोंके बीच कहा था, जो लोग सदा इसे प्रदर्शित करते हैं, वे दुःख नहीं पाते ।

हे कौन्तेय ! अङ्गिरा महर्षिके द्वारा यह विधि प्रचलित हुई है, जो मनुष्य सदा इसे पढ़ते वा सुनते हैं, उनके सब पाप नष्ट होते हैं । जो उत्तम पुरुष इस विषयको सुनते वा पढ़ते हैं । सब सङ्कटोंसे छूट जाते हैं, उनका चित्त पापकर्म्ममें अभिभूत नहीं होता, वे वियोनिज यज्ञादिकोंकी बोली जान सकते और निश्चय ही कीर्त्ति लाभ करते हैं ।

१०६ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह ! महानुभाव ब्रह्माके द्वारा विधिपूर्व्वक सब यज्ञ कहे गये हैं और इस लोक तथा परलोकमें यज्ञोंके फल सब प्रकारसे वर्णित हुए हैं, परन्तु दरिद्र लोग उन यज्ञोंके फलको पानेमें समर्थ नहीं होते, क्या कि यज्ञोंमें बहुतसे उपकरण तथा यज्ञकी सामग्री लानी होती है । हे पितामह ! उसका फल राजा अथवा राजपुत्र ही पा सकते हैं, धनरहित, गुणहीन अकेले और सहायतावञ्चित मनुष्योंके द्वारा यज्ञ नहीं हो सकता । हे पितामह ! इसलिये जो विधि सदा दरिद्रोंके करने योग्य और इन सब यज्ञफलोंके तुल्य हो, उसे ही मेरे समीप वर्णन करिये ।

भीष्म बोले, हे युधिष्ठिर ! अङ्गिराने कहा है, कि उपवास फलस्वरूप अनुष्ठान यज्ञफलके सदृश है, इसलिये तुम उसे सुनो । जो लोग अग्निहोत्रमें रत होके प्रति दिन अग्निमें होम करते हुए भोर और सन्ध्याके समय भोजन करके उक्त दोनों समयके बीच फिर भोजन नहीं करते, वे छः वर्षके बीच निःसन्देह सिद्ध

होते हैं; वे मनुष्य तपाये हुए सुवर्णसदृश विमान पाते और देवस्त्रियोंके नृत्यगीत तथा वाणी युक्त स्थानमें ब्रह्मलोक वा अग्निके समीप सौ करोड़ वर्षतक निवास करते हैं। जो लोग सदा धर्मपत्नीमें रत रहके तीन वर्षतक क्रमसे दिनमें एक बार भोजन करते हैं, वे अग्निष्टोम यज्ञ और इन्द्रके प्रिय बहुतसे सुवर्णके यज्ञोंका फल पाते हैं, वे सत्यवादी, दानशील, ब्रह्मनिष्ठ, अनसूयक, दमयुक्त और जितक्रोध होके परम गति प्राप्त करते हैं; व्रत पूरा होनेपर पाण्डुर-प्रभा और हंसचिन्हयुक्त विमानमें दो सौ करोड़ वर्षतक अप्सराओंके सङ्ग निवास करते हैं। जो लोग अग्निमें होम करते हुए एकवर्षके बीच एक रात्रि उपवास करके दूसरे दिन एक बार भोजन करते हैं और प्रतिदिन आत्मकर्ममें रत होके भोरको जागते हैं, वे मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञका फल पाते हैं और इन्द्र लोकमें वारा-ङ्गनाओंके बीच घिरके हंस-सारसयुक्त विमानमें निवास किया करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें होम करते हुए तीसरे दिन केवल एक बार भोजन करते तथा प्रतिदिन अग्निहोत्र करके भोरको जाग्रत होते हैं, वे अतिरात्र यज्ञका फल पाते हैं; उन मनुष्योंको मयूर हंसयुक्त विमान मिलता है और सप्तर्षि-योंके लोकमें सदा अप्सराओंके सङ्ग निवास किया करते हैं। तीन सौ करोड़ वर्षके अनन्तर वहांसे उनकी पुनरावृत्ति होती, इसे पण्डित लोग जानते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें होम करते हुए चौथे दिन एकबार भोजन करते हैं, उन्हें वाजपेय यज्ञका उत्तम फल मिलता है, वे इन्द्रकन्याके द्वारा अधिरूढ़ विमान पाके समुद्रके पार इन्द्रलोकमें निवास किया करते हैं; और सदा देवराजकी क्रीड़ा अवलोकन करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए पांचवें दिन एक बार भोजन करते हैं और अलुब्ध, सत्यवादी, ब्रह्मनिष्ठ, हिंसारहित, असूया शून्य और निष्पाप होते हैं। सुवर्णमय हंस-चिन्हवाले सूर्य्य किरण सदृश प्रभासे युक्त पाण्डुरवर्ण गृहसदृश विमानमें चढ़ते और एकावन सौ पद्म वर्षतक उस ही स्थानमें सुखसे वास करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए सदा मननशील होके छठें दिन भोजन करते हैं और सदा त्रिकाल स्नान करनेवाले ब्रह्मचारी और असूयारहित हुआ करते हैं, वे गोमेध यज्ञका फल पाते हैं। वे अग्निज्वा-लाके सदृश प्रभायुक्त हंसबर्हिण युक्त सुवर्णमय उत्तम विमान पाते हैं और अप्सराओंकी गोदीमें सोके नूपुर-मेखलाकी ध्वनिसे जाग्रत होते हैं; वे तीन तीन हजार तीन सौखेक, अठारह पद्म, दो महापद्म, पांच सौ अयुत और सौ सौ ऋक्षोंके चमड़ोंमें जितने रोएं रहते हैं, उतने वर्षतक ब्रह्मलोकमें निवास करते हैं। जो लोग एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए सातवें दिन एक बार भोजन करते और चुप होके ब्रह्मचर्य्य व्रत करते हैं तथा स्रक्, चन्दन, मधु और मांस परित्याग करते हैं, वे देवलोकके बीच इन्द्रलोकमें जाते हैं और उन स्थानोंमें पुरुष सिद्धार्थ होके देवकन्याओंसे पूजित होते हैं, वेही मनुष्य बहुतसे सुवर्ण यज्ञका फल पाते हैं और पूर्व्वोक्त लोकमें असंख्य समय तक निवास किया करते हैं। जो लोग देवकार्य्यमें रत होकर अग्निमें एक वर्ष-तक आहुति देते हुए क्षमाशील होके आठवें दिनमें एकबार भोजन करते हैं, वे पुण्डरीक यज्ञका फल पाते और पद्मवर्ण सदृश विमानपर चढ़ते तथा उन्हें निःसन्देह कृष्णवर्ण, कनकवर्ण श्यामाङ्गी युवा सुन्दरी स्त्रियें प्राप्त होती हैं। जो लोग एक वर्षतक प्रतिदिन अग्निमें आहुति देते हुए नवें दिन एक बार भोजन करते हैं, वे सहस्र अश्वमेधका फल पाते हैं, और उन्हें पुण्डरीक सदृश प्रकाशमान विमान मिलता है,

प्रदीप्त सूर्य और अग्नि सदृश तेजस्विनी दिव्य माला धारिणी रुद्रकन्यावृन्द उन्हें सनातन स्वर्गलोकमें ले जाती हैं और वे मनुष्य अठारह हजार वर्ष और सौ हजार करोड़ कल्प तक रुद्रलोकमें प्रमुदित होते हैं। जो एक वर्षतक अग्निमें होम करता हुआ दशवें दिन एक बार भोजन करता है, वह सर्व्वभूत-मनोहर ब्रह्म-कन्यागणोंके निवास स्थानमें निःसन्देह एक हजार अश्वमेध यज्ञका फल पाता है। नीलोत्पल और रक्तोत्पल वर्ण सदृश रूपवती स्त्रियें उस मनुष्यको प्रतिदिन प्रमुदित करती हैं, वह आवर्त्तगहनाकुल समुद्रकी तरङ्ग तुल्य मण्डलावर्त्त श्रेष्ठ विमान पाता है। विचित्र मणिमाला विराजित शंखके शब्दसे युक्त स्फटिक और हीरोंसे बने हुए वेदी स्तम्भ युक्त हंस-सारसोंके शब्दसे परिपूरित महायानमें चढ़ता और सौ हजार करोड़ वर्षतक देवलोकमें प्रमुदित होता है। जो लोग बारह महीने तक अग्निमें आहुति देते हुए ग्यारहवें दिन घृत भोजन करते हैं, पराई स्त्रीके विषयमें मनसे भी अभिलाष नहीं करते, माता पिताके लिये भी कदापि झूठ नहीं बोलते, वे विमानपर चढ़के महाबली महादेवके समीप जाते और सहस्र अश्वमेध यज्ञका फल पाते हैं तथा स्वयम्भू विमानको सम्मुख पहुंचा हुआ देखते हैं और सुवर्ण आभायुक्त रूपवती कुमारीकन्या सुरलोकमें प्रकाशमान मनोहर रुद्रगणोंके स्थानमें उन्हें ले जाती हैं। वे प्रलयकालकी अग्नि समान और प्रभायुक्त होके अनन्त समय तक सौ हजार करोड़ और दो सौ करोड़ वर्षतक देव-दानवोंके वन्द्य सदा महादेवको प्रणाम करते हैं; महादेव उन्हें प्रतिदिन दर्शन देते हैं। जो लोग एक वर्षतक क्रमसे बारहवें दिन घृतप्राशन करते हैं, वे सर्व्वमेध यज्ञका फल पाते हैं, द्वादश आदित्योंके बीच उनका विमान जाता है, वह स्थान महार्घ मणि, मोती प्रवाल मणियोंसे शोभित, हंसपातसे घिरा हुआ और नागवीथियोंसे परिपूर्ण कूंजनेवाले, मयूर और चक्रवाक पक्षियोंके व्यूहसे शोभायमान, उत्तम महत् अटारियोंसे युक्त, ब्रह्मलोकके प्रतिष्ठित नरनारियोंसे परिपूरित नित्य आश्रम है। हे महाराज! महाभाग धर्म्मवित् अङ्गिरा ऋषिने ऐसा कहा है, कि जो लोग एक वर्षतक सदा तेरहवें दिन घृत-प्राशन करते हैं, उन्हें देवसत्रका फल प्राप्त होता है। वे मनुष्य सुवर्णके बने हुए रत्नभूषित, देवकन्याओंसे परिपूरित दिव्य आभूषण और पवित्र सुगन्धियुक्त वायव्य अस्त्रसे सुशोभित रक्त पद्मोदय नाम विमान पाते हैं, वे वहांपर शंकु पताका युगान्त कल्प-अयुतायुक्त पद्म और समुद्र परिमित समयतक निवास करते हैं, वे देवकन्या और गन्धर्व्वोंके गीत तथा भेरी ढोल आदि बाजोंके शब्दसे प्रसन्न होके वहांपर अनुरक्त रहते हैं। बारह महीनेके बीच जो लोग चौदहवें दिन घृत प्राशन करते हैं, वे महामेध यज्ञका फल पाते हैं। अनिर्द्देश्य अवस्था रूपसम्पन्न भली भांति अलंकृत विशुद्ध तपे हुए सुवर्णभूषित पहरनेवाली देवकन्या गरुड़ विमानके सहारे उनके निकट उपस्थित होती हैं। वे वहांपर कलहंस निनाद सदृश नूपुर-काञ्चीसे उत्तम रीतिसे सावधान हुआ करते हैं, वे मनुष्य गङ्गाकी बालुका-परिमाणके अनुसार पूर्ण सम्वत्सर पर्य्यन्त देवकन्याओंके स्थानमें निवास करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए पन्द्रह दिनके अनन्तर एक बार भोजन करते हैं, वे सहस्र राजसूय यज्ञका उत्तम फल पाते हैं, वे हंस-मयूरसेवित विविध मणिमण्डल मण्डित जातरूपसे परिपूरित, दिव्यभूषणोंसे विभूषित, वाराङ्गनाओंसे युक्त मणिमुक्ता, प्रवालसे अलंकृत, एक स्तम्भ चार द्वार सात भूमिका सम्पन्न उत्तम मङ्गलमय सहस्र वैजन्तीके द्वारा सुशोभित, गीतशब्दसे

विभादित, दिव्यगुणयुक्त बिजलीकी प्रभासदृश विमानमें चढ़ते हैं, वे खड्ग और कुञ्जर वाहनसे युक्त होकर उस दिव्य यानमें सहस्र युगतक वास किया करते हैं। जो लोग एक वर्षतक सदा सोलहवें दिन एकबार भोजन करते हैं, उन्हें सोमयज्ञका फल मिलता है, वे लोग सोमकन्यागणोंके स्थानमें सदा निवास किया करते हैं, वे सौम्यगन्धसे अनुलिप्त और कामचारी गतिसे युक्त होते हैं। जब वे विमान पर चढ़ते हैं, तब उत्तम दर्शनीय मीठे वचनवाली स्त्रियां उनकी पूजा करती हैं, वे बहुतसे कामभोगके द्वारा सेवित होते हैं, ऐसे व्रतपरायण मनुष्य एक सौ दश पद्म परिमित महाकल्प और चारों आवर्त्तन परिमित समयतक फल भोग करते हैं जो लोग एक वर्षतक आग्नमें आहुति देते हुए सत्तरहवां दिन उपस्थित होनेपर घृतप्राशन करते हैं, वे वरुण, इन्द्र और रौद्रलोकमें अधिरोहण किया करते हैं और वेही पुरुष मारुत उशनस तथा ब्रह्मलोकमें गमन करते हैं, वहांपर देवकन्यागण आसन देके उनकी सेवा करती हैं; भूलोक, भुवर्लोक और देवर्षि विश्वरूपका दर्शन करते हैं। वहांपर बत्तीस भांतकी रूपधारिणी दर्शनीय मृदुभाषी भांति अलंकृत देवाधिदेवकी कुमारीगण उनके सङ्ग क्रीड़ा करती हैं, हे प्रभु! जबतक काल आदित्य और चन्द्रमा आकाशमण्डलमें विचरते हैं, तबतक उक्त वीर सुधा तथा देवभोज्य अमृतरस पीते हुए रुद्रलोकमें निवास किया करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक सदा एकबार भोजन करते हैं, वे सातों लोकोंका दर्शन किया करते हैं, देवकन्याधिरूढ़ भ्राजमान उत्तम रीतिसे अलंकृत बन्दिजनोंके शब्दसे युक्त रथ उनके पीछे पीछे चलते हैं, वे अत्यन्त सुखी होके सिंह-व्याघ्र युक्त बादल सदृश शब्दसे परिपूरित उत्तम दिव्य विमानपर चढ़ते हैं। वहांपर वे सहस्र कल्पतक कन्यागणोंके सङ्ग प्रमुदित हुआ करते हैं और अमृतसदृश उत्तम अमृत रस भोजन करते हैं। जो लोग सदा बारह महीनेतक उन्नीसवें दिन एक बार भोजन करते हैं, वे सप्तलोकोंको देखनेमें समर्थ होते हैं और अप्सराओंसे सेवित उत्तम स्थान पाते हैं, उन्हें गन्धर्वोंके द्वारा सूर्य्यवर्चस विमान मिलता है, वहांपर वे शोकरहित दिव्याम्बरधारी तथा श्रीमान होकर सौ सौ अयुत परिमित समयतक देवताओंकी वाराङ्गनाओंके सहित प्रमुदित हुआ करते हैं। जो लोग बारह महीनेतक सत्यवादी धृतव्रती अमांसाशी ब्रह्मचारी और सब जीवोंके हितमें रत होके बीसवां दिन पूरा होनेपर एक बार भोजन करते हैं, वे आदित्यगणोंके विपुल रमणीय लोकोंमें सुख भोग किया करते हैं। दिव्य मालाधारी गन्धर्व और अप्सरावृन्द तथा दिव्य यानके विमान उनके पीछे पीछे चलते हैं। जो लोग एक वर्षतक सदा आग्नमें आहुति देते हुए इक्कीसवें दिन एक बार भोजन करते हैं और अहिंसामें रत धीमान सत्यवादी तथा अनसूयक हुआ करते हैं, वे सूर्य्य के सदृश प्रभायुक्त होके वसुलोकोंको पाते हैं, वे कामचारी सुधाहारी होकर श्रेष्ठ विमानमें चढ़ते और दिव्याभरणोंसे विभूषित होकर देवकन्याओंके सङ्ग क्रीड़ा करते हैं, जो मिताहारी और जितेन्द्रिय पुरुष बारह महीनेतक सदा तेइसवें दिन एक बार भोजन करता है, वह वायुलोक भार्गवलोक और रुद्रलोकमें गमन किया करता है, वह कामचारी और कामगामी अप्सराओंसे पूजित और दिव्याभरण भूषित विविध गुणोंसे युक्त विमानपर चढ़के देवकन्याओंके सहित क्रीड़ा करता है। जो पुरुष बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए चौबीसवां दिन उपस्थित होनेपर घृतप्राशन करता है, वह दिव्य माला दिव्याम्बर धारण करके तथा दिव्यगन्धोंसे युक्त होकर आदित्यगणोंके निवासस्थानमें प्रमुदित

होके सदा वास करता है, हंसयुक्त मनोहर दिव्य विमानमें सहस्र और अयुत देवकन्याओंके सहित क्रीड़ा करता है। जो लोग बारह महीनेतक सदा पन्द्रहवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे पठकल विमानमें चढ़ते और सिंहव्याघ्रयुक्त बादलसदृश शब्द तथा आनन्दवर्द्धक ध्वनिसे युक्त देवकन्याओंसे परिपूर्ण सौ सौ विमल सुवर्णके रथ उनका अनुगमन करते हैं, वे अत्यन्त मनोहर उत्तम दिव्य विमानमें चढ़के उन सौ सौ स्त्रियोंसे परिपूरित स्थानमें अमृतसदृश सुधारस पीते हुए सहस्र कल्पतक निवास करते हैं। जो लोग सदा संयताहारी जितेन्द्रिय और रागरहित होके एक वर्षतक अग्निमें आहुति देते हुए इक्कीसवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे सब रत्नोंसे अलंकृत दिव्य स्फटिक विमानके द्वारा अप्र मरुत और अष्टवसुके लोकोंको उपभोग करते हैं, दिव्य तेजसे युक्त होकर देवपरिमाणसे दो हजार युगतक गन्धर्व्व और अप्सराओंसे पूजित होकर प्रमुदित रहते हैं। जो लोग बारह महीनेतक अग्निमें आहुति देते हुए सत्ताइसवें दिन सदा एकबार भोजन करते हैं, वे विपुल फल पाके देवलोकमें पूजित हुआ करते हैं वहां अमृताशी होकर वास करते हुए तृष्णारहित होके प्रमुदित होते हैं। हे महाराज! वे दिव्य शरीरधारी मनुष्य श्रेष्ठ विमानमें चढ़के देवर्षि चरित तथा राजर्षियोंसे अनुष्ठित लोकोंमें वास करते हैं, वे मनोरमा स्त्रियोंके सहित मदमत्त होके रमण करते हुए तीन सहस्र युग परिमित कल्पतक सुखसे निवास किया करते हैं। जो लोग जितचित्त और जितेन्द्रिय होके बारह महीनेतक सदा अट्ठाइसवें दिन एकबार भोजन करते हैं, वे देवर्षिचरित विपुल फल भोग किया करते हैं, वे भोगवान मनुष्य निज तेजके सहारे निर्म्मल सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होते हैं। पीनस्तनयुक्त दिव्याभरण विभूषित तेजस्विनी रमण करनेवाली सुकुमारी स्त्रियें सूर्य्यसदृश कामगामी मनोरम दिव्य विमानमें एक सौ अयुत कल्प परिमित वर्षतक उनका मन प्रसन्न करती हैं। जो लोग सत्यव्रत परायण होके बारह महीनेतक सदा उन्तीसवें दिन एक बार भोजन करते हैं, उनके निमित्त देवर्षि और राजर्षियोंसे पूजित दिव्य पवित्रलोक तैयार रहते हैं, वे सब रत्नोंसे विभूषित अप्सराओं और गन्धर्व्वोंके गीतसे युक्त सूर्य्य तथा चन्द्रमासदृश सुवर्णमय दिव्य विमानमें चढ़ते हैं, वहां दिव्याभरण भूषित मनको प्रसन्न करनेवाली मदविह्वल कोमलाङ्गी पवित्र स्त्रियें उन्हें आनन्दित करती हैं। वे भोगवान तेजसम्पन्न अग्निप्रभासदृश मूर्त्ति धारण करके देवताओंकी भांति प्रकाशमान दिव्य पुरुष वसुगण मरुद्गण, साध्य, रुद्रगणके लोक और ब्रह्मलोकमें गमन करते हैं। जो शमगुणसे युक्त, पुरुष एक वर्षतक सदा एक मास बीतनेपर एक बार भोजन करता है, उसे ब्रह्मलोक मिलता है, वह सुधारस पीके श्रीमान् और सर्व्वजन मनोहर हुआ करता है। तेज श्री और शोभासे सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होता है, वह दिव्य माल्याम्बरधारी दिव्य गन्धयुक्त सुखमें रत योगी दुःख अनुभवमें अनभिज्ञ होके स्वयं प्रभायुक्त स्त्रियोंके सहित विमानमें विराजता है और रुद्र तथा देवर्षिकन्याओंके द्वारा सदा सब भांति पूजित होता है। विविध रीतिसे विनोद करनेवाली अनेक प्रकारकी स्त्रियोंके द्वारा बहुतसी माया तथा अनेक भांतिकी रति चातुरीसे सध्य तथा वैदूर्य्यसदृश आकाश समान पृष्ठस्थानमें सोमसङ्काशके अभिमुख तथा अभ्रसदृश दक्षिणभागमें रक्तवर्ण आभायुक्त, अधोस्थानमें नील मण्डलाकार, ऊर्द्धमें विचित्र सङ्काश विमानमें पूजित होकर अनेक देवकन्याओंके सहित निवास करता है। सहस्र वर्षतक जम्बूद्वीपमें वर्षाकी जितनी बूंद बरसती हैं, उस बुद्धिशक्तिसे युक्त योगीका उतने

वर्षतक ब्रह्मलोकमें वास वर्णित है, वर्षाकालमें आकाशसे जितनी जलकी बूंद गिरती हैं, उतने समयतक वह अमरप्रभा अतिक्रम करके सुर-पुरमें वास करता है। महीनेभर उपवास करनेवाला मनुष्य दश वर्षतक ऐसे ही कठोर व्रत प्रतिपालन करते हुए महर्षित्व पद पाके सशरीरसे ही उत्कृष्ट स्वर्गलोकमें गमन किया करता है। मननशील, दान्त, क्रोधविजयी; जो जित शिश्नोदर, तीनों अग्निमें आहुति देनेवाले, सदा सन्ध्या उपासना करनेवाले जो मनुष्य इस प्रकारके बहुतसे नियमोंसे पवित्र होके महीनेके शेषमें एक बार भोजन करते हैं, वे आकाशके अवकाशकी भांति निर्म्मल शीलसम्पन्न और सूर्यकान्ति सदृश तेजस्वी पुरुष सशरीर सुरपुरमें जाके देवताओंकी भांति इच्छानुसार पवित्र स्वर्गसुख उपभोग करते हैं। हे भरतश्रेष्ठ महाराज! यह तुम्हारे समीप उपवास फलात्मक श्रेष्ठ यज्ञकी विधि विस्तार पूर्व्वक कही गई। हे पार्थ! दरिद्र मनुष्य इन्हीं उपवासोंको करके यज्ञका फल पाते हैं तथा उन्हें परम गति मिलती है। हे भरतसत्तम! तुम देव और द्विजोंकी पूजामें रत हो, इसी लिये तुम्हारे समीप यह उपवासकी विधि विस्तारपूर्व्वक वर्णित हुई। हे भारत! सदा अप्रमत्त, पवित्रतायुक्त, दम्भद्रोहसे निवृत्त, कृतबुद्धि, अचञ्चल, असवधानरहित महान् भावोंके समीप इस विषयमें तुम्हें सन्देह न होवे।

१०७ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! सब तीर्थोंके बीच जो श्रेष्ठ है और जिससे पवित्रता होती हैं, उसे आप मेरे निकट वर्णन करिये।

भीष्म बोले, सब तीर्थ मनीषियोंके लिये फलदायक हैं, उनके बीच जो पवित्र तीर्थ है, समाहित होके उसे सुनो। अपरिच्छिन्न विमल शुद्ध सत्यजल और धैर्य्यरूपी तालाब युक्त मानसतीर्थमें शाश्वत सत्व अवलम्बन करके स्नान करना उचित है। अनर्थित्व, आर्ज्जव, मार्द्दव, सब जीवोंकी अहिंसा, अनृशंसता और शमदम, ही पावन तीर्थ है। जो लोग ममत्वरहित निरहङ्कारी, सुख दुःख आदि द्वन्द्व सहनेवाले और निष्परिग्रह हैं तथा जो लोग भिक्षान्न भोजन करते हुए जीवन बिताते हैं, वेही पवित्र तीर्थस्वरूप हैं। अहंज्ञानसे रहित तत्ववित् पुरुषश्रेष्ठ तीर्थ कहके वर्णित होते हैं; सर्व्वत्र समदर्शन ही पवित्रताका लक्षण है। जिनके चित्तसे रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण निवृत्त हुआ है, जो लोग शौचाशौच समायुक्त स्वकार्य्य निभानेमें सदा तत्पर, सर्व्वत्यागमें सब भांतिसे अनुरक्त, सर्व्वज्ञ, सर्व्वदर्शी और शौचके सहारे जिनमें पवित्रता उत्पन्न हुई है, वेही तीर्थ तथा वेही पवित्र हैं। जलसे शरीर धोनेवाले पुरुषको स्नात नहीं कहा जाता, जो लोग दमस्नात हैं, उन्होंने ही स्नान किया है, वेही बाहर और भीतरसे पवित्र हैं। जो लोग अतीत विषयोंमें अनपेक्ष प्राप्तविषयमें ममतारहित तथा जिन्हें स्पृहा उत्पन्न नहीं होती, वेही परम पवित्र है। प्रज्ञान ही शरीरका विशेष शौच है और निष्किञ्चनत्व ही मनकी प्रसन्नता है। चरित्रशुद्धि, मनशुद्धि और तीर्थशुद्धि, इन तीनों शुद्धियोंकी अपेक्षा ज्ञानसे उत्पन्न हुई शुद्धि ही परम पवित्र मानी गई है। ज्ञानसे निर्म्मल हुआ मन और ब्रह्मज्ञान जलके सहारे जो लोग मानस तीर्थमें स्नान करते हैं, उनका नहाना ही स्नान है; तत्वदर्शियोंको ऐसा ही स्नान अभिमत है। शीलसम्पन्न, नियत भावसे समाहित गुणवान मनुष्य निश्चय ही सदा पवित्र हैं। हे भारत! ये सब शरीरस्थ तीर्थ कहे गये हैं, पृथ्वीके बीच जो सब पवित्र तीर्थ हैं, उसे भी सुनो। जैसे शरीरके अवयव पवित्र रूपसे वर्णित हुए हैं, वैसे ही पृथ्वीके सब अंश और जल

पवित्ररूपसे कहे गये हैं। जो लोग तीर्थोंके नाम लेते, तीर्थोंमें स्नान और पितृतर्पण करते हैं, वे तीर्थोंमें पाप धोके सहजमें ही सुरपुरमें गमन किया करते हैं। साधुओंके संसर्ग तथा पृथ्वी और जलके तेजके सहारे तीर्थ-सेवी मनुष्य अत्यन्त पुण्यभागी होते हैं। मनके तीर्थके अतिरिक्त पृथ्वीके तीर्थ स्वतन्त्र हैं, जो लोग दोनों तीर्थोंमें स्नान करते हैं, वे शीघ्र ही सिद्ध होते हैं। जैसे क्रियारहित बल और बलरहित क्रिया इस लोकमे कार्य्य साधन करनेमें समर्थ नहीं होती; परन्तु दोनोंके मिलनेपर कार्य्य सिद्ध होता है, वैसे ही शरीर शौच और तीर्थ शौचसम्पन्न पवित्र मनुष्यको दो प्रकारकी श्रेष्ठ शौचरूपी सिद्धि प्राप्त होती है।

१०८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, जो सब उपवासोंके बीच कल्याणकारी, महत फलजनक और लोकसमाजमें संशयरहित हो, उसे ही आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! स्वयम्भू ने स्वयं जिसका वर्णन किया है, जिसे करनेसे मनुष्योंको निवृत्ति प्राप्त होती है, उसका विषय सुनो। अगहन महीनेकी द्वादशी तिथिमें अहोरात्र केशवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है, तथा जो लोग पूजा करते हैं, उनके पाप नष्ट होते हैं। वैसे ही पौष महीनेमें नारायणकी पूजा करनेसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है और परम सिद्धि प्राप्त होती है। माघ महीनेकी द्वादशी तिथिमें अहोरात्र माधवकी पूजा करनेसे राजसूय यज्ञका फल मिलता है और पूजा करनेवाला निज कुलका उद्धार करता है। उसी भांति फाल्गुन महीनेकी द्वादशीमें जो लोग गोविन्दकी पूजा करते हैं, वे अतिरात्र यज्ञका फल पाते हैं और सोमलोकमें गमन किया करते हैं। चैत्र महीनेकी द्वादशीमें जो लोग अहोरात्र विष्णुको स्मरण करते हुए उनकी पूजा करते हैं, वे पुण्डरीक यज्ञका फल पाके देवलोकमें जाते हैं। वैसाख महीनेकी द्वादसी तिथिमें जो लोग मधुसूदनकी पूजा करते हैं, वे अग्निष्टोम यज्ञका फल पाते और सोमलोकमें गमन किया करते हैं। ज्येष्ठ महीनेकी द्वादशी तिथिमें जो लोग अहोरात्र त्रिविक्रमकी पूजा करते हैं, वे गोमेध यज्ञका फल पाते और अप्सराओंके द्वारा प्रमुदित हुआ करते हैं। आषाढ़ महीनेकी द्वादशीको जो लोग वामनदेवकी पूजा करते हैं, वे मनुष्य नरमेध यज्ञका फल पाते और अप्सराओंके द्वारा आनन्दित हुआ करते हैं। सावन महीनेकी द्वादशीमें जो लोग अहोरात्र श्रीधरकी पूजा करते हैं, वे पञ्च यज्ञका फल पाके देवलोकमें प्रमुदित होते हैं। भादों महीनेकी द्वादशीमें जो लोग हृषीकेशको पूजा करते हैं, वे सौत्रामणि यज्ञका फल पाके पवित्रचित्त होते हैं। आश्विन महीनेकी द्वादशी तिथिमें जो लोग माधवकी पूजा करते हैं, वे निःसन्देह सहस्र गोदानका फल पाते हैं। कार्त्तिक महीनेकी द्वादशी तिथिमें दामोदरकी पूजा करनेसे सब यज्ञोंके पवित्र फल प्राप्त होते हैं, इस विषयमें सन्देह नहीं है। जो लोग इसी प्रकार वर्ष दिनतक हृषीकेशकी पूजा करते हैं, वे जातिस्मर होते तथा उन्हें बहुतसा सुवर्ण प्राप्त होता है। जो लोग सदा विष्णुकी पूजा करते हैं, वे उनमें लीन होनेमें समर्थ होते हैं इस व्रतके समाप्त होनेपर ब्राह्मणोंको भोजन करावे अथवा घृत दान करे; यह निश्चय है, इसके अनन्तर उपवास नहीं होता। सनातन विष्णु भगवानने यह कथा कही है।

१०९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाप्राज्ञ युधिष्ठिरने शरशय्याशायी कुरुपितामह बड़े भीष्मके निकट जाके फिर प्रश्न किया।

युधिष्ठिर बोले, मनुष्य लोगोंकी रूप, सौभाग्य और प्रियत्व किस प्रकार हुआ करता है तथा धर्मार्थयुक्त पुरुष किसभांति सुखभागी होता है?

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! मार्गशीर्ष महीनेकी शुक्लप्रतिपदामें मूल नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर निज दैवताके सहित मूल नक्षत्रका चन्द्रमाके सङ्ग दो पद कल्पना करे और रोहिणी नक्षत्रके सहित चन्द्रमाको जङ्घा कल्पना करे। अश्विनी नक्षत्रके सहित दोनों सक्थि; पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ाके सहित दोनों उरुस्थल; उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रके सहित कटिकी कल्पना करे। पूर्व्व और उत्तर भाद्रपदके सहित नाभी; रेवती नक्षत्रके सहित दोनों नेत्र, धनिष्ठानक्षत्रके सहित पीठ, अनुराधा नक्षत्रके सहित उदर, विशाखा नक्षत्रके सहित दोनों भुजा और हस्त नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर दोनों हाथ निर्देश करे। हे महाराज! पुनर्व्वसु नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका सम्बन्ध होनेपर अङ्गुलियें और अश्लेषा नक्षत्रके योगसे नखोंकी कल्पना करे। हे राजेन्द्र! ज्येष्ठा नक्षत्रके योगसे ग्रीवा और श्रवण नक्षत्रके संयोगसे दोनों कान, पुष्य नक्षत्रके योगसे नासिका, मृगशिरा नक्षत्रके योगसे दोनों नेत्र और चित्रा नक्षत्रके सहित ललाटकी कल्पना करे। भरणी नक्षत्रके योगसे सिर और आर्द्रा नक्षत्रके सहित चन्द्रमाका संयोग होनेपर उसके केशोंकी कल्पना करे। हे नरनाथ! इस चन्द्रव्रतके समाप्त होनेपर वेदपारग ब्राह्मणोंको घृत दान करे, इस प्रकार व्रत करनेसे मनुष्य सुभग दर्शनीय तथा ज्ञानभागी होकर जन्मता है और पूर्णिमाके चन्द्रमा सदृश परिपूर्णाङ्ग हुआ करता है।

११० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद पितामह! मनुष्योंकी श्रेष्ठ संसारविधि जाननेकी इच्छा करता हूं। हे राजेन्द्र नरपाल! पृथ्वीमण्डलपर मनुष्योंका किस प्रकार उत्तम व्यवहार करनेसे श्रेष्ठ स्वर्ग अथवा नरक प्राप्त होता है? पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश शरीरको त्यागके परलोकमें जाता है, तब उस समय कौन उनका अनुगमन किया करता है?

भीष्म बोले, ये उदार बुद्धिशक्तियुक्त बृहस्पति आरहे हैं, इन्हीं महाभागसे यह सनातन गोपनीय विषय पूछो। इस समय इनके अतिरिक्त कोई भी यह विषय नहीं कह सकता, बृहस्पतिके समान दूसरा वक्ता कहीं भी विद्यमान नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, युधिष्ठिर और भीष्म इसी प्रकार वार्त्तालाप कर रहे थे, उसी समय पवित्र-चित्तवाले बृहस्पति स्वर्गसे उतरके आये। अनन्तर धृतराष्ट्र आदि राजाओंके सहित सब सभासदोंने उठके उनकी अनुपम पूजा की। तब धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर भगवान् बृहस्पतिके निकट जाके न्यायपूर्व्वक यथार्थ रीतिसे प्रश्न करनेमें प्रवृत्त हुए।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद सर्व्वधर्म्मज्ञ भगवन्! पिता, माता, पुत्र, गुरु, स्वजन, सम्बन्धी और मित्रमण्डलोंके बीच मनुष्योंका सहाय कौन है? पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश मृत शरीरको परित्याग करके गमन करता है, तब परलोकमें कौन उसका अनुगमन किया करता है?

बृहस्पति बोले, हे महाराज! पुरुष अकेला ही जन्मता और एकला ही मरता है, एकला ही क्लेशोंसे पार होता और अकेलेको ही दुःख भोगने पड़ते हैं। पिता, माता, पुत्र, मित्र, भ्राता, गुरु, स्वजन और सम्बन्धियोंमेंसे कोई भी इसका सहाय नहीं होता। पुरुष काष्ठ और लोष्ट्रसदृश शरीर त्यागके मुहूर्त्त भरतक मानो रोदन करके

अन्तमें विमुख होकर चला जाता है, तब अकेला धर्म्म ही उस पिता मातासे परित्यक्त पुरुषको अनुगमन करता है; इसलिये धर्म्म ही पुरुषोंका सहाय है, धर्म्मकी ही मनुष्योंको सदा सेवा करना उचित है। धर्म्मयुक्त प्राणियोंको स्वर्गमें श्रेष्ठ गति मिलती है और अधर्म्मयुक्त पुरुष नरकमें गमन किया करता है। इसलिये पण्डित पुरुष न्यायसे प्राप्त हुए धनसे धर्म्मकी सेवा करें। अकेला धर्म्म ही परलोकमें मनुष्योंका सहाय होता है; अल्प बुद्धिवाले मनुष्य पराये धनके लोभसे मोहित होके लोभ, मोह, अनुक्रोश और भय निबन्धनसे अकार्य्योंको किया करते हैं; धर्म्म, अर्थ और काम ये तीनों जीवित-कालके फल हैं, इसलिये अधर्म्मको त्यागके इन त्रिवर्गोंको प्राप्त करना उचित है।

युधिष्ठिर बोले, आपके समीप मैंने धर्म्मयुक्त परम हितकर वचन सुना, अब शरीरकी अवस्था जाननेके लिये अत्यन्त अभिलाष हुई है। मनुष्योंका मृत शरीर सूक्ष्म रीतिसे अव्यक्तताको प्राप्त होनेसे नेत्रगोचर नहीं होता, तब धर्म्म किस प्रकार उसका अनुगामी होता है?

बृहस्पति बोले, पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, बुद्धि और आत्मा तथा साक्षीभूत रात्रि और दिन, ये सब मिलके इस लोकमें प्राणियोंके धर्म्मको सदा अवलोकन करते हैं, ये सब धर्म्म और जीवके अनुगामी होते हैं। हे महाबुद्धिमान्! त्वचा, हड्डी, मांस, शुक्र और रुधिर, ये जीवन रहित शरीरको छोड़ देते हैं, अनन्तर धर्म्मसंयुक्त जीव दूसरा शरीर धारण करता है, अन्तमें पञ्चतत्त्वोंके देवता उस जीवके शुभ वा अशुभ कर्म्मोंको देखते हैं। धर्म्मके सहित वह जीव इस लोक और परलोकमें सुख पाता है। पुनर्व्वार तुमसे और कौनसा विषय कहूं?

युधिष्ठिर बोले, धर्म्म जिस भांति अनुगमन करता है, उसे आपने कहा, अब किस प्रकार वीर्य्य प्रवृत्त होता है? मैं इसे जाननेकी इच्छा करता हूं।

बृहस्पति बोले, हे नरनाथ! जो अन्न पुरुष खाता है, शरीरमें रहनेवाले देवगण, पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि और छठवें मनके सन्तुष्ट होनेपर वही भोजन किया हुआ अन्न महत् वीर्य्यस्वरूप होता है। हे राजन्! अनन्तर स्त्री पुरुषोंके संयोगसे गर्भ उत्पन्न हुआ करता है। यह सब तुम्हारे समीप कहा गया, फिर क्या सुननेकी इच्छा है?

युधिष्ठिर बोले, जिस प्रकार गर्भ उत्पन्न होता है, वह आपके द्वारा वर्णित हुआ; अब जिस भांति पुरुषकी उत्पत्ति होती है, उसे कहिये।

बृहस्पति बोले, उत्पत्तियुक्त पुरुष पञ्चतत्त्वोंके गुणोंसे अभिभूत होता है और उन्हीं संयुक्त तत्त्वोंसे अपरागति प्राप्त हुआ करती है अर्थात् तदात्माभिमान रूप अभिभव हेतु यह सर्व्वभूतसम्पन्न होकर कर्त्तृत्वादि अभिमानी होता है, उस समय पञ्चतत्त्वोंके देवता जीवोंके शुभाशुभ कर्म्मोंको देखते हैं। फिर कौनसा विषय सुननेकी इच्छा है?

युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! त्वचा, हड्डी और मांस परित्याग करनेसे उन तत्त्वोंसे रहित होकर वह जीव किस स्थानमें रहके सुख दुःख भोग करता है?

बृहस्पति बोले, कर्म्मसे संयुक्त जीव शीघ्र ही वीर्य्यस्वरूप होकर स्त्रियोंके पुष्पको अवलम्बन करके यथा समयमें उत्पन्न होता है। यमके द्वारा बन्धन तथा क्लेश भोगके मनुष्य दुःखमय संसारचक्रमें क्लेशोंको भोगता है। हे महाराज! वह प्राणी इस लोकमें जन्मसे ही धर्म्मफल अवलम्बन करनेसे सुकृत कर्म्मभोग किया करता है। जन्मसे ही यदि शक्तिके अनुसार धर्म्मकी सेवा करे, तो वह पुरुष सदा सुख भोग किया करता है। और धर्म्मके बीच यदि अधर्म्मकी सेवा करे, तो वह जीव सुखके अनन्तर दुःखभोगनेमें

प्रवृत्त होता है। जो जीव अधर्मयुक्त हैं, वे यमलोकमें जाके दुःखके सहित तिर्य्यक्योनिमें जन्मते हैं। मोहयुक्त जीव इस लोकमें जिन कर्मोंके सहारे जिन योनियोंमें उत्पन्न हुआ करता है, उसे मैं कहता हूं, सुनो। इतिहासके सहित शास्त्रों और वेदोंमें यह वर्णित है, कि मर्त्यलोकवासी जीव घोर यमपुरीमें गमन करते हैं। हे पृथ्वीनाथ! वहांपर देवलोकसदृश पवित्रस्थान विद्यमान हैं, वहां तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न हुए जीव नहीं जासकते, इसके अतिरिक्त सब जीवोंकी ही उस स्थानमें गति हुआ करती है। ब्रह्मलोकसदृश दिव्य यमभवनमें जीव सदा कर्मगुणोंसे बद्ध होकर विविध दुःख भोग करता है। जैसे भाव और कर्मोंसे पुरुषको घोर कठोर गति प्राप्त होती है, इसके अनन्तर मैं तुमसे वह विषय कहता हूं। ब्राह्मण यदि चारों वेदोंको पढ़के मोहवश पतित पुरुषसे प्रतिग्रह लेवे, तो वह गर्दभयोनिमें जन्मता है। हे भारत! वह गधा होके पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, गधा मरनेपर बलवान बैल होता है, बलीवर्द्द सात वर्ष जीवित रहता है, बलीवर्द्द मरके ब्रह्मराक्षस रूपसे जन्मता है, ब्रह्मराक्षस तीन महीने जीवित रहके मरनेपर ब्राह्मण होता है। पतित पुरुषका याजन करनेसे कृमियोनिमें जन्म हुआ करता है। हे भारत! वह कृमियोनिमें पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, कृमियोनिसे छूटके गर्द्दभयोनिमें जन्मता है, गधा होके पन्द्रह वर्ष, फिर शूकर होके पांच वर्ष, पांचवर्ष तक कुक्कुट, पांच वर्ष तक सियार और एक वर्ष तक कुत्ता होके रहता है, अनन्तर मनुष्य होता है। जो निर्बुद्धि शिष्य उपाध्यायके निकट पाप करता है, वह जीव इसलोकमें तीनवार निःसन्देह तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न होता है। हे राजेन्द्र! वह पहले कुत्ता होता है, तिसके अनन्तर मांसभोजी हिंसक जन्तु होके जन्मता है, फिर गधा होके उत्पन्न होता है, अनन्तर प्रेतरूप होके पश्चात् ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न होता है, जो पापाचारी शिष्य मनसेभी गुरुपत्नी गमनकरता है, वह अधर्मयुक्त चित्त परलोकमें जाके इस लोकमें उग्र जन्म पाता है। वह पहले श्वयोनिमें उत्पन्न होकर तीन वर्ष तक जीवित रहता है, श्वान योनिमें मरके कृमियोनिमें जन्मता है। कृमि होके एक वर्ष तक जीवित रहता है, अनन्तर मरके ब्राह्मणयोनिमें जन्मता है। गुरु यदि अपनी इच्छानुसार पुत्रतुल्य शिष्यके ऊपर बिना कारणताकेही प्रहार करता है तो वह भी हिंसक जन्तु होके उत्पन्न हुआ करता है। हे महाराज! जो पुत्र पिता माताकी अवमानना करता है, वह मरके पहले गर्द्दभयोनिमें उत्पन्न होता है, गधा होके दश वर्ष तक जीवित रहता है, एक वर्ष तक कुम्भीर अर्थात् मतपदार्थयुक्त जन्तु विशेष होकर अन्तमें मनुष्य जन्म पाता है। जिस पुत्रके ऊपर माता पिता दोनों ही रुष्ट होते हैं, वह गुरुजनोंके असन्तोषवशसे मरके गर्द्दभयोनिमें जन्मता है, गधा होके दश महीनेतक जीवित रहता, फिर कुत्ता होकर चौदह महीनेतक जीता है; अनन्तर बिड़ाल होकर सात महीना बिताके अन्तमें मनुष्य जन्म पाता है। जो पुरुष पितामाताके विषयमें आक्रोशप्रकाश करता है, वह सारक अर्थात् शालिक पक्षी होके उत्पन्न होता है। हे महाराज! पितामाताके ऊपर प्रहार करनेसे पुरुष तीन वर्ष तक कच्छप होके जन्मता है। कच्छप तीन वर्ष तक शल्यक और छःमहीनेतक सांप होके जीवित रहता है, अन्तमें मनुष्य होके जन्मता है, जो लोग स्वामीका अन्न खाते हुए राजविषयोंकी सेवा करते हैं, वे मोहयुक्त मनुष्य मरके वानरयोनिमें जन्मते हैं। बन्दर होके दशवर्ष, चूहा होके पांच वर्ष अनन्तर कुत्ता होके छः मास समय बिताके मरनेपर मनुष्य जन्म पाते हैं। न्यस्त धन हरनेवाले

मनुष्य यमलोकमें जाकर सैकड़ों योनियोंमें भ्रमण करके शेषमें कृमियोनिमें जन्मते हैं। हे भारत! वे उस कृमियोनिमें पन्द्रह वर्ष जीवित रहते हैं अनन्तर पाप नष्ट होनेपर मनुष्ययोनिमें जन्मते हैं। असूयक मनुष्य मरके मृगयोनिमें जन्मता है। विश्वासघाती नीचबुद्धि मनुष्य मत्स्ययोनिमें उत्पन्न होता है। हे भारत! वह मछली होनेपर आठ वर्ष तक जीवित रहके मृगयोनिमें जन्मता है, मृग होके चार महीनेके अनन्तर छागयोनिमें उत्पन्न होता है। एक वर्ष पूरा होनेपर बकरा मरके कीटयोनिमें जन्मता है, अनन्तर वही जीव फिर मनुष्य योनि पाता है। हे महाराज! जो पुरुष मोहके वशमें अचेत होकर, धान्य, यव, कुलत्थ, सरसों, चना, उड़द, मूंग, गेहूं, तीसी वा अन्य शस्योंको हरता है, वह निलज्ज मूषकयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। हे महाराज! अनन्तर वह मरके मृग होता है, फिर शूकर होके जन्मता और उत्पन्न होते ही रोगके वशमें होकर पञ्चत्वको प्राप्त होता है। हे राजन्! अनन्तर वह निज कर्म्मवशसे श्वानयोनिमें जन्मता है, कुत्ता होके पांचवर्ष समय बिताके अन्तमें मनुष्यजन्म पाता है। पराई स्त्री हरनेसे मनुष्य वृकयोनिमें उत्पन्न होता है, क्रमसे वह कुत्ता, सियार, गिद्ध, सांप और बगुला होता है। हे महाराज! जो पापी मोहित होकर भाईकी स्त्री हरता है, उसे वर्ष भरतक पुंस्कोकिलत्व प्राप्त होता है। जो पुरुष कामके वशमें होकर मित्रभार्य्या, गुरुपत्नी और राजभार्य्या गमन करता है, वह मरनेपर शूकरयोनिमें उत्पन्न होता है, शूकर होके पांचवर्ष समय बिताके दश वर्ष तक भेड़िया होके रहता है। अनन्तर पांच वर्षतक बिड़ाल, दश वर्षतक कुक्कुट, तीन महीनेतक चींटी और एक महीना कीट होनेके अनन्तर कृमियोनिमें जन्मता है, उस कीटयोनिमें चौदह महीनेतक जीवित रहता है। अन्तमें अधर्म्म नष्ट होनेपर फिर मनुष्ययोनिमें जन्मता है। हे भारत! विवाह, यज्ञ अथवा दानके समय जो मनुष्य मोहवशसे उसमें विघ्न करता है, वह मरके कृमियोनिमें जन्मता है, कृमि होके पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, अन्तमें अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्य शरीर पाता है। हे महाराज! पहिले एक पुरुषको कन्यादान करके जो दूसरे पुरुषको दान करनेकी इच्छा करता है, वह जीव मरके कृमियोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। हे युधिष्ठिर! कृमियोनिमें तेरह वर्ष तक जीवित रहता है, अनन्तर अधर्म्म नष्ट होनेपर वह मनुष्ययोनिमें जन्मता है। जो पुरुष देवकार्य्य और पितर कार्य्य न करके स्वयं भोजन करता है, वह मरनेपर कौआ होता है, काग होके एक सौ वर्ष जीवित रहता है, अनन्तर कुक्कुट होता है, कुक्कुट जन्मके बाद एक महीनेतक काला सर्प होके रहता है, अन्तमें मनुष्य शरीर धारण करता है। जो पुरुष पितासदृश जेठे भाईकी अवमानना करता है, वह मरके क्रौञ्चयोनिमें जन्मता है। क्रौञ्च होके चौबीस महीना जीवित रहता है, अन्तमें मरके मनुष्य तन पाता है। शूद्र ब्राह्मणी गमन करनेसे कृमियोनिमें जन्मता है, अनन्तर फिर मरके शूकर होता है, हे महाराज! शूकर जन्म लेते ही रोगसे मरता है। हे राजन्! वह मूढ़ उक्त कर्म्मके वशमें होकर श्वानयोनिमें जन्मता है, कुत्ता होके कर्म्मफल भोगते हुए अन्तमें मनुष्य होता है। मनुष्य जन्ममें पुत्र उत्पन्न करके मरनेपर मूषकयोनिमें जन्मता है।

हे महाराज! कृतघ्न मनुष्य मरनेके अनन्तर यमपुरीमें जाकर क्रुद्ध यमदूतोंके द्वारा दारुण पीड़ा पाता है। हे भारत! वह यमके स्थानमें दण्ड, मुद्गर, शूल, दारुण अग्निकुण्ड, तरवारपत्रके घोर वन, बालू और कांटेयुक्त शाल्मली तथा और भी अनेक प्रकारकी उग्र यातना पाके अन्तमें बध्य हुआ करता है। हे भरत-

श्रेष्ठ। अनन्तर वह कृतघ्न वहांपर प्रचण्डदण्डके द्वारा नष्ट होकर संसारचक्रका अवलम्बन करके कृमियोनिमें जन्मता है। हे भारत! वह पन्द्रह वर्ष कृमि होके रहता है, अनन्तर गर्भमें आता है, वह गर्भ शिशु अवस्थामें ही नष्ट होता है; फिर सैकड़ों बार गर्भमें उत्पन्न होके मरता है, बहुतसे जन्मके बाद तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न होता है, अनन्तर इसलोकमें कई वर्षतक दुःख अनुभव करके पुनर्जन्म-रहित होके कूर्मयोनिमें जन्मता है। नीचबुद्धि मनुष्य दही हरनेसे बकपक्षी होता है और असंस्कृत मत्स्य हरनेसे प्लव अर्थात् कारण्डव पक्षी होके जन्मता है। जो दुर्बुद्धि पुरुष मधु हरता है, वह दंश होके उत्पन्न होता है। फलमूल और अपूप हरनेसे मनुष्य चींटीयोनिमें जन्मता है, राजमाष हरनेसे हलगोलक अर्थात् लम्बी पूंछवाले गोलाकार कीटयोनिमें जन्म लेता है, पायस हरनेवाला तीतर पक्षी होता है, पिष्टमय पूप हरनेवाला उलूकयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है। दुर्म्मति मनुष्य लोहा हरनेसे काकयोनिमें जन्मता है; नीचबुद्धि पुरुष कांसा हरनेसे हारीत पक्षी होता है, चांदीके पात्र हरनेवाला कपोतयोनिमें जन्म लेता है, स्वर्णपात्र हरनेवाला कृमियोनिमें जन्मता है। धोये हुए कौशेय वस्त्र हरनेवाला कयार पक्षी होके जन्मता है। कृमिकोशसे उत्पन्न हुए वस्त्रोंको हरनेसे मनुष्य वर्त्तक पक्षी होता है। साधारण वस्त्रोंको हरनेवाला मनुष्य मरके शुकपक्षी होता है; पट्टवस्त्र हरनेवाला पुरुष मरनेपर हंस होता है, सूती वस्त्र हरनेवाला मनुष्य मरनेके अनन्तर क्रौञ्चयोनिमें उत्पन्न होता है। हे भारत! पट्टवस्त्र तथा भेड़ प्रभृतिके रोमसे बने हुए कम्बल वा दुकूल वस्त्र हरनेसे मनुष्य शश-जन्तु होके जन्मता है, हरितालादि वस्त्र हरनेसे पुरुष मरके मयूरयोनिमें जन्मता है। लालवस्त्र हरनेवाला मनुष्य चकोरपक्षीयोनिमें जन्मता है। हे महाराज! लोभी मनुष्य इस लोकमें वर्णक (रङ्ग) प्रभृति तथा सुगन्धित वस्तु हरनेसे छछुन्दर योनिमें जन्मता है। उस ही अवस्थामें पन्द्रह वर्ष जीवित रहता है, अनन्तर अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्य जन्म पाता है। दूध हरनेवाला पुरुष बगुला होता है। हे महाराज! जो पुरुष मोहके वशमें होकर तेल हरता है, वह मरके तैलपायीयोनिमें उत्पन्न होता है। धनकी इच्छासे अथवा वैरी होकर शस्त्रधारी अधम पुरुष अशस्त्र मनुष्यको मारनेसे मरनेके अनन्तर खरयोनिमें जन्मता है; गधा होके दो वर्ष जीवित रहता है, फिर शस्त्रसे मरके मृग होता और मृगयोनिमें सदा उद्विग्नस्वरूपसे जन्म लेता है, एक वर्ष बीतनेपर वह मृग शस्त्रसे मरके मीनयोनिमें जालसे बद्ध होता है, अनन्तर श्वापद योनिमें जन्मता है, श्वापद होके दश वर्ष फिर द्वीपी होके पांच वर्ष जीवित रहता है, अनन्तर मरके कालके वश अधर्म्म नष्ट होनेपर मनुष्ययोनिमें जन्म लेता है। हे महाराज! नीचबुद्धि मनुष्य परस्त्री हरनेसे यमके स्थानमें जाकर अनेक प्रकारके क्लेश भोगता हुआ इक्कीस योनिमें भ्रमण करके कीटयोनिमें उत्पन्न होता है; बीस वर्ष कृमियोनिमें रहके तब मनुष्यजन्म पाता है। भोजनकी वस्तु हरनेसे मनुष्य मक्खी होके जन्मता है और कई महीनेतक मक्खीसमूहके वशमें रहता है, अनन्तर पाप नष्ट होनेपर मनुष्यत्व पाता है। धान्य हरनेवाला मनुष्य लोमश होके जन्मता है; पिन्याकयुक्त भोजनकी वस्तु हरनेसे मनुष्य बभ्रु सदृश बड़ा दारुण मूषिक होता है, वह पापात्मा मनुष्योंको दंशन करते हुए जीवित रहता है, दुर्बुद्धि मनुष्य घृत हरनेसे काकमद्गु अर्थात् शृङ्गवान जलपक्षी होता है, नीचबुद्धि मनुष्य मत्स्य हरनेसे कौवा होता है। नमक हरनेवाला चीरी-काकरूपसे उत्पन्न होता है। जो

मनुष्य विश्वासवशसे दूसरेके रखे हुए धनको हरता है, वह मरनेपर मत्स्ययोनिमें जन्मता है, मत्स्ययोनि पाके मरनेके अनन्तर मनुष्य-जन्म पाता है, मनुष्यत्व पाके थोड़ायु होता है। हे भारत! मनुष्य अनेक प्रकारके पाप-कर्म्म करके तिर्य्यक् योनिमें जन्मते हैं, वे आत्म-प्रमाणके अनुसार कुछ भी धर्म्म नहीं जानते, जो सब मनुष्य अनेक प्रकारके पापाचरण करके व्रत अवलम्बनपूर्व्वक निवास करते हैं, वे सुख दुःखसे संयुक्त होके सदा रोगी रहते हैं। लोभ मोहसे युक्त पापी मनुष्य म्लेच्छतुल्य हैं, वे लोग निःसन्देह सहवासके योग्य नहीं हैं। जो मनुष्य जन्मसे ही पाप नहीं करते, वे रूप-वान, रोगरहित तथा धनवान होते हैं। स्त्रियें इन उपरोक्त कार्य्योंके करनेसे पापग्रस्त होके इन्हीं जन्तुओंकी भार्य्या हुआ करती हैं। हे भारत! परस्व हरनेसे जो सब दोष होते हैं, वे वर्णित हुए, यह विषय मैंने तुम्हारे समीप संक्षेपमें ही कहा है। हे भारत! अन्य कथाप्र-संगमें फिर सुनोगे। हे महाराज! मैंने पहले समयमें देवर्षियोंके बीच यह विषय ब्रह्माके मुखसे सुना था और तुम्हारे पूछनेपर पूरी रीतिसे बखान किया। हे महाराज! इसे सुन-कर तुम सदा धर्म्ममें मन स्थित करो।

१११ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे अनघ वक्तावर ब्रह्मन्! आपने मेरे समीप अधर्म्मकी गति वर्णन की; अब मैं धर्म्मकी गति सुननेकी इच्छा करता हूं। पापकर्म्म करनेसे किस प्रकार उत्तम गति मिलती है और कैसे कार्य्य करनेसे शुभ गति प्राप्त होती है?

बृहस्पति बोले, पुरुष अधर्म्मके वशमें होकर पापकर्म्म करता है और विपरीत ज्ञानसे नरक प्राप्त होता है। जो पुरुष मोहके वशमें होकर अधर्म्म करके शोक करता और मनको संयत रख सकता है, वह पापफल नहीं भोगता। जिसका अन्तःकरण जिस प्रकार पापकर्म्मकी निन्दा करता है, उस ही भांति उसी शरीरसे वह पुरुष अधर्म्मसे छूटता है। यदि पुरुष अपना किया हुआ पाप धर्म्मज्ञ ब्राह्मणसे कहे, तो वह उस ही समय अधर्म्मयुक्त अपवादसे छूट जाता है; मनुष्य अपने किये हुए पापोंको जिस प्रकार वर्णन करेगा, सावधानचित्त होके उस ही भांति मुक्त होगा। जैसे सर्प पुरानी केंचुली छोड़ देता है, वैसे ही समाहित चित्तसे ब्राह्मणोंको विविध दान देकर मनुष्य सद्गति पाता है। हे युधिष्ठिर! जो सब दान करना होता है, वह तुमसे कहता हूं, जिसे करनेसे मनुष्य धर्म्मके सहारे अधर्म्मसे छूट जाता है। सब दानके बीच अन्न दान ही श्रेष्ठ है, इसलिये धर्म्मकी इच्छा करनेवाला सरल भावसे पहले अन्न दान करे। अन्न ही मनुष्योंका प्राण है, अन्नसे ही प्राणियोंका जन्म होता है, और उत्पन्न होके अन्नसे प्रतिष्ठित रहते हैं; इस ही निमित्त अन्न प्रशंसनीय है। देवऋषि, पितर और मनुष्यवृन्द अन्नकी ही प्रशंसा किया करते हैं; रन्तिदेवने अन्नदान करके स्वर्गलोक पाया है। शुद्धचित्तसे वेद पढ़नेवाले ब्राह्मणोंको न्यायसे प्राप्त हुआ अन्न दान करना चाहिये, एक सौ दश ब्राह्मण जिसके यहां शुद्धचित्तसे दिया हुआ अन्न भोजन करते हैं, उसका तिर्य्यग् योनिमें जन्म नहीं होता; और एक हजार दश ब्राह्मण जिसके दिये हुए अन्नको भोजन करते हैं वह पुरुष अधर्म्मसे छूटकर सदा योगशील होता है। जो ब्राह्मण वेदपाठी ब्राह्मणोंको श्रद्धापूर्व्वक अन्नदान करता है, वह सुखी होता है। हे पाण्डव! जो क्षत्रिय ब्राह्म-णके धनमें लोभ न करके निज उपार्ज्जित धनके सहारे वेदवेत्ता ब्राह्मणोंको पवित्र और समा-हित होकर अन्न दान करता है, वह उस ही

धर्मोके सहारे सब पाप कर्म्मोंका नाश करता है। वैश्य यदि निज उपार्ज्जित कृषिकार्य्यका छठवां भाग ब्राह्मणोंको दान करे, तो वह सब पापोंसे छूट जाता है। ब्राह्मणको प्राणसंशय उपस्थित होनेपर शूद्र अत्यन्त कठिनाईसे प्राप्त हुआ धन दान करनेसे पापरहित होता है। जो अहिंसक, मनुष्य निजबलसे अन्न उत्पन्न करके ब्राह्मणोंको दान करता है, उसे दुःख नहीं मिलता। मनुष्य हर्षयुक्त होके वेदवृद्ध ब्राह्मणोंको न्यायसे प्राप्त अन्नदान करनेसे पापोंसे छूट जाता है। सत्पथको अनुवृत्ति करनेसे पुरुषके सब पाप नष्ट होते हैं। इस लोकमें ऊर्ज्जस्कर अन्न दान करके पुरुष ऊर्ज्जस्वी होता है। दातृगणके द्वारा जो मार्ग बना हुआ है, मनीषि लोग उस ही पथसे गमन करते हैं, वेही प्राणदाता हैं, उन्होंसे सनातन धर्म्म रक्षित हुआ करता है। मनुष्योंको उचित है, कि सब समयमें न्यायसे उपार्ज्जित अन्न ही सत्पात्रोंको दान करें, क्योंकि अन्न ही परम गति है। अन्नदानके सहारे मनुष्य भयङ्कर विषयोंकी सेवा नहीं करता, इसलिये अन्यायरहित अन्नदान करना योग्य है। गृहस्थ मनुष्य पहले ब्राह्मणोंको भोजन कराके तब स्वयं अन्न भोजन करनेमें यत्नवान होजावे, अन्नदानसे मनुष्य दिन पूरा करे, हे महाराज! मनुष्य न्यायपूर्व्वक दश सौ ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे घोर नरकमें नहीं जाता वा बार बार संसारमें भ्रमण नहीं करता; परलोकमें सर्व्वकाम युक्त होकर सुख भोग करता वा शोकरहित होके विलास करनेमें प्रवृत्त होता है, वही पुरुष रूपवान्, कीर्त्तिमान् और धनवान् हुआ करता है। हे भारत! यह तुम्हारे निकट उत्तम अन्नदानका महत् फल कहा, यही समस्त धर्म्म और दानका मूल है।

११२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, अहिंसा, वैदिककर्म्म, ध्यान, इन्द्रियसंयम, तपस्या और गुरुसेवा इन सबके बीच पुरुषके पक्षमें कल्याणकारी क्या है?

बृहस्पति बोले, हे भरतश्रेष्ठ! ये छहों विषय ही धर्म्मसङ्गत हैं, ये प्रत्येक ही पृथक् पृथक् धर्म्मके द्वार स्वरूप हैं, इसलिये इनका विषय वर्णन करता हूं, सुनो। जो मनुष्य हिंसाश्रय धर्म्मसाधन किया करता है, वह जीवोंको निरर्थक ही नष्ट करता है, इसलिये मैं उस धर्म्मको श्रेष्ठ नहीं कहता। पुरुष काम क्रोध और लोभरूपी तीनों दोषोंको सब भूतोंमें अर्पण करके अपनेमें उक्त दोषोंको संयत करनेसे सिद्धिलाभ करता है। जो पुरुष अपने सुखकी इच्छासे अहिंसक जीवोंको दण्डसे मारता है, वह परलोकमें जाके सुखी नहीं होता। जो मनुष्य सब जीवोंके विषयमें आत्मसदृश दण्डरहित और जितक्रोध हैं वे परलोकमें जाके सुखी होते हैं। जो निज दुःखकी भांति दूसरोंके दुःखसे व्याकुल होते हैं, सब प्राणियोंको आत्मरूपसे तत्त्वदृष्टिके द्वारा देखते हैं, उन गति विषयमें अत्यन्त हीनत्व हेतु मार्ग सचकरहित स्थानान्वेषी पुरुषके पथदर्शन विषयमें देवता लोग भी मुग्ध होते हैं। जो विषय अपने प्रतिकूल हो वह दूसरेके विषयमें सन्धान न करे; संक्षेपरीतिसे यही धर्म्म है, कामवशसे अन्य धर्म्म भी प्रवर्त्तित हुआ करता है। पुरुष प्रत्याख्यान, दान, प्रिय, अप्रिय, सुख और दुःखमें अपनी उपमाके द्वारा प्रमाण पाता है। अन्य पुरुष दूसरेके विषयमें जैसा व्यवहार करता है अर्थात हिंसित होकर हिंसा किया करता है और पाले जानेपर पालन करता है; इसलिये जीवोंको पालना चाहिये, हिंसा करनी योग्य नहीं है। जीव लोकमें इस ही उपमाके द्वारा जो धर्म्म हुआ करता है, वह निपुण पुरुषोंके सहारे उपदिष्ट हुआ है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिशक्तिसे युक्त

देवगुरु बृहस्पति धर्म्मराज युधिष्ठिरसे इतनी कथा कहके हम लोगोंके देखते ही स्वर्गलोकमें चले गये ।

११३ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर वक्तृवर महातेजस्वी राजा युधिष्ठिरने शरशय्यामें सोये हुए पितामहसे फिर प्रश्न किया ।

युधिष्ठिर बोले, हे महाबुद्धिमान् ! वेद प्रमाण दर्शननिबन्धसे ऋषि ब्राह्मण और देवगण अहिंसालक्षण धर्म्मकी ही प्रशंसा किया करते हैं । हे राजसत्तम ! मनुष्य वचन मन और कर्म्मसे हिंसा करते हुए किस प्रकार क्लेशोंसे मुक्त होता है ?

भीष्म बोले, हे शत्रुसूदन ! ब्रह्मवादी ऋषि लोग अहिंसाको मन, वचन, कर्म्म और लक्षण भेदसे चारप्रकार कहा करते हैं, उसके बीच एकके व्यक्त होनेसे भी सब भांतिसे अहिंसा नहीं होती, हे महाराज । जैसे सब चौपाये जीव तीन पांवसे स्थित नहीं होते, वैसे ही यह अहिंसा तीन कारणोंसे वर्णित नहीं होती । जैसे पैरसे चलनेवाले जीवोंके क्षुद्र पदचिन्ह हाथीके पदचिन्हमें लीन होते हैं, वैसे ही अहिंसामें सब धर्म्म समाविष्ट हुआ करते हैं ; इसलिये पहले सम यशसे ही सब धर्म्मोंके बीच अहिंसा श्रेष्ठरूपसे वर्णित हुई है । जीव वचन मन और कर्म्म द्वारा लिप्त होता है, पहले मन ही मन त्याग करके अनन्तर वचन और कर्म्मसे परित्याग करते हुए जो लोग तीन प्रकारके मांसभक्षण नहीं करते, वे मुक्त होते हैं । ब्रह्मवादियोंने मन वचन और आनन्द, इन तीनोंको ही कारण कहे हैं, ऐसा सुना जाता है, कि इन तीनोंमें ही सब दोष प्रतिष्ठित हैं । तपयुक्त मनीषि पुरुष इन्हीं कारणोंसे मांस भक्षण नहीं करते । हे राजन् ! अब मेरे निकट मांस भक्षणके दोष सुनो । हे महाराज ! जो मोहयुक्त मूढ़ पुरुष पुत्र मांस-सदृश मांस भक्षण करते हैं, वे अधम पुरुष कहाते हैं । जैसे सदा पितामाताके संयोगसे पुत्र जन्मता है, वैसे ही अवश पापाचारी हिंसा करके बार बार पापयोनिमें उत्पन्न हुआ करता है । प्रति जिह्वामें जिस प्रकार रसका ज्ञान होता है, वैसे ही अस्वादिष्ट वस्तुओंसे राग उत्पन्न होता है, ऐसा शास्त्रोंमें वर्णित है । असंस्कृत नमकीन अथवा बिना लवणके जिस प्रकार भोजनकी वस्तु तय्यार होती हैं, चित्त भी उसी भांति उसमें निरुद्ध हुआ करता है, मांस भक्षण करनेवाले नीच पुरुष परलोकमें भेरी, मृदङ्ग तथा अत्यन्त मधुरतन्त्रीके शब्दको किस प्रकार सुनेंगे ; जो लोग अचिन्तित अनिर्द्दिष्ट और असङ्कल्पित रसकी आकांक्षासे अभिभूत होते हैं, वे फलार्थी पुरुष ही प्रशंसा किया करते हैं । मांसकी प्रशंसा भी दोषकर्म्मयुक्त है, बहुतेर साधु पुरुष अपना जीवन त्यागके निज मांससे दूसरोंके जीवनकी रक्षा करके स्वर्गमें गये हैं । हे महाराज ! यह तुम्हारे निकट सर्व्वधर्म्मानुसंहिता चारों कारणोंसे परिभूत अहिंसाका विषय कहा गया ।

११४ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, अहिंसाको आपने बार बार परम धर्म्म कहा है, परन्तु यह भी वर्णन किया है, कि श्राद्धमें पितर लोग मांसके अभिलाषी होते हैं । पहले आपने अनेक प्रकारके मांससे श्राद्धानुष्ठानका विषय कहा है, बिना हिंसाके मांस कहां मिलेगी इसलिये इस वाक्यके साथ पूर्व्व वाक्यसे विरोध होता है, इसीसे मांस परित्यागरूपी धर्म्ममें हम लोगोंको सन्देह उत्पन्न हुआ है ; मांस खानेवालोंको क्या दोष होता है ? और न खानेसेही कौनसे गुण हुआ करते हैं ? स्वयं मारके खानेसे अथवा दूसरेके द्वारा

मरे हुए जीवका मांस भक्षण करनेसे क्या दोष होता है? जो दूसरेके लिये पशु मारते हैं और जो लोग मोललेके भक्षण करते हैं, उन्हें क्या दोष होता है? हे पापरहित! इस विषयको आप यथार्थ रीतिसे वर्णन करिये, मैं इस सनातन धर्म्मको निश्चय करनेकी इच्छा करता हूं। पुरुषको किस प्रकार परमायु प्राप्त होती है? किस प्रकार मनुष्य बलवान हुआ करता है? किस लिये अव्यङ्ग होता है और किस कारणसे लक्षण सम्पन्न होके जन्मता है?

भीष्म बोले, हे कुरुनन्दन महाराज! मांस भक्षण न करनेसे जो धर्म्म होता है और इस विषयमें जो श्रेष्ठ विधि है, उसे मेरे निकट यथार्थ रीतिसे सुनो। जो लोग सौन्दर्य्य अव्यङ्गता, आयु, बुद्धि, सत्व, बल और स्मृति प्राप्त करनेकी कामना करते हैं, उन महानुभावोंके द्वारा हिंसा परित्यक्त हुआ करती है। हे कुरुनन्दन युधिष्ठिर! इस विषयमें ऋषियोंके बहुतसे सम्वाद हैं, इसलिये उन लोगोंका मत सुनो। हे युधिष्ठिर! जो लोग यतव्रती होके प्रति महीने अश्वमेध यज्ञ करते हैं, वे समकालमें ही मधमांस परित्याग करें। हे महाराज! सप्तर्षि, बालखिल्य मुनि और मरीचिप मनीषिवृन्द मांस भक्षण करनेकीही प्रशंसा किया करते हैं। जो लोग मांस भक्षण नहीं करते और पशुओंको नहीं मारते, स्वायम्भुव मनुने उन्हें ही सब प्राणियोंका मित्र कहा है। जो लोग मांस परित्याग करते हैं वे सर्व्वभूतोंके अधर्षणीय, सब जीवोंके विश्वसनीय और सदा साधुसम्मत होते हैं। धर्म्मात्मा नारद मुनि कहते हैं, कि जो पुरुष दूसरेके मांससे निज मांसकी वृद्धि करनेकी इच्छा करते हैं, वे सदा अवसन्न होते हैं। बृहस्पति कहते हैं, मद्य पीने और मांस भक्षणसे निवृत्त होना दान, यज्ञ तथा तपस्याके तुल्य है। जो लोग एक सौ वर्षतक प्रति महीने अश्वमेध यज्ञ करते और जो लोग मांस भक्षणसे निवृत्त रहते हैं, मेरे मतमें वे दोनों ही समान हैं। मद्यमांस त्यागनेसे पुरुष सदा सत्र द्वारा यज्ञ करता है, सदा दान करनेका फल पाता और सदा तपस्वी हुआ करता है। हे भारत! जो पुरुष मांस भक्षण करके पश्चात् निवृत्त होता है, उससे जो फल हुआ करता है, उस फलको वेद प्रदान नहीं करसकते और यज्ञ भी उस फलको प्रदान करनेके योग्य नहीं है। रसज्ञान होनेपर मांस परित्याग करना अत्यन्त दुष्कर कर्म्म है, सब प्राणियोंको अभयप्रद यह व्रताचरण अत्यन्त श्रेष्ठ है। जो विद्वान् पुरुष सब जीवोंको अभय दक्षिणा दान करता है, वह लोकमें निःसन्देह प्राणदाता होता है। मनीषिवृन्द इस परम धर्म्मकी प्रशंसा करते हैं, जैसे अपना प्राण सबको प्रिय जीवोंका प्राण भी वैसा ही है; शुद्धचित्तवाले बुद्धिमान् मनुष्योंको आत्म उपमाके सहारे मनन करना योग्य है। जब ऐश्वर्य्यके अभिलाषी विद्वानोंको भी मृत्युसे भय है, तब मांस उपजीवी पापी पुरुषोंके द्वारा हन्यमान रोगहीन निष्पाप जीवोंको तो मृत्युका भय होही सकता है। हे महाराज! इसलिये मांस त्यागको धर्म्म, अर्थ और सुखका उत्तम स्थान जानो, अहिंसा ही परम तपस्या और अहिंसा ही परम सत्य है अर्थात् अहिंसासे ही सत्य प्रवृत्त होता है। तृण, काष्ठ और पत्थरसे मांस नहीं उत्पन्न होता, जीवहिंसा करनेसेही मांस प्राप्त होता है, इसीसे उसके भक्षण करनेमें दोष हुआ करता है। सत्य और सरलताप्रिय देववृन्द स्वाहा और स्वधा मन्त्रोंसे प्रदान किया हुआ अमृत भोजन करते हैं और जिह्वा रसपरायण मांसाशियोंको राजस प्रकृति जानो, हे महाराज! दुर्गम पथ, घोर दुर्ग गहन वन रात्रि-दिन और सन्ध्याके समय, चौराहे, सभा, उद्यतशस्त्रमण्डली तथा सर्प भयमें मांस भक्षण न करनेसे दूसरोंके द्वारा भय नहीं होता। जो लोग मांस भक्षण नहीं करते, वे सब

जीवोंके शरण्य, सबके विश्वासी, सब जीवोंके उद्वेगकर होते और स्वयं भी सदा व्याकुल नहीं होते। यदि खानेवाला न रहे, तो घातक नहीं होता; खानेवालेके निमित्त ही घातक होता है; मनुष्य मांस-भक्षकके लिये पशुओंका वध किया करते हैं, यह अभक्ष्य है, इसी निमित्त हिंसाकी निवृत्ति होती है; इसलिये खानेवालोंके ही लिये मृगादिकोंकी हिंसा प्रवर्त्तित हुई है। हे महाद्युति! हन्यमान जीव हिंसकोंकी आयु ग्रास करता है, इसलिये जो लोग निज उन्नतिकी अभिलाष करते हैं, वे मांस भक्षण न करें, प्राणि हिंसक रौद्रकर्म्म करनेवाले मनुष्योंको किसी स्थानमें भी पवित्रता नहीं प्राप्त होती, वे मांसभक्षी जीवोंकी भांति सब जीवोंके ही उद्वेगजनक होते हैं। लोभ, बुद्धि, मोह, बलवीर्य्य अथवा पापियोंके संसर्गसे मनुष्योंकी अधर्म्ममें रुचि होती है। पराये मांससे निज मांसकी वृद्धि करनेकी इच्छा करनेवाला मनुष्य व्याकुलहोके निवास करता और जहां तहां जन्म लिया करता है। संयतचित्तवाले परमर्षिगण मांसत्यागको धन, यश और आयुकी वृद्धि करनेवाला स्वर्गजनक तथा महत् स्वस्त्ययन कहते हैं। हे कौन्तेय! मांस भक्षणसे जो सब दोष होते हैं, पहले समयमें महामुनि मारकण्डेयके मुखसे मैंने उसे सुना था। जीनेकी इच्छा करनेवाले मृत वा मारे हुए जीवोंका जो पुरुष मांस भक्षण करता है, वह मारनेवालेके सदृश है; कोई धनसे मांस क्रय करते है, कोई उपभोगके लिये भक्षण करते हैं, कोई वध और बन्धनादिसे पशुओंको मारते हैं। मांस क्रय करना, भक्षण और मारना, ये तीन प्रकार वध हैं। जो पुरुष स्वयं मांस भक्षण न करके भक्षकका अनुमोदन करता अथवा मारनेवालेका अनुमोदन करनेमें प्रवृत्त होता है, वह पुरुष भी दोषोंसे लिप्त होता है, जो लोग मांस भक्षण न करके प्राणियोंके विषयमें दयावान होते हैं, वे सब जीवोंके अनभिभवनीय, आयुष्मान्, रोगरहित और सुखी हुआ करते हैं। मैंने सुना है, कि हिरण्यदान, गोदान और भूमिदानकी अपेक्षा मांस भक्षण न करनेसे अधिक धर्म्म होता है। अपरीक्षित विधिसे रक्षित हुआ मांस भक्षण न करे; यदि मनुष्य वैसा मांस भक्षण करता है, तो निःसन्देह नरकमें जाता है। प्रोक्षित अथवा अभ्युक्षित अथवा ब्राह्मणोंकी कामनासे यदि मांस भक्षण करे, तो उसमें अल्प दोष जानना चाहिये और यदि इसके विपरीत किया जाय, तो मनुष्य दोषोंसे लिप्त हुआ करता है। जो अधम पुरुष खानेवालोंके लिये पशुओंको मारता है, उस विषयमें घातक ही महादोषसे लिप्त होता है, खानेवाले उसकी भांति दोषयुक्त नहीं होते। जो यज्ञोपनिषद-बोधसे रहित मनुष्य अग्निष्टोम आदि यज्ञ तथा वेदमें कहे हुए उपायका अवलम्बन करके जीवहिंसा करते हैं, उस यज्ञच्छलसे मांसके अभिलाषी पुरुष नरकगामी होते हैं। जो पुरुष मांस खाके पश्चात् उसे भक्षण करनेसे विरत होता है, उसे भी महान् धर्म्म हुआ करता है; क्यों कि वह पापसे निवृत्त होता है। आहर्त्ता, अनुमन्ता, घातक और क्रय-विक्रय करनेवाले, संस्कारकारक और उपभोक्ता, ये सब कोई खादक हैं, प्राचीन ऋषियोंसे सेवित वेदोंमें प्रतिष्ठित विधिके अनुसार एक दूसरा प्रमाण कहता हूं। हे नृपश्रेष्ठ! प्रजार्थी पुरुषोंने जो प्रवृत्तिलक्षणयुक्त धर्म्मका वर्णन किया है, वह मोक्षके अभिलाषी मनुष्योंका धर्म्म नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! वेदोक्त प्रमाण और पितरोंके श्राद्धके समयमें जो मांस मन्त्रसे संस्कारयुक्त प्रोक्षित और अभ्युक्षित होता है, वही पवित्र हविस्वरूप है; इसके विपरीत वृथा मांसको मनुने अभक्ष्य, अस्वर्ग्य, अयशस्य तथा राक्षसोंका भक्ष्य कहा है। हे महाराज! अपने मनुष्य पहिले मांस भक्षण न क

करे, क्यों कि यज्ञोचित अवैध मांस मनुष्योंको भक्षण करना उचित नहीं है। सुखकी इच्छा करनेवाला पुरुष सब प्रकारसे प्राणियोंके मांस भक्षण न करे। सुना जाता है, कि पहिले समयमें मनुष्योंके व्रीहिमय पशु थे, पुण्यलोकपरायण यज्ञ करनेवाले उन्हींके सहारे यज्ञ करते थे। पहिले समयमें ऋषियोंने चेदीपति वसुसे सन्देहयुक्त होकर प्रश्न किया था, अभक्ष्य मांसको भी भक्ष्य कहनेवाले राजा स्वर्गसे पृथ्वीपर आगमन करते हैं, वह भी ऐसा कहनेसे फिर पृथ्वीतलमें प्रविष्ट हुए थे। प्रजाकी हितकामना करनेवाले महाभाग अगस्त्यने तपस्याके सहारे सर्व्वदैवत आरण्यक मृगोंका प्रोक्षण किया था, पितर और देवसम्बन्धीय कार्य्य मांसके द्वारा किये जानेपर निकृष्ट नहीं होते। पितर लोग न्यायपूर्व्वक मांससे तृप्त होकर प्रीतियुक्त होते हैं। हे नरनाथ पापरहित राजेन्द्र! मांस भक्षण न करनेमें जो सुख होता है, उसे कहता हूं, सुनो। जो लोग एक सौ वर्षतक दारुण तपस्या करते और जो लोग मांस परित्याग किया करते हैं, मेरे मतमें वे दोनों ही समान हैं। हे नरनाथ! कौमुदीमय शुक्लपक्षमें मधुमांस परित्याग करे, क्यों कि उससे धर्म्म होता है। जो लोग वर्षके बीच चार महीनेतक मांस त्यागते हैं, उन्हें कीर्त्ति, आयु, यश और बल प्राप्त होता है। अथवा जो लोग एक महीना मांस भक्षण नहीं करते, वे सब क्लेशोंको अतिक्रम कर निरामय होके परम सुखसे जीवनका समय बिताते हैं। जो लोग एक महीना वा एक पक्ष मांस नहीं खाते, उन हिंसानिवृत्त लोगोंके लिये ब्रह्मलोक विहित है। हे पार्थ! जिन्होंने सदसत् वस्तुओंको जाना है और सब जीवोंको आत्मस्वरूप जाने हैं, वे ज्ञानी लोग शुक्लपक्षमें मांस भक्षण नहीं करते। नाभाग, अम्बरीष, महानुभाव गय आयु, अनरण्य, दिलीप, रघु, पुरु, कार्त्तवीर्य्य, अनिरुद्ध, नहुष, ययाति, नृग, विष्वक्सेन, शशबिन्दु, युवनाश्व, शिवि, उशीनर, मुचुकुन्द, मान्धाता और हरिश्चन्द्र इन सब राजाओंने शरत्कालके शुक्लपक्षमें मांस भक्षण नहीं किया था। सत्य वचन कहो, झूठी बात मत कहो, सत्य ही सनातन धर्म्म है, राजा हरिश्चन्द्र सत्यके सहारे सुरपुरमें चन्द्रमाकी भांति विहार करते हैं।

हे राजेन्द्र! श्येनचित्र, सोमक, वृक, रैवत, रन्तिदेव, वसु, सृञ्जय, कृप, भरत, दुष्मन्त, करुष, राम, अलर्क, नल, विरूपाश्व, निमि, धीमान् जनक, ऐल, पृथु, वीरसेन, इक्ष्वाकु, शम्भु, श्वेत, सगर, अज, धुन्धु, सुबाहु, हर्य्यश्व, क्षुप और भरत, ये सब तथा दूसरे राजा लोग शरत्कालके शुक्लपक्षमें मांस त्याग करनेसे स्वर्गलोकमें गये हैं और श्रीसम्पन्न तथा दीप्यमान होके ब्रह्मलोकमें निवास करते हुए सहस्रों स्त्रियोंसे युक्त होकर गन्धर्व्वोंसे पूजित हुआ करते हैं। इसलिये जो महात्मा इस अहिंसा धर्म्मलक्षणयुक्त उत्तम धर्म्माचरण करते हैं, वे स्वर्गमें वास किया करते हैं। इस लोकमें जो धार्म्मिक पुरुष जन्मसे ही मधुमांस परित्याग करते और मद्य नहीं पीते, वही मुनिरूपसे स्मृत होते हैं। जो लोग यह अमांसाद धर्म्माचरण करते अथवा दूसरोंको सुनाते हैं, वे यदि अत्यन्त दुराचारी भी हों, तोभी नरकमें नहीं जाते। हे महाराज! जो लोग इस ऋषिपूजित पवित्र अमांसभक्षण धर्म्मको सदा पाठ करते अथवा निरन्तर सुनते हैं, वे सब पापोंसे मुक्त होकर सर्व्वकामके द्वारा पूजित होते और उन्हें स्वजनोंके बीच विशिष्टता प्राप्त होती है, इस विषयमें सन्देह नहीं है। विपद्युक्त पुरुष आपदासे मुक्त होता है, बद्ध पुरुष कारागारसे छूट जाता है, आतुर मनुष्य रोगरहित हुआ करते और दुःखित पुरुषोंको दुःखसे छुटकारा मिलता है। हे कुरुश्रेष्ठ! जो मनुष्य मांस भक्षण नहीं करता, उसे तिर्य्यग्योनि प्राप्त

नहीं होती, वह रूपवान् और बलविमान् होके महत् यश पाता है। हे महाराज! यह तुम्हारे निकट मांस परित्याग विषयमें प्रवृत्ति और निवृत्तियुक्त ऋषियोंकी कही हुई विधि वर्णित हुई।

११५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, जगत्के बीच ये मांसभोजी मनुष्य विविध भक्ष्य त्यागके महाराक्षससमूहकी भांति नृशंस होते हैं। ये लोग जिस प्रकार मांसभक्षणको अभिलाष किया करते हैं, अनेक प्रकारके अपूप, शाक और खाण्डव वस्तुओंकी भोजन करनेमें वैसी इच्छा नहीं करते; इसलिये इस विषयके विचारनेमें मेरी बुद्धि अत्यन्त मुग्ध होती है। मेरी समझमें मांससे बढ़के उत्तम मधुर रसयुक्त वस्तु और कुछ भी नहीं है। हे प्रभु भरतश्रेष्ठ! मांसके न खानेसे जो फल होता तथा भक्षण करनेसे जो दोष होते हैं, उसे भी सुननेकी इच्छा करता हूं। हे धर्म्मज्ञ! कौन वस्तु भक्ष्य है, कौनसी अभक्ष्य है, उसे धर्म्मपूर्व्वक पूरी रीतिसे कहिये। हे पितामह! यह विषय जैसा है, तथा इसके त्यागनेसे जो फल मिलते और भक्षण करनेसे जो दोष हुआ करते हैं, उसे मेरे समीप वर्णन करो।

भीष्म बोले, हे महात्मा भरतश्रेष्ठ! तुमने जो कहा, वह यथार्थ है, भूलोकमें मांससे बढ़के परम रस और कुछ भी नहीं है। क्षुधित, क्षीण, सन्तप्त, ग्राम्य धर्म्ममें रत और मार्गसे थके हुए मनुष्योंके पक्षमें मांससे बढ़के श्रेष्ठ भक्ष्य दूसरा कुछ भी नहीं है। हे शत्रुतापन! मांस सदा ही बलको बढ़ाता तथा उत्तम पुष्टिकर विधान करता है; इसलिये कोई भक्ष्य भी मांससे श्रेष्ठ नहीं है। हे कौरवनन्दन! मांस न खानेसे जो सब फल प्राप्त होते हैं, उसे मैं कहता हूं, सुनो। जो मनुष्य दूसरेके मांससे निज मांस बढ़ानेकी अभिलाष करता है, उससे अत्यन्त क्षुद्र तथा नृशंस पुरुष दूसरा कोई भी नहीं है। जगत्के बीच प्राणसे अधिक प्रियपदार्थ और कुछ भी विद्यमान नहीं है, इसलिये जिस प्रकार मनुष्य अपने प्राणको बचाता है, दूसरोंके विषयमें भी उसी भांति दया करे। हे तात! शुक्रसे मांस उत्पन्न होता है, इस विषयमें सन्देह नहीं है; इसलिये उसे भक्षण करनेसे महान् दोष और भक्षण निवृत्तिको ही पुण्य कहा जाता है; परन्तु इस लोकमें वेदविहित विधिके अनुसार मांस भक्षण करनेसे दोष नहीं होता; ऐसी जनश्रुति है, कि "यज्ञके लिये पशुवृन्द उत्पन्न हुए हैं।" वेदविधिसे अन्यथा आचरणमें प्रवृत्त मनुष्योंके अनुष्ठानको राक्षसधर्म्म कहते हैं; क्षत्रियोंकी जो विधि दीख पड़ती है, उसे भी सुनो। क्षत्रियको बाहुबलसे प्राप्त हुए मांसको भक्षण करनेसे दोषयुक्त नहीं होता। हे महाराज! पहले समयमें अगस्त्य मुनिके द्वारा सर्व्व देवताओंके उद्देश्यसे जङ्गली पशु सब प्रकारसे प्रोक्षित हुए, इसहीसे मृगया प्रशंसनीय हुआ करती है, अपने प्राणको आशाको बिना त्यागे मृगया नहीं होती। हिंसक पशुओंसे अपने प्राणनाशकी सम्भावना रहती है, इसलिये प्राणपणसे होनेवाली मृगया दोषका कारण नहीं है; समतायुक्त होके मनुष्य मृगयामें पशुओंको मारता है अथवा पशुओंके द्वारा मारा जाता है। हे भारत! इस ही लिये राजर्षि लोग मृगयाके निमित्त जाते हैं, इसमें वे पापसे लिप्त नहीं होते और मृगयाको पाप नहीं समझते। हे कौरवनन्दन! सब जीवोंके विषयमें दया करनेके सदृश धर्म्म इस लोक और परलोकमें दूसरा कुछ भी नहीं है, दयावान मनुष्योंको कदापि भय नहीं होता, दयावान् तपस्वियोंको इस लोक और परलोकमें

जय होती है। धर्मज्ञ पुरुष अहिंसाको ही धर्मका लक्षण जानते हैं; जो कर्म अहिंसायुक्त हो, आत्मवान् पुरुष उसे ही करे; पितृयज्ञ और दैवयज्ञमें प्रोक्षित मांस ही हवि रूपसे वर्णित हुई है। मैंने सुना है, कि जो लोग दयावान् होके सब जीवोंको अभयदान करते हैं, सब जीव भी उन्हें अभय प्रदान करते हैं। घायल, स्खलित, क्षत, पतित, और कर्षित पुरुषोंकी सम विषम स्थलमें सब जीव ही रक्षा किया करते हैं। जो पुरुष भयके समयमें दूसरोंका भय छुड़ाता है, उसे हिंसक जीव और पिशाच राक्षस भी नहीं मारते; वह भय उपस्थित होनेपर उससे छुटकारा पाता है। प्राणदानसे बढ़के परम दान न हुआ और न होगा। यह निश्चय है, कि आत्मासे अधिक प्रिय और कुछ भी नहीं है। हे भारत! मरना सब जीवोंको ही अनभिलषित है, जीवको मृत्युके समय सदा ही दुःख होता है, सब जीव गर्भवास और जन्म जरा दुःखके सहारे सदा संसार-सागरमें परिभ्रमण करते हैं और मरनेसे डरते हैं। सब प्राणी गर्भवासके समय मूत्र, श्लेष्म और पुरीष प्रभृतिको अत्यन्त दारुण उत्कट, खार खट्टे और कड़वे रसोंसे पच्यमान हुआ करते हैं, मांसलोभी पुरुष जन्म लेके भी उस समय अवश तथा विवश रहनेसे बार बार छिद्यमान और पच्यमान् दीख पड़ते हैं, वे लोग उन्हीं योनियोंमें जन्म लेके फिर कुम्भीपाक नरकमें पकते हैं, वे आक्रान्त तथा मृयमाण होके बार बार भ्रमण करते हैं। पृथ्वीपर खोजनेसे आत्मासे अधिक प्रिय पदार्थ और कुछ भी नहीं देखा जाता, इसलिये आत्मावान् पुरुष सब प्राणियोंमें ही दयावान् होवे। हे महाराज! जो लोग जन्मसे ही मांस भक्षण नहीं करते, उन्हें निःसन्देह सुरपुरमें उत्तम महत् स्थान प्राप्त होता है। जो लोग जीनेकी इच्छा करनेवाले जीवोंका मांस भक्षण करते हैं, वे उन्हीं जीवोंके द्वारा भक्षित होते हैं, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है, हे भारत! जब कि वह मुझे भक्षण करता है, तब मैं भी उसे भक्षण करूंगा, 'मांस' शब्दका यही मांसत्व मालूम करो। हे महाराज! घातक सदा ही बध्य होता है, अनन्तर भक्षक पुरुष बध्य हुआ करता है; आक्रोष्टा पुरुष सदा ही आक्रुष्ट होता और द्वेष करनेवालेको द्वेषत्व प्राप्त हुआ करता है। जो पुरुष जिस शरीरसे जैसा कर्म करता है, वह उस ही शरीरसे उन फलोंको भोगता है। अहिंसा परमधर्म, अहिंसाही परम दम, अहिंसाही परमदान अहिंसाही परम तपस्या है, अहिंसा परम यज्ञ, अहिंसाही परम तप, अहिंसा परम बल, अहिंसा ही परम मित्र, अहिंसा परम सुख, अहिंसा परम सत्य और अहिंसा ही परम श्रुत है। सब यज्ञोंमें जो दान किया जाता है, सब तीर्थोंके स्नान तथा सब दानोंके फल अहिंसाके सदृश नहीं है। अहिंसक मनुष्योंकी तपस्या अक्षय होती है, अहिंसक पुरुष सदा ही यज्ञ करता और हिंसारहित मनुष्य सब जीवोंके पितामाता सदृश है। हे कुरुपुङ्गव! यह मैंने अहिंसाका फल कहा, इसकी अपेक्षा और जो सब अत्यन्त अधिक फल हैं, वे एक सौ वर्षमें भी नहीं कहे जा सकते।

११६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! जो लोग अकाम अथवा सकाम होकर महाध्वरमें मरते हैं, उन्हें कौनसी गति प्राप्त होती है? हे महाप्राज्ञ! महासमरमें मनुष्योंका प्राणत्यागना अत्यन्त दुःखकर है। समृद्धि, असमृद्धि शुभ वा अशुभ समयमें प्राण परित्याग करना जो अत्यन्त दुष्कर है, उसे आप जानते हैं; इसलिये इस विषयका कारण मेरे समीप वर्णन कीजिये। मैं आपको सर्वज्ञ जानता हूं।

भीष्म बोले, हे पृथ्वीपति युधिष्ठिर ! उत्तम अथवा अधम शुभ वा अशुभकर्ममें इस संसारके बीच उत्पन्न हुए प्राणिवृन्द जिस भावसे रत रहते हैं, मेरे समीप उसका कारण सुनो ; तुमने यह उत्तम प्रश्न किया है। हे राजन युधिष्ठिर ! इस विषयमें द्वैपायन और कीटके सम्वादयुक्त पुराना इतिहास कहता हूं। पहले समयमें विप्रवर कृष्णद्वैपायन ब्रह्मरूपसे विचर रहे थे, उस समय उन्होंने शकटके मार्गमें शीघ्रताके सहित दौड़ते हुए एक कीटको देखा सब जीवोंकी गतिज्ञ और शरीरधारी मात्रकी भाषा जाननेवाले सर्वज्ञ वेदव्यासने उस समय कीटको देखकर यह वचन कहा —

व्यासदेव बोले, हे कीट ! तुम अत्यन्त भयभीत और आतुर दीख पड़ते हो, तुम दौड़के कहां जाओगे ? तुम्हें किससे भय हुआ है ?

कीट बोला, हे महाबुद्धिमान ! इस बृहत शकटका शब्द सुनके मुझे भय हुआ है, यह अत्यन्त दारुण शब्द सुननेमें आता है, परन्तु उसने मेरा जीवन नष्ट नहीं किया, इसी लिये इस स्थानसे जाता हूं। प्रहार करनेमें जिस प्रकार निश्वासयुक्त गऊके बछड़ोंका शब्द होता है, वैसे ही इस शब्दको सुनता हूं। बहुत सा भार ढोनेवाले मनुष्योंके सन्निकर्षनिबन्धनसे शकटके अनेक प्रकारके शब्द कानके छिद्रमें प्रवृष्ट होते हैं। मेरे सदृश कीटयोनिमें उत्पन्न हुए जीव ऐसे शब्दको नहीं सुन सकते, इस ही निमित्त अत्यन्त दारुण भयसे इस स्थानको छोड़के दूसरे स्थानमें जाता हूं, जीवोंको मृत्यु से ही दुःख है, जीवन अत्यन्त दुर्लभ है, इसीलिये मैं डरके भागता हूं और सुख छोड़के दुःखमें भी नहीं जाता हूं।

भीष्म बोले, व्यासदेवने कीटका ऐसा वचन सुनके उससे कहा, हे कीट ! किस प्रकार तुम्हें सुख होता है, तुम शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध और अनेक भांतिकी भोज्यवस्तुओंका भोगना नहीं जानते। हे कीट ! इसलिये तुम्हारा मरना ही कल्याणकारी है।

कीट बोला, हे महाप्राज्ञ ! जीव सब ठौर रत रहता है, इसलिये इस योनिमें भी मुझे सुख है, ऐसा जानके ही मैं जीवित रहनेकी अभिलाष करता हूं। इस कीटशरीरमें भी देहके अनुसार सब विषय प्रवर्त्तित हुए हैं, जङ्गम और स्थावर जीवोंके भाग पृथक् पृथक् हैं। हे प्रभु ! मैं पहले जन्ममें अधिक धनवाला शूद्र जातीय मनुष्य था, मैं ब्रह्मनिष्ठ न होकर नृशंस कृपण, वृद्धिजीवी, तीक्ष्णवादी, अतनिकृतिप्रज्ञ और सब भांतिसे लोगोंका द्वेषी था। परस्परमें कल करके परधन हरनेमें रत रहता था, गृहके बीच सेवकों और अतिथियोंको परित्याग करके स्वयं पहले भोजन करता और मत्सरतासे स्वादुकाम तथा नृशंस होकर भोजन करनेकी इच्छा करता, अर्थ काम होके देव और पितृ यज्ञके लिये श्रद्धापूर्व्वक अन्न प्रदान नहीं करता था ; पहले अन्न दान करनेकी इच्छा करके भी फिर उससे विमुख रहता था। गुप्तभावसे जो लोग शरणागत होनेके लिये मेरा आसरा करते और जो लोग डरके मेरे शरणागत होते थे, मैं अकस्मात उन्हें परित्याग करता था और जो लोग अभय प्रार्थना करते थे, उनका परित्राण नहीं करता था। दूसरोंके धन, धान्य, पीनेकी वस्तु, अद्भुत वस्त्र और सम्पत्ति देखके मैं निरर्थक डाह करता था, मैं दूसरेके ऐश्वर्यकी इच्छा न करके लोगोंके सुखको देखनेसे ही ईर्षा करता था। अपने प्रयोजनके लिये दूसरोंका भी धर्म, अर्थ और काम, नष्ट करता था, पूर्व्व जन्ममें मैंने नृशंस तथा बहुतसे गुणयुक्त कार्य्य किये थे ; मैं जिस प्रकार अपने पुत्रको परित्याग करनेसे दुःख होता है, मैं इस समय उन कर्म्मोंको स्मरण करके उसी भांति शोक करता हूं। मैंने जो कुछ सत्कर्म्म किया था, उसका कुछ भी फल नहीं जानता ; मैं बूढ़ी

जननोंका सत्कार करता तथा ब्राह्मण लोग भी मेरे द्वारा पूजित हुए थे। हे ब्रह्मन्! एकबार जाति-गुणसे युक्त कोई अतिथि सञ्जनिक्रमसे मेरे गृहपर आया था, मैंने उसकी पूजा की थी, इसही लिये आशाशक्तिने मुझे परित्याग नहीं किया। हे तपोधन। मैं कर्म्मके सहारे भविष्यत सुख देखता हूं, इसलिये आपके समीप उस कल्याणके विषयको सुननेकी अभिलाष करता हूं।

११७ अध्याय समाप्त।

व्यासदेव बोले, हे कीट! तू जो तिर्य्यक् योनिमें जन्म लेके शुभकर्म्मके सहारे भस्म नहीं होता है, वह मेरा ही कार्य्य है. मैं तपबलसे देखते ही तेरा उद्धार करूंगा, तपोबलसे प्रबल और कुछ भी नहीं है। मैं जानता हूं कि तू अपने किये हुए पापकर्म्मोंसे कीटानुकीट हुआ है, यदि धर्म्मको मानो, तो फिर धर्म्म प्राप्त होगा। देव और तिर्य्यक् प्रभृति सब कोई कर्म्मभूमिमें अपने किये हुए पाप पुण्यका फल भोग किया करते हैं। मनुष्योंका धर्म्म और गुण कामका हेतु हुआ करता है। बचन बुद्धि हाथ पावसे रहित विपश्चित अथवा मूर्ख जो जीवित रहते हैं, उनका लोग उपहास करते हैं; श्रेष्ठ विप्र जीवित रहके सूर्य्य चन्द्रमाकी पूजा करते और उत्तम कथा कहा करते हैं। हे कीट! इसलिये मैं तुझे उस ही ब्राह्मणयोनिमें प्रेरण करूंगा, तू ब्राह्मणत्व पानेसे कर्म्मोंका फल भोगेगा और सब जीवोंको परित्याग करेगा, तब मैं तुझे परब्रह्ममें लीन करूंगा अर्थात् तुझे ब्रह्मविद्या दान करूंगा। वह कीट 'ऐसा ही हो,' यह बचन कहके मार्गमें ही स्थित हुआ, इतने ही समयमें यदृच्छाक्रमसे बृहत् शकटसमूह आ पहुंचा, पहियेके नीचे दबकर उस कीटने उसी समय प्राण परित्याग किया, अत्यन्त तेजस्वी व्यासदेवकी कृपासे वह कीट अनेक योनियोंमें जन्म लेकर अन्तमें क्षत्रियवंशमें उत्पन्न हुआ; वह श्वावित, गोधा, बराह, मृग, पक्षी, चाण्डाल, शूद्र और क्रमसे वैश्यजातीय होकर जब जिस योनिमें जन्मता था, तभी उस ऋषिसत्तमका दर्शन करनेके लिये आता था। वह कीट उस सत्यवादी ऋषिके द्वारा इसी प्रकार उपदिष्ट होके प्रतिजन्ममें ही स्मरण करते हुए दोनों हाथ जोड़के सिरसे उनका चरण छूता था। अनन्तर वह कीट क्षत्रिय होके बोला, मैंने दशजन्ममें यह अभिलषित अतुल पद पाया है, क्यों कि मैं कीटत्व प्राप्त करके राजपुत्र हुआ हूं; मैं सुवर्णमालासे युक्त अत्यन्त बलवान हाथियोंपर चढ़ता हूं। रथमें जुते हुए काम्बोज देशीय घोड़े, ऊंट और अश्वतरी मुझे ले चलनेके लिये तय्यार हैं; मैं बान्धवों और सेवकोंके सहित पलान्न भक्षण करता हूं। हे महाराज! मेरे समीप वायुयुक्त पंखे चल रहे हैं और मैं महामूल्यवान् शय्यापर उत्तम रीतिसे पूजित होकर सुखसे सोता हूं। जिस प्रकार देववृन्द इन्द्रकी स्तुति करते हैं, वैसे ही रात बीतनेपर सूत, मागध और बन्दीजन मेरी स्तुति किया करते हैं। आप अत्यन्त तेजस्वी और सत्यसन्ध हैं, आपकी कृपासे मैंने कीट होके भी राजपुत्रत्व पाया है। हे महाप्राज्ञ! इसलिये मैं आपको प्रणाम करता हूं, कहिये कौनसा कार्य्य करूं? मैंने आपके तपोबलके सहारे यह निर्द्दिष्ट पद पाया है।

व्यासदेव बोले, हे राजन्! आज मैं तुम्हारे यदृच्छा बचनसे पूजित हुआ. कीटत्वकी प्राप्त होके भी तुम्हें इस समय जुगुप्सित स्मृतिशक्ति उत्पन्न हुई है। पहले तुमने अत्यन्त आततायी धनी शूद्र होके जिन पापोंको किया था, उसका विनाश नहीं है। तुमने जो तिर्य्यक्योनिमें जन्म लेकर मेरी पूजा की थी, उस ही सुकृतके सहारे मेरा दर्शन पाया है। तुम रणभूमिमें ब्राह्मणोंके निमित्त अपना प्राण देके राजपुत्रत्व त्यागके

ब्राह्मणत्व पाओगे। हे राजपुत्र! तुम सहजमें ही आप्त दक्षिणायज्ञ पूरा करके स्वर्गलोकमें सुखी तथा अव्यय ब्रह्ममय होके प्रमुदित होगे। तिर्य्यक्योनिसे शूद्रत्व प्राप्त होता है, शूद्रत्वसे वैश्यत्व और वैश्यत्वसे क्षत्रियत्व प्राप्त हुआ करता है, साधुवृत्त क्षत्रिय ब्राह्मणत्व पाते और सत्त्व-भाव सुशील ब्राह्मणोंको स्वर्गलोक मिलता है।

११८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे महाराज! उस वीर्य्यवान कीटने क्षत्रियत्व पाके पूर्व्व वृत्तान्त स्मरण करते हुए विपुलतपस्या की थी; उस धर्म्मार्थवेत्ताकी वैसी महत् तपस्या देखकर उस समय कृष्णद्वै-पायन उसके समीप गये।

व्यासदेव बोले, हे कीट! क्षात्रधर्म्म सब प्राणियोंको प्रतिपालन करनेसे देवव्रत है, इस-लिये क्षत्रियधर्म्मको देवव्रतरूपसे ध्यान करते हुए मरनेपर तुम्हें विप्रत्व प्राप्त होगा। तुम शुभाशुभवेत्ता और आत्मवान् होकर पूरीरीतिसे प्रजाका पालन करो। पवित्र शुभकार्य्योंसे अशुभ कर्म्मोंका सम्विभाग करो; स्वधर्म्माचरणमें रत रहके आत्मवान् तथा प्रसन्न रहो, अनन्तर क्षत्रिय शरीर त्यागनेपर ब्राह्मणत्व पाओगे।

भीष्म बोले, हे नरसत्तम युधिष्ठिर! वह कीट महर्षि कृष्णद्वैपायनका वचन सुनके धर्म्म-पूर्व्वक प्रजा पालन करके अन्तमें वनवासी हुआ और प्रजा पालन करनेसे परलोकमें जाकर ब्राह्मणत्व पाया। अनन्तर महायशस्वी महा-प्राज्ञ कृष्णद्वैपायन मुनि उस समय उसे ब्राह्मण देखकर फिर उसके निकट गये।

वेदव्यास बोले, हे श्रीमान् विप्रवर! तुमने शुभयोनिमें शुभकर्म्म किया और पापयोनिमें पापाचरण किया है, तथापि तुम किसी प्रकार व्यथित न होना; यदि तुम्हें धर्म्म लोपका भय हो, तो उत्तम धर्म्माचरण करो।

कीट बोला, हे भगवन्! आपकी कृपासे ही मैंने सुखसे भी अधिक सुख पाया है; धर्म्ममूल सम्पत्तियोंको पानेसे अब मेरा पाप नष्ट हुआ है।

भीष्म बोले, हे महाराज! कीटने भगवान् व्यासदेवके वचनानुसार दुर्लभ ब्राह्मणत्व पाके पृथ्वीको सैकड़ों यज्ञयूपोंसे अङ्कित किया। हे पार्थ! अनन्तर उस ब्रह्मवित्तम कीटने ब्रह्म सालोक्य पाके व्यासदेवके वाक्य अनुसार उस समय स्वकर्म्म फल निवृत्त सनातन ब्रह्मपद पाया। हे तात! तुम्हारे प्रभावसे जो सब क्षत्रिय युद्धमें मरे हैं, उन्होंने भी पवित्र गति पाई है, इसलिये तुम शोक मत करो।

११९ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे साधुश्रेष्ठ पितामह! विद्या तपस्या और दान, इन तीनोंके बीच श्रेष्ठ क्या है? इस विषयको आप मेरे समीप वर्णन करिये।

भीष्म बोले, इस विषयमें प्राचीन लोग मैत्रेय और कृष्णद्वैपायनके सम्वादयुक्त यह पुराना इतिहास कहा करते हैं। हे महाराज! कृष्णद्वैपायन मुनि अज्ञातरूपसे विचरते हुए काशीपुरीमें मुनिमण्डलीके बीच मैत्रेयके समीप उपस्थित हुए। मुनिसत्तम मैत्रेयने उन्हें समा-गत और समासीन जानकर उनकी पूजा की और उत्तम भोजन कराया। महात्मा वेद-व्यास मुनि उस श्रेष्ठ सुगन्धियुक्त सार्व्वकामिक उत्तम अन्न भोजन करके प्रस्थान करते हुए प्रसन्न तथा विस्मित हुए। मैत्रेय ऋषि उस कृष्णद्वैपायन मुनिको विस्मययुक्त जानके बोले, हे धर्म्मात्मन्! आप किस निमित्त विस्मित हुए? उसका कारण कहिये। हे विद्वन्! आप तपस्वी और धृतिमान् हैं, तब आपको किस लिये प्रमोद हुआ? मैं आपको प्रणाम करके पूछता हूं, कि यह आपका तपोभाग्य अथवा

सुखभाग्य है ? क्यों कि आश्चर्य दर्शनके अतिरिक्त विस्मय नहीं होता। उपाधिपरिच्छिन्न जीव और अनुपाधिक ब्रह्म पृथक् आचरण करनेपर भी जीवन्मुक्त और मुक्तामुक्त उभयात्मक आत्माकी अपेक्षा मैं आत्माको अल्पान्तर जानता हूं, क्यों कि आप मेरा भाग्य देखकर विस्मित हुए हैं ; इसलिये मैं आपकी अपेक्षा आत्माको अल्पान्तर रूपसे अनुमान करता हूं और मित्र-वंशसे आपको विशिष्ट समझता हूं।

व्यासदेव बोले, समुद्र शोषणादृश अत्यन्त अशक्य विषय अतिक्रान्त और अतिवादके द्वारा यह विस्मय पूरी रीतिसे उत्पन्न हुआ है, यह कैसे सम्भव हो सकता है, कि वेद वचन सत्य नहीं है ? वेद किसलिये मिथ्या कहेगा ? पुरुषके इन तीनों विषयोंको पण्डित लोग उत्तम व्रत कहते हैं,—किसीसे द्रोह न करना, दान और सत्य वचन कहना। ऋषियोंके द्वारा यह वेदोक्त विधि पहले ही परिकल्पित हुई है, इस समय इसे ही करना चाहिये और पहले भी ऐसा ही सुना गया था। अवश्य कर्त्तव्य दान अल्प होनेपर भी महाफलजनक हुआ करता है। तुमने असूयारहित हृदयसे प्यासे पुरुषको जल दान किया है, तुमने स्वयं तृषित होके भी मुझे प्यासा जानकर यह अन्न दान किया है, इसलिये महायज्ञके सहारे जिन लोकोंको जय किया जाता है, तुमने इस अन्नके सहारे उन महत् लोकोंको जय किया है, इसी लिये मैं तुम्हारे पवित्र दान और तपस्यासे विस्मित हुआ हूं। तुम्हारे सत्त्व पुण्यसे तुम्हारा दर्शन भी पुण्यसापेक्ष है, तुम्हारा विधानज कर्म्म भी पुण्य गन्धयुक्त मालूम होता है। हे तात ! तीर्थ और वेद व्रत समाप्त करनेकी अपेक्षा तुम्हारे दर्शनादि अत्यन्त पवित्र हैं। हे द्विज ! सब पवित्र विषयोंके बीच दान ही परम शुभ है, यदि सब पवित्र विषयोंसे दान श्रेष्ठ न होवे, तब तुम जिन उत्तम वेदोक्त विधानोंकी प्रशंसा करते हो, उन सबसे दान ही उत्तम है, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है। दातृगणोंने जो मार्ग बनाया है, मनीषि लोग उस ही मार्गसे गमन किया करते हैं, वेही प्राणदाता हैं, उन दातागणोंमें ही सबके धर्म्म प्रतिष्ठित हैं। उत्तम रीतिसे पढ़ा हुआ वेद जिस प्रकार श्रेष्ठ है, इन्द्रिय संयम और सर्व्वत्याग जैसा विशिष्ट है, दान भी उसी भांति अत्यन्त श्रेष्ठ है। हे तात ! तुम सहजमें ही उत्तम सुख पावोगे, बुद्धिमान् मनुष्य सुखसे भी अधिक सुख पाता है। हमारे प्रत्यक्षमें निःसन्देह इसके मिलनेपर अर्थ, दान और समस्त यज्ञोंके फल श्रीमान् पुरुषको सुखसे प्राप्त होते हैं। हे महाप्राज्ञ सुखके अनन्तर दुःख और दुःखके बाद सुख सदा स्वभाविकही दिखाई देते हैं। पण्डित लोग मनुष्योंके तीन प्रकारके वृत्त वर्णन करते हैं,—पुण्य, पाप और पुण्यपातक ; इन तीनोंके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है, स्वकर्म्मसे निवृत्त पुण्य-पापकी भांति ब्रह्मनिष्ठ पुरुषका पुण्यपाप नहीं गिना जाता यज्ञ, दान तथा तपस्या करनेवाले मनुष्य ही पुण्यात्मा हैं और जो लोग जीवोंके विषयमें द्रोह करते, वेही पापी हैं ; जो लोग दूसरेका द्रव्य लेते, वे दुःखी तथा पतित होते हैं ; इसके अतिरिक्त अन्य जो सब कर्म्म हैं, वे न पुण्य हैं और न पाप ही हैं। क्रीड़ा करो, बुद्धिवान् हो, आनन्दित रहो दान और यज्ञ करो, तो वेद तथा तपस्वीवृन्द तुम्हें अभिभव करनेमें समर्थ न होंगे।

१२० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अत्यन्त श्रीसम्पन्न कुलमें उत्पन्न बुद्धिमान् बहुदर्शी कर्म्मोंकी प्रशंसा करनेवाले मैत्रेय ऋषिने ऐसा वचन सुनके उत्तर दिया।

मैत्रेय बोले, हे महाप्राज्ञ ! आपने जैसा कहा, वह निःसन्देह वैसा ही है। हे विभु !

परन्तु मैं आपकी अनुमतिसे कुछ कहनेकी इच्छा करता हूं।

व्यासदेव बोले, हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! आप जिस विषयको जहांतक कहनेकी इच्छा करते हैं, उसे यथार्थ रीतिसे कहिये, मैं तुम्हारा वचन सुननेकी अभिलाष करता हूं।

मैत्रेय बोले, दानसम्बन्धीय विद्या और तपस्यासे भी निर्म्मल है, आपने निःसन्देह आत्मज्ञान लाभ किया है, आपका आत्मज्ञान निबन्धनसे महत् लाभ हुआ है, मैं फिर सुसमृद्ध तपस्यायुक्तकी भांति न्यायबुद्धिसे आलोचना करके देखता हूं,—आपके दर्शनसे हम लोगोंका अभ्युदय होता है। ये जो स्वाभाविक कार्य्य होते हैं, उसे मैं आपकी कृपासे ही हुआ समझता हूं। तपस्या, शास्त्रज्ञान और यौनि, ये सभी ब्राह्मणत्वकी हेतु हैं,—इन तीनों गुणोंके समुदित होनेपर पुरुष द्विज हुआ करता है। ब्राह्मणोंके तृप्त होनेपर पितर और देववृन्द तृप्त होते हैं, शास्त्रज्ञानयुक्त ब्राह्मणसे श्रेष्ठ और कोई भी नहीं है; अन्न ही तपस्वरूप है, अन्नके बिना कुछ भी मालूम नहीं होता, चारों वर्णोंके विधान, धर्म्माधर्म्म और सत्य मिथ्या कुछ भी नहीं रहते। जैसे मनुष्यका उत्तम रीतिसे जुते हुए खेतमें फल प्राप्त होते हैं, वैसे ही दाता शास्त्रसम्पन्न ब्राह्मणोंको दान करनेसे उसका फल भोग किया करता है। शास्त्रज्ञान और सुचरित्रयुक्त दानके प्रतिग्रहीता ब्राह्मण यदि विद्यमान न रहें, तो धनियोंका धन निरर्थक होता है। अविद्वान् पुरुष अन्न भक्षण करके अन्नको नष्ट किया करता और अदामान अन्न भी उसे नष्ट करता है। जो अन्न रक्षा करता है, उसे ही अन्न कहते हैं; जो अन्नको नष्ट करता है, वह मूर्ख पुरुष नष्ट होता है। विद्वान् पुरुष ही अन्न भोजन करनेमें समर्थ हैं, वेही ईश्वर होके अन्न उत्पन्न करते और अन्नसे उत्पन्न हुआ करते हैं; यह व्यतिक्रम अत्यन्त सूक्ष्म है। दाता को जैसा पुण्य होता है, प्रतिग्रहीताको भी उस ही प्रकार पुण्य हुआ करता है; ऋषियोंने ऐसा कहा है, कि दाता और प्रतिग्रहीता दोनों ही लोकतन्त्र निभाते हैं। शास्त्रज्ञान और सचरित्र युक्त ब्राह्मण जिस स्थानमें निवास करते हैं, उसी स्थानमें पवित्र दानका फल इस लोक और परलोकमें भोग किया जाता है। जो लोग शुद्धयोनिमें उत्पन्न होके सदा तपस्या करनेमें रत रहते हैं और जो लोग दान तथा अध्ययनयुक्त हैं, वे सदा पूजने योग्य हैं, उन साधुओंने जो पथ तय्यार किया है, उस ही मार्गसे गमन करनेपर मनुष्य मुग्ध नहीं होता, वे लोग सनातन यज्ञवाह स्वर्गमार्गके प्रदर्शक हैं।

१२१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, भगवान् वेदव्यासने मैत्रेयका ऐसा वचन सुनके उत्तर दिया; कि भाग्यसे ही तुम ऐसे ज्ञानवान् हुए हो, भाग्यसेही तुम्हारी ऐसी बुद्धि हुई है, लोग आर्य्य पुरुषोंके गुणोंकी भली भांति प्रशंसा करते हैं। भाग्यसे ही रूपमान, वयोमान और श्रीमान तुम्हें निःसन्देह अभिभव नहीं किया, यह तुम्हारे ऊपर दैवकी कृपा है। दानसे बढ़के जो कुछ श्रेष्ठवस्तु है, उसे तुम्हारे समीप कहता हूं। इस लोकमें जो सब आगम शास्त्र तथा जो कुछ प्रवृत्ति हैं, वे वेदको अगाड़ी करके यथारीतिसे प्रवृत्त हुई हैं। मैं दानकी प्रशंसा किया करता हूं, आप तपस्याज्ञानकी प्रशंसा करते हैं; तपस्या ही पवित्र और तपस्या ही वेद तथा स्वर्गकी साधन है। तपस्या और विद्यासे मनुष्यको महत्त्व मिलता है, मैंने ऐसा सुना है, कि जितने दुष्कृत हैं, वे तपस्यासे नष्ट होते हैं। दुरन्वय, दुष्प्रधर्ष दुष्प्राप्य और दुरतिक्रम जो कुछ विषय हैं, वे सब तपस्यासे प्राप्त होते हैं, इसलिये तपस्या ही बलवान् है। सुरापीनेवाले, परधनहारी, भ्रूणहत्यारे और गुरुतल्पगामी मनुष्य तपस्याके सहारे सब पापोंसे

उत्तीर्ण होते तथा समस्त पापोंसे मुक्त हुआ करते हैं। जो लोग सर्व्वज्ञ होकर ज्ञाननेत्रसे सब विषयोंको अवलोकन करते हैं और जो लोग किसी प्रकारके तपस्वी हों, उन्हें नमस्कार करना उचित है। शास्त्रज्ञानयुक्त तथा तपस्वी मनुष्य सबके ही पूजनीय हैं; दान देनेवाले मनुष्य इसलोकमें श्रीसम्पन्न होकर परलोकमें सुख पाते हैं। जो लोग यहांपर सुकृत कर्म्म करते हैं, वे अन्नदानके सहारे इसलोक, ब्रह्मलोक तथा बलवत्तर लोकोंको पाते हैं। पूजित पुरुष इनकी पूजा करते और सम्मानित मनुष्य सम्मान करते हैं; वे दाता पुरुष जिन स्थानोंमें जाते हैं, उन्हीं स्थानोंमें सब भांतिसे प्रशंसित होते हैं। चाहे अकर्त्ता हो, चाहे कर्त्ता ही होवे, जिसका जैसा कर्म्म है, वह वैसा ही फल पाता है। चाहे ऊर्द्ध्वमें हो, चाहे अधोभागमें ही होवे, तुम निजलोकमें ही जाओगे और वहां खानपानको अथवा जो कुछ इच्छा करोगे, उसे ही पाओगे। तुम मर्य्यादा सहंशमें उत्पन्न हुए हो, शास्त्रज्ञानसम्पन्न, अनृशंसतायुक्त, कौमार ब्रह्मचारी और व्रतवान् हो, इसलिये जीवोंके सुहृद बनो; गृहस्थाश्रमियोंका यह पहला धर्म्म ग्रहण करो। जो पति भार्य्यासे प्रसन्न रहता है और जो भार्य्या पतिसे सन्तुष्ट रहती है, जिस कुलमें सब कोई इसी प्रकार हैं, उसी वंशमें कल्याण विद्यमान रहता है। जैसे जलसे शरीर निर्म्मल रहता है और जिस प्रकार सूर्य्यके प्रकाशसे अन्धकार दूर हो जाता है, वैसे ही दान और तपस्यासे सब पाप नष्ट हुआ करते हैं। हे मैत्रेय! तुम्हारी स्वस्ति होवे, मैं निज स्थानपर जाता हूं, इस विषयको मनमें रखना, ऐसा करनेसे तुम्हारा कल्याण होगा। अनन्तर मैत्रेयने प्रणाम करके उनकी प्रदक्षिणाकी और हाथ जोड़के बोले, कि "आपकी स्वस्ति प्राप्त होवे।"

१२२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वधर्म्मज्ञ पितामह! मैं आपके समीप सती स्त्रियोंके सदुदाचार सुननेकी इच्छा करता हूं, इसलिये आप मेरे समीप इस विषयको वर्णन करिये।

भीष्म बोले, सुमना नामी केकयराजकी पुत्रीने देवलोकमें सर्व्वज्ञा सब तत्त्वोंको जाननेवाली मनस्विनी शाण्डिलीसे प्रश्न किया। हे कल्याणि! तुम कैसे चरित्र और कैसे आचारसे देवलोकमें आई हो? तुम अग्निशिखाकी भांति निज तेजसे प्रज्वलित होती हो और ताराधिपकी पुत्रीसदृश अपने प्रभावसे द्युलोकमें आई हो; क्लान्तिहीन होके तुमने रजोरहित श्वेत वस्त्र धारण किया है। हे शुभे! विमानमें रहके अपने तेजके द्वारा तुम्हें सहस्र गुण शोभा प्राप्त हुई है। तुम अल्प तपस्या, दान और नियमके सहारे इसलोकमें नहीं आई हो; इसलिये मुझसे तुम अपना यथार्थ वृत्तान्त कहो। चारुहासिनी शाण्डिलीने सुमनाका ऐसा प्रश्न सुनके मधुर भावसे उत्तर दिया। मैं गेरुआवस्त्र धारण करनेवाली तथा वल्कलधारिणी नहीं हूं, मैंने सिर मुड़ाने अथवा जटायुक्त होनेसे स्वर्गलोक नहीं पाया; मैंने अप्रमत्त रहके कदाचित पतिको अहित वा कठोर वचन नहीं कहा है। देवताओं, पितरों और ब्राह्मणोंकी पूजामें सदा सावधान रहती और सास-ससुरकी सेवा करनेमें सदा नियुक्त रहती थी। चुगलोंके कार्य्यमें कभी प्रवृत्त नहीं होती थी और न यह मुझे अभिमत है, घरके बाहर कदापि निवास नहीं करती थी और बहुत समयतक किसीके साथ वार्त्तालाप भी नहीं करती थी। किसी असत्कर्म्म, हांसी अथवा कार्य्यसे अहित किम्वा रहस्य वा अरहस्य किसी विषयमें ही सर्व्वथा प्रवृत्त नहीं होती थी। कार्य्यके निमित्त घरसे निकलके फिर जब मेरे पति गृहपर आते थे तब उन्हें बैठाके सावधान होकर उनकी पूजा करती थी। मेरे पति जिस अन्नको उत्तम

नहीं जानते और जिसका अभिनन्दन नहीं करते थे, वैसे भक्ष्य वा भोज्य वस्तुओंको मैं परित्याग करती थी। परिवारके निमित्त जो कुछ वस्तु लाई जाती तथा जो कुछ कर्त्तव्यकार्य्य रहता था, भोरके समय उठके मैं स्वयं उन कार्य्योंको करती तथा दूसरोंसे कराती थी; किसी कार्य्यसे यदि मेरे पति विदेशमें जाते थे, तो उस समय मैं माङ्गलिक सूत्र धारण करके संयत होके रहती थी। पतिके विदेश जानेपर मैं अञ्जन, महावर, स्नान, माला धारण, उबटन और प्रसादनका अभिनन्दन नहीं करती थी। पतिके सुखसे शयन करनेपर मैं आन्तरिक कार्य्य रहनेपर भी उठके उन्हें परित्याग करके नहीं जाती थी, उससे मेरा मन सन्तुष्ट रहता था। कुटुम्बके निमित्त स्वामीको सदा आयासयुक्त नहीं करती थी, गापनीय विषयोंको गुप्त रखती और सदा हर्षयुक्त रहती थी। जो स्त्री सावधान होकर इस धर्मपद्धतिका पालन करती है, वह स्त्रियोंके बीच अरुन्धतीकी भांति स्वर्गलोकमें निवास किया करती है।

भीष्म बोले, महाभागा तपस्विनी शाण्डिली देवी सुमनासे यह पतिधर्म्म कहके उस समय अन्तर्द्धान हुई। हे पाण्डव! जो लोग प्रतिपर्व्वमें यह आख्यान पाठ करते हैं, वे देवलोक पाके नन्दनकाननमें सुखी हुआ करते हैं।

१२३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरतश्रेष्ठ! साम और दान इन दोनोंमेंसे आपके मतमें कौनसा श्रेष्ठ है? इन दोनोंके बीच जो उत्तम हो, आप उसे ही कहिये।

भीष्म बोले, कोई पुरुष सान्त्वनावाक्यसे प्रसन्न होते और कोई दानसे प्रसन्न हुआ करते हैं; इसलिये पुरुष प्रकृतिको मालूम करके साम और दानकी सेवा करे। हे भरतश्रेष्ठ! प्रचण्ड प्राणी भी जिस प्रकार सान्त्ववादसे आराधना करते हैं, उस सामवादके समस्त गुण मेरे समीप सुनो।

किसी वनमें एक ब्राह्मण राक्षस द्वारा पकड़े जानेपर जिस प्रकार छूटा था, इस विषयमें प्राचीन लोग उस ही पुरातन इतिहासको कहा करते हैं। किसी वाग्बुद्धियुक्त ब्राह्मणने वनके बीच भूखे राक्षसके द्वारा पकड़े जानेपर क्लेश पाया था; उस बुद्धिशक्तिसे युक्त, शास्त्रज्ञान निपुण ब्राह्मणने क्षुब्ध वा व्यथित न होकर अत्यन्त भयङ्कर राक्षसको देखके उसके विषयमें सान्त्ववाक्य प्रयोग किया। राक्षसने उस ब्राह्मणको वचनसे सम्मानित करके कहा, कि मेरे प्रश्नका उत्तर देनेसे तुम्हें छुटकारा मिलेगा। मैं किसलिये पाण्डुवर्ण तथा कृश हुआ हूं? मेरे इस ही प्रश्नका उत्तर दो। अनन्तर ब्राह्मणने मुहूर्त्त भर सोचके अव्यग्रभावसे इस गाथाके सहारे निशाचरके प्रश्नका उत्तर दिया।

ब्राह्मण बोला, तुम विदेशमें रहके अन्य स्थानोंमें रहनेवाले सुहृदोंके अतिरिक्त अकेले ही विपुल ऐश्वर्य्य भोगते हो, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण तथा कृश हुए हो। हे निशाचर! तुम्हारे मित्रगण उत्तम रीतिसे सेवा करनेपर भी निज दोषसे तुम्हारे विषयमें विरक्त हुए हैं, इस ही लिये तुम पाण्डुवर्ण वा कृशित होते हो। बोध होता है, कि तुम गुणवान् होकर अन्य सम्मानयुक्त मनुष्योंको निर्गुण देखते हो और तुम विनीतचित्त तथा प्राज्ञ होकर अन्य पुरुषोंको मूर्ख जानते हो, इसीसे पीले वा कृश होते हो। समान अथवा अधिक धन ऐश्वर्य्ययुक्त तथा तुम्हारे गुणोंकी अपेक्षा अत्यन्त निकृष्ट मूर्ख लोग बोध होता है, तुम्हारी अवज्ञा करते हैं, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि तुम वृत्तिके विना क्लेशित होके भी वृत्तिप्राप्तिकी निन्दा करते हुए महानुभावताके कारण दुःखित

होनेसे पीले और दुबले हुए हो। हे साधु! शत्रुत्वके वशमें होकर आपको पीड़ित करके कोई पुरुष तुम्हारे द्वारा मरके तुम्हें पराजित समझता है, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मुझे बोध होता है, कि काम क्रोधके वशमें रहनेवाले पुरुष कुपथमें पड़के क्लेश पाते हैं, तुम उनके निमित्त सोच करते हो, इसीसे पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, तुम बुद्धिमान् होके भी मूर्खोंसे मिलकर दुर्वृत्त लोगोंसे क्रियमाण होनेसे पीले और दुबले हुए हो। बोध होता है, कि मित्रमुख शत्रुने साधुकी भांति आचरण करके तुम्हें ठगा है, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। जान पड़ता है, तुम प्रकाशार्थ गति और रहस्य विषयमें निपुण तथा ज्ञानी होनेपर भी तत्त्वज्ञ पुरुषोंसे पूजित नहीं होते, इसी निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। अभिनिविष्ट असत पुरुषोंके निकट तुम्हारे संशयरहित विषयोंके कहनेपर भी तुम्हारे गुणोंका विकाश नहीं हुआ, उसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि तुम धन बुद्धि और शास्त्रज्ञानसे रहित होके केवल तेजस्वितासे ही महत्पदकी इच्छा करते हो, उसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मैं तुम्हें तपस्याके सहारे प्राणिहित चित्त और वनवासका अभिलाषी जानता हूं, बान्धवगण तुम्हें अभिनन्दित नहीं करते हैं, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। दृढ़रूपसे हृदयप्रिय श्रुतपूर्व क्रुद्ध मूर्खको विनयपूर्वक मनानेमें समर्थ नहीं हुए, इसीसे तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुम भार्य्याके विषयमें प्रीति किया करते हो, कोई तुम्हारा प्रतिवेशी महाधनशाली युवा पुरुष सुन्दर और कामी है, इसीलिये तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। अर्थवान पुरुषोंके बीच यथासमयमें अभिहित तुम्हारा उत्तम वचन शोभित नहीं हुआ, इस ही निमित्त तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, कि किसी इच्छित कार्य्यमें कोई तुम्हें आसक्त करके सदा तुम्हारे समीप प्रार्थना करता है, इस ही हेतु तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। मालूम होता है, तुम्हें सुन्दर गुणयुक्त और पूज्यमान जानके कोई सुहृद अपना अर्थज्ञान करता है, इस ही निमित्त तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। भीतरी अभिप्राय रहनेपर भी बोध होता है, कि तुम लज्जापूर्वक अभिमत विषयकी इच्छा नहीं कर सकते, और प्राप्त विषयोंमें शिथिलता निबन्धनसे विचार करनेमें असमर्थ हो, इसीलिये पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। जगत्में अनेक प्रकारकी बुद्धि और रुचियुक्त मनुष्योंको तुम निज गुणोंके सहारे ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो, बोध होता है, इस ही हेतु तुम कृश तथा पाण्डुवर्ण हुए हो। तुम मूर्ख और भीरु होके अल्प धन, विद्या, विश्राम तथा दानसे यशकी इच्छा करते हो, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुमने किसी चिरभिलषित फलको नहीं पाया और अन्य पुरुषोंने तुम्हारी बुराई की है, इस ही कारण तुम पाण्डुवर्ण और कृश हुए हो। बोध होता है, तुम अपने किये हुए दोषोंको न देखकर अकारण ही अभिशप्त होनेसे पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुमने सुहृदों और आर्त्त पुरुषोंकी पीड़ा तथा दुःख दूर नहीं किया, तुम अत्यन्त अर्थहीन और गुणरहित हो, इस ही लिये पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुम साधुओंको गृहस्थ, दुष्टोंको वनवासी और मुक्त पुरुषोंको आश्रममें देखके पाण्डुवर्ण, तथा कृश होते हो। लोग तुम्हारे यथा समयमें अभिहित धर्म्म, अर्थ और कामयुक्त वचनमें विश्वास नहीं करते मालूम होता है, इस ही लिये तुम पाण्डुवर्ण और कृश होते हो। तुम मनीषी तथा जिज्ञासु होकर अनिपुण लोगोंके द्वारा, धन देके उसे पाकर जीविका निर्वाह करते हो,

बोध होता है इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण्ण और कृश हुए हो। मालूम होता है, कि बुद्धियुक्त मनुष्योंके पाप और अवसन्न मनुष्योंके कल्याणको देखकर तुम सदा निन्दा किया करते हो, इस ही लिये पाण्डुवर्ण्ण और कृश हुए हो। तुम सुहृदोंके अनुरोधसे परस्पर विरुद्ध पुरुषोंके प्रियकार्य्यको करनेकी इच्छा किया करते हो, बोध होता है, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण्ण और कृश हुए हो। तुम श्रोत्रिय पुरुषोंको विकर्म्मस्थ और ज्ञानियोंकी अजितेन्द्रियत्वसमर्थता हो, मालूम होता है, इस ही निमित्त पाण्डुवर्ण्ण और कृश हुए हो, इस ही प्रकार राक्षसने अत्यन्त पूजित होकर उस ब्राह्मणकी पूजा करके उसके सङ्ग मित्रता की और बहुतसा धन देके उसे बिदा किया।

१२४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह गङ्गानन्दन! अत्यन्त दुर्लभ कर्म्मक्षेत्रमें मनुष्यजन्म पाके कल्याणकी इच्छा करनेवाले दरिद्र पुरुषोंका जो कर्त्तव्य हो सब दानोंके बीच जो उत्कृष्ट तथा मान्य हो और पूज्य पुरुषोंको जो वस्तु जिस प्रकार देनी योग्य है, आप उस रहस्यविषयको बखान करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! यशस्वी पाण्डुपुत्रका प्रश्न सुनके भीष्मने उनसे सब धर्म्मोंका परम गोपनीय विषय कहना आरम्भ किया।

भीष्म बोले, हे भरतवंशावतंस महाराज! पहिले समयमें भगवान् व्यासदेवने मेरे समीप जिन गोपनीय धर्म्मोंका वर्णन किया था, तुम सावधान होके उसे ही सुनो। हे महाराज! यह विषय देवताओंके समीप भी गोपनीय है। पहिले अक्लिष्टकर्म्मा यमने नियुक्त होके इसे पाया था। हे अनघ! जिसके सहारे देव, पितर, ऋषि, राक्षसगण, श्री, चित्रगुप्त और सब दिग्गज प्रीतियुक्त होते हैं, जिसमें सरहस्य महाफलजनक ऋषि धर्म्म ख्यात हुआ करता है और जिसमें महादान तथा समस्त यज्ञोंके फल ख्यात होते हैं; चाहे लोग दोषयुक्त हों वा निर्दोष होवें, जो इस विषयको जानते हैं अथवा जानके इसका आचरण करते हैं, वे उन सब गुणोंसे युक्त होते हैं। जिस स्थानमें दश पशु मारे जाते हैं, उस स्थान और पशुघाती जातिको दशसूना कहते हैं, एक चक्रवान तैलिक दशसूनाके तुल्य है, ध्वज अर्थात् सुरा पीनेवाला दश चक्र अर्थात् तेलीके सदृश है, एक वेश्या दश सुरा पीनेवालेके समान है और एक क्षुद्र राजा दश वेश्याके तुल्य है। राजा इन सबको अर्द्धरूपसे तुलना करते हुए अधिक कहा गया है, प्रतिग्रहके निमित्त यह सब तारतम्य वर्णित हुआ करता है। दुष्प्रतिग्रहसे विमुख मनुष्योंको पुण्य लक्षणयुक्त पवित्र धर्म्मार्थ काम शास्त्रको जानना उचित है; देवताओंके द्वारा विहित हुआ पवित्र धर्म्म व्याकरण महत रहस्य और धर्म्मसंयुक्त आख्यान सुनना चाहिये। श्राद्धकर्म्ममें जो पितरोंका गुप्त विषय और समस्त देवताओंका अखिल रहस्य कहा जाता है; जिसमें सरहस्य महाफलजनक ऋषिधर्म्म ख्यात होता है। जो मनुष्य इसे पाठ करते हैं, उन्हें महायज्ञ और समस्त दानोंके फल प्राप्त होते और उनके समीप सब शास्त्र पूरी रीतिसे स्फुरित हुआ करते हैं, जो लोग सुनके फल कहते हैं, वे स्वयं नारायण स्वरूप हैं। जो मनुष्य अतिथियोंको पूजा करते हैं, उन्हें गोदान, तीर्थफल और यज्ञोंका फल मिलता है। जो लोग शास्त्र सुनते और श्रद्धायुक्त होके कार्य्य करते हैं, जिनका अन्तःकरण पवित्र है, उन श्रद्धावान् साधु पुरुषोंके द्वारा सब लोक विजित होरहे हैं। श्रद्धावान् साधु पुरुष पापोंसे छूट जाते, वे कभी किसी पापमें लिप्त नहीं होते, परलोकमें जानेपर उन्हें सदा धर्म्म प्राप्त होता है। कुछ

समयके अनन्तर देवदूतने अन्तर्हित होके इन्द्रसे पूछा, उस काम गुणसे युक्त भिषग्वर दोनों अश्विनीकुमारोंकी आज्ञासे मैं मनुष्यों, पितरों और देवताओंके समीप उपस्थित हुआ हूं; किसलिये श्राद्ध विषयमें कर्त्ता और भोक्ता मैथुन विवर्ज्जित हुए हैं और किसलिये तीन पिण्ड पृथक् पृथक् प्रविभक्त हुए हैं। पहला पिण्ड किसे देना चाहिये, मध्यम पिण्ड किसे मिलता है और पिछला पिण्ड किसके लिये सृत हुआ है? इसे मैं जाननेकी इच्छा करता हूं। श्रद्धावान् दूतका यह धर्मसङ्गत वचन सुनके पूर्व्व दिशामें स्थित देवताओं और पितरोंने उस खेचरकी पूजा करके कहा।

पितृगण बोले, हे खेचरोत्तम! तुमने सुखसे आगमन किया है न? तुम्हारा मङ्गल हो, तुमने गूढ़अर्थयुक्त परम उत्तम प्रश्न किया है, उसका उत्तर सुनो। जो पुरुष श्राद्ध करके वा श्राद्धमें भोजन करके स्त्रीके समीप जाता है, उसके पितर उस महीनेमें उस ही वीर्य्यके बीच शयन किया करते हैं। अब तीनों पिण्डोंके विभागको विस्तारके सहित कहता हूं। जो पिण्ड नीचेको गमन करता है, उसे जलमें आविष्ट हुआ जाने, मध्यम पिण्डको पत्नी भोग किया करती है, उनमेंसे जो तीसरा पिण्ड है, उसे अग्निमें डाले, यह धर्मपूर्व्वक कही गई श्राद्धविधि कदापि लुप्त नहीं होती। जो लोग श्राद्ध करते हैं, उनके पितर प्रसन्नचित्त और सदा सन्तुष्ट रहते हैं, उनकी सन्तान वृद्धि होती तथा उसका धन अक्षय होता है।

देवदूत बोला, आप लोगोंने विस्तारपूर्व्वक क्रमसे सब पिण्डोंके पृथक् पृथक् विभागके विषय कहे और तीनों पिण्डोंमें पितरोंका निरुक्त भी वर्णन किया; एक मात्र समुद्धृत पिण्ड अधःप्रदेशमें किसके समीप जाता है और वह किस प्रकार देवताओंको प्रसन्न करता तथा पितरोंका उद्धार किया करता है? पत्नी अनुज्ञात मध्यम पिण्ड भोजन करती है, पितरगण किस निमित्त उसको कव्य भोग किया करते हैं? इसके बीच जो अन्तिम पिण्ड अग्निके निकट जाता है, उसकी क्या गति होती है और वह किसके निकट गमन किया करता है? तीनों पिण्डोंकी जो गति होती है और पिण्डदाताको जो फल व्यवहार तथा पथ प्राप्त होता है, उसे सुननेकी इच्छा करता हूं।

पितृगण बोले, हे गगनेचर! तुमने जो प्रश्न किया वह अत्यन्त महत् रहस्ययुक्त और अद्भुत है, हम लोग इससे प्रसन्न हुए हैं, देवता तथा मुनिगण ऐसे ही प्रश्नकी प्रशंसा किया करते हैं, वेभी इसी प्रकार पितृकार्य्यका विशेष निर्णय नहीं जानते। केवल महानुभाव चिरजीवी मारकण्डेय मुनि जो कि पितृभक्तिसे वर पाके महायशस्वी हुए हैं, उनके अतिरिक्त दूसरे लोग इस विषयको नहीं जानते। भगवान्से समीप तीनों पिण्डोंकी गति सुनके देवदूतने श्राद्धविधिके निश्चयमें जो प्रश्न किया था, सावधान होकर मेरे समीप उन तीनों पिण्डोंकी गति सुनो। जो पिण्ड जलमें समर्पण किया जाता है, वह चन्द्रमाको प्रसन्न करता है। हे महाबुद्धिमान्! चन्द्रमा देवताओं और पितरोंको प्रीतियुक्त करते हैं। पुत्र-कामनावाली पत्नी पितरोंकी आज्ञानुसार जो मध्यम पिण्ड भोजन करती है, उससे पितामहगण पुत्र प्रदान किया करते हैं। जो पिण्ड अग्निमें डाला जाता है, उसका विषय सुनो; उससे पितरवृन्द परितृप्त होते और प्रसन्न होके अभिलषित दान किया करते हैं। तीनों पिण्डोंके बीच जैसी गति होती है, वह विषय तुम्हारे समीप कहा गया। श्राद्धभोक्ता ब्राह्मण यजमानके पितृत्वको प्राप्त होता है। श्राद्धके दिन मैथुन न करना साधुसम्मत है, हे खेचरोत्तम! सदा पवित्र होकर श्राद्ध भोजन करना चाहिये, मैंने जिन सब दोषोंकी कथा कही है, वे उस ही प्रकार होते हैं,

अन्यथा नहीं होती इसलिये ब्राह्मण स्नान करके पवित्र और क्षमाशील होकर आहार भोजन करे; जो लोग पूरी रीतिसे इस ही प्रकार अनुष्ठान करते हैं, उनकी पूजाकी वृद्धि होती है। अनन्तर विद्युतप्रभ नामक महातपस्वी ऋषि जिनका रूप सूर्य्यके तेजसदृश प्रकाशमान था, वह धर्म्म रहस्योंको सुनके देवराजसे बोले, मनुष्य मोहित होकर तिर्य्यक्योनिके समस्त कीट, चींटी, सर्प, भेड़, मृग और पक्षियोंकी हिंसा किया करते हैं, इस कार्य्यमें वे लोग अत्यन्त ही पापभाजन होते हैं, इसलिये इन लोगोंको प्रतिक्रिया किस प्रकार होसकती है? अनन्तर देवताओं, तपस्वियों, ऋषियों और महाभाग पितरोंने उस मुनिकी पूजा की।

इन्द्र बोले, कुरुक्षेत्र, गया, गङ्गा, प्रभास और पुष्कर प्रभृति सब तीर्थोंका मन ही मन ध्यान करके अन्तमें जलमें स्नान करनेपर पुरुष इस प्रकार पापोंसे छूट जाता है, जैसे राहुके मुखसे चन्द्रमा मुक्त हुआ करता है, वह मनुष्य तीन दिन स्नान करके निराहारी रहे और गौओंकी पीठ स्पर्श करके बालधीको नमस्कार करे।

अनन्तर विद्युतप्रभने इन्द्रसे कहा, हे देवराज! यह अत्यन्त सूक्ष्म धर्म्म है, इसलिये इसे सुनो। वटजटाकषाय द्वारा घृष्ट और प्रियङ्गुसे अनुलिप्त होकर मनुष्य क्षीरके सहित साठ रात्रितक षष्टके धान्यको भक्षण करनेसे सब पापोंसे रहित होता है, ऋषियोंका विचारा हुआ और एक गोपनीय रहस्य सुनो। इसे मैंने महादेवके समीप उनके सङ्ग वार्त्तालाप करते हुए वृहस्पतिके मुखसे सुना है, हे देवेश शचिपति! तुम उसे सुनो, मनुष्य पहाड़पर चढ़के एक पांवसे स्थित होकर निराहारी ऊर्द्धबाहु तथा हाथ जोड़के सूर्य्यको देखे इस ही प्रकार महत् तपस्यायुक्त पुरुष उपवासका फल पाता है और सूर्य्यकिरणोंसे परितापित होकर सब पापोंसे रहित होता है, ग्रीष्मकाल और शीतके समय ऐसा आचरण करनेसे सब पाप नष्ट होते हैं। अनन्तर पापहीन पुरुषोंकी शाश्वती द्युति हुआ करती है, तब वे निज तेजसे सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होके फिर चन्द्रमा समान शोभित होते हैं। अनन्तर देवताओंके बीच देवराज शतक्रतु वृहस्पतिसे अत्युत्तम मधुर वचन बोले, मनुष्योंके गोपनीय धर्म्म और रहस्यके सङ्ग जो सब दोष हैं, उसे आप यथावत् वर्णन करिये।

वृहस्पति बोले, हे शचिपति! जो लोग सूर्य्यकी ओर मल मूत्र परित्याग करते, वायुके विपरीत द्वेष करते, जलती हुई अग्निमें समिध होम नहीं करते, जो लोग दूधके निमित्त बालवत्सा गऊ दूहते हैं, उनके दोषोंको कहता हूं, सुनो। हे इन्द्र! सूर्य्य, वायु, अग्नि और लोकमाता गौओंको ब्रह्माने उत्पन्न किया है, ये सब देववृन्द तथा मनुष्योंके परित्राण करनेमें समर्थ हैं। आप सब कोई एक एक धर्म्मविषय सुनिये जो सब दुर्व्वृत्त पुरुष और दुर्व्वृत्ता स्त्रियें सूर्य्यकी ओर मल-मूत्र परित्याग करती हैं, वे छियासी वर्ष कुल पालन हुआ करती हैं। हे देवराज! जो लोग वायुसे द्वेष करते हैं, उनकी गर्भस्थ प्रजा च्युत होती है। जो लोग महाप्रदीप्त अग्निमें समिध होम नहीं करते, उनके अग्निकार्य्यमें पावकदेवता हव्य भक्षण नहीं करते। इस लोकमें जो मनुष्य बालवत्सा गौओंका दूध पीता है, उसके दुग्धपोष्य कुलवर्द्धन सन्तान नहीं जन्मती। इसलिये प्रजाक्षय निबन्धनसे उसका कुल और वंश नष्ट होता है, कुलवृद्ध द्विजातियोंने पहले समयमें इसे देखा था; इसलिये मैं सत्य कहता हूं, कि ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाला मनुष्य त्यागने योग्य विषयोंको परित्याग करे और कर्त्तव्य विषयोंका अनुष्ठान करनेमें सदा यत्नवान् रहे।

अनन्तर मरुद्गणोंके सहित देवताओं और

महाभाग ऋषियोंने पितरोंसे प्रश्न किया, कि अल्पबुद्धिवाले मनुष्योंके किन कार्य्योंसे पितर लोग प्रसन्न होते हैं और उर्द्धदैहिक दान किस प्रकार अक्षय होता है? मनुष्य लोग कैसे कार्य्यों द्वारा पितरोंके अऋण होते हैं, इसे हम लोग सुननेकी इच्छा करते हैं, इस विषयमें हम लोगोंको अत्यन्त कौतूहल हुआ है।

पितृगण बोले, हे महाभाग। आप लोगोंने न्यायपूर्व्वक यह सन्देहका विषय पूछा है, उत्तम कार्य्य करनेवाले मनुष्योंके जिन कर्म्मोंसे हम लोग प्रसन्न होते हैं, उसे सुनो। मनुष्य अमावस्या तिथिमें काले रङ्गका वृषभ छोड़के तिलोदकसे तर्पण करे और वर्षाकालमें दीपक दान करनेसे पितरोंके निकट अऋण होता है, यह दान अक्षय निर्म्मलोक और महाफल दायक है, इससे हम लोगोंको सन्तोष होता है, इसीसे यह अक्षय रूपसे वर्णित हुआ है। जो मनुष्य श्रद्धावान होकर सन्तान उत्पन्न करते हैं, वे प्रपितामहगणको दुर्गम नरकसे उद्धार किया करते हैं। महातेजस्वी तपस्वी गर्ग पितरोंका वचन सुनके पुलकित होकर उनसे बोले, हे तपोधनगण! नीलवर्ण वृषभ छोड़ने, वर्षाकालमें दीपदान करने तथा तिलोदकसे तर्पण करनेसे क्या फल होता है?

पितृगण बोले काले बैलको पूंछसे यदि जल उठे, तो उससे पितृगण साठ हजार वर्ष तक तृप्त हुआ करते हैं। यदि वृषभ तटसे उठ्ठाहत कीचड़ उद्धार करके स्थित हो, तो पितरगण उसके सहारे निःसन्देह सोमलोकमें गमन करते हैं। वर्षाकालमें दीप दान करनेसे मनुष्य चन्द्रमाकी भांति शोभित होता है, जो लोग दीपक दान करते हैं, वे तमोरूप नहीं होते। हे तपोधन। जो मनुष्य अमावस्या तिथिमें उडुम्बरपात्रके द्वारा मधुयुक्त तिलोदक दान करते हैं, उनका यथार्थमें रहस्यके सहित श्राद्धकार्य्य सिद्ध होता है, उनकी सन्तान सदा हृष्टचित्त हुआ करती है। पिण्डदाताको कुल और वंश वृद्धिरूपी फल प्राप्त होता है, जो लोग श्रद्धावान् होके श्राद्ध करते हैं, वे पितरोंके समीप अऋण होते हैं, इस ही प्रकार् श्राद्धका समय और श्राद्धकी विधि निर्द्दिष्ट हुई है, इसलिये विधि पात्र और फल पूरीरीतिसे कही गई।

१२५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, "अनन्तर युवराजने विष्णुसे पूछा, किनकार्य्योंसे आप प्रसन्न होते और किस प्रकार आपको सन्तोष होता है?

विष्णु बोले, ब्राह्मणोंका परिवाद मुझे अत्यन्त ही विद्विष्ट है, ब्राह्मणोंके सदा पूजित होनेपर मैं निःसन्देह पूजित होता हूं। ब्राह्मण लोग सदा प्रणाम करनेके योग्य हैं, भोजनके अनन्तर सन्ध्याके समय शिष्टाचारके हेतु अपने दोनों पग अभिवादनीय हैं, जो मनुष्य गोमयसे लीपकर सुदर्शन मन्त्रके द्वारा पूजा करते हैं, मैं उन सब मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न होता हूं। वामन ब्राह्मण और जलसे निकले हुए वराहको देखके जो लोग उद्धृत धरतीपर सिर रखते हैं, उन्हें कोई अशुभ वा पाप नहीं होता। जो मनुष्य सदा अश्वत्थ, रोचना और गजकी पूजा करता है, उसके द्वारा देव, असुर तथा मनुष्योंके सहित समस्त जगत् पूजित होता है, मैं अपना रूप प्रकाशित करके यथार्थ रीतिसे उसकी पूजा ग्रहण करता हूं। जबतक सब लोग प्रतिष्ठित रहते हैं, तबतक यह मेरी ही पूजा है, दूसरेकी न जानना; अल्पबुद्धि मनुष्य इसे अन्यथा समझकर वृथा पूजा किया करते हैं, मैं उसे प्रतिग्रह नहीं करता, वह मुझे सन्तुष्ट नहीं करती।

इन्द्र बोले, चक्र, दोनों चरण, वराह, वामन, और उद्धृत धरतीको आप किसलिये प्रशंसा करते हैं? आपने सब जीवोंको उत्पन्न किया

हैं, आप ही सब प्राणियोंका संहार करते हैं, आप ही सब जीवों और मनुष्योंकी सनातनी प्रकृति हैं।

भीष्म बोले, अनन्तर विष्णुने हंसके यह वचन कहा, कि चक्रसे दैत्यदलका नाश हुआ है और पदसे वसुन्धरा आक्रान्त हुई थी, वराह रूप धरके मैंने हिरण्याक्ष दैत्यको मारा और वामनरूप धरके राजा बलिको जय किया था; इसलिये मैं इस ही प्रकार महानुभाव मनुष्योंके विषयमें प्रसन्न होता हूं; जो लोग मेरी पूजा करते हैं, उनकी पराभव नहीं होती। ब्राह्मण वा ब्रह्मचारीको आया हुआ देखके अगाड़ी ब्राह्मणकी आहुति प्रदान करनेसे उसका अमृत भोजन होता है। जो लोग सूर्य्यकी ओर मुख करके प्रातःसन्ध्या उपासना करते हैं, उन्हें सब तीर्थोंके स्नानका फल प्राप्त होता और वे सब पापोंसे छूट जाते हैं। हे तपोधनगण! आप लोगोंने जो सन्देहयुक्त होके प्रश्न किया था, उसका गुप्त विषय कहा गया, फिर क्या कहूं?

बलदेव बोले, मनुष्योंको सुख देनेवाला परम गुह्य विषय सुनो, जिसे मूढ़ लोग न जाननेसे प्राणियोंके द्वारा पीड़ित होके क्लेश पाते हैं। भोरके समय उठके जो मनुष्य गऊ, घृत, दही, सरसों और प्रियङ्गु फल स्पर्श करते हैं, वे पापरहित हुआ करते हैं। तपस्वी लोग अगाड़ी और पश्चात् भागमें समस्त प्राणियों तथा शूद्र विषयके उच्छिष्टकी परित्याग करते हैं।

देवबुन्द बोले, उत्तर दिशाकी ओर मुह करके जल भर उडुम्बर पात्र लेकर जो मनुष्य व्रतसङ्कल्प तथा उपवास करता है, उससे देवता लोग प्रसन्न होते और उसकी कामना सिद्ध होती है, इसके विपरीत मूर्ख लोग वृथा उपवास करते हैं। उपवास और पूजाके कार्य्यमें ताम्रपात्र श्रेष्ठ है। ताम्रपात्रसे ही बलि, भिक्षा, अर्घ और पितरोंको तिलोदक देना योग्य है, अन्यथा करनेसे अल्प फल होता है। देवबुन्द जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं, वह गुप्त विधि वर्णित हुई।

धर्म बोले, राजपुरुषोंके कार्य्य करनेवाले श्रेष्ठ ब्राह्मण, घण्टा बजानेवाले सेवक, गोरक्षक, वाणिज्य करनेवाले, कारुकुशीलव, मित्रद्रोही, अपढ़ और वृषलीपतिको देव तथा पितृकार्य्यमें किसी प्रकार दान देना उचित नहीं है, उन्हें दान देनेसे पिण्डदाताकी हीनता होती है और वह पितरोंको प्रसन्न नहीं कर सकता। अतिथि आशारहित होकर जिसके घरसे लौट जाता है, उसके पितर, देवता और तीनों अग्नि अतिथिके अप्रतिग्रह निबन्धनसे निराश होकर उसके गृहसे प्रस्थान करते हैं। जिसके गृहपर आके अतिथि अपूजित होकर चला जाता है, वह स्त्रीघ्न, गोघ्न, कृतघ्न, ब्रह्मघाती और गुरुतल्पग पुरुषके सदृश दोषभागी होता है।

अग्निदेव बोले, जो नीचबुद्धि मनुष्य पैरसे गौवों, महाभाग ब्राह्मणों और दीप्यमान अग्निको छूते हैं, उनके दोषोंको कहता हूं, सुनो। जो पुरुष ऐसा कार्य्य करता है, उसका नाम-वाचक शब्द स्वर्गको स्पर्श नहीं करता, उसके पितर भयभीत होते हैं और उससे देवताओंकी अधिक अप्रसन्नता होती है, महातेजस्वी अग्निदेव उसका हव्य ग्रहण नहीं करते। वह एकसौ जन्म नरकमें पड़ता है, किसी स्थानमें भी उसकी निष्कृति नहीं है, इसलिये गौवोंको कदापि पावसे छूना उचित नहीं है और महातेजस्वी ब्राह्मण तथा दीप्यमान अग्निको पैरसे स्पर्श न करना चाहिये। जो श्रद्धावान् मनुष्य अपने हितकी कामना करें, वे गऊ ब्राह्मण और अग्निको पांवसे स्पर्श न करें। जो पुरुष इन तीनोंको पैरसे छूता है, उसके विषयमें ये सब उपरोक्त दोष मेरे द्वारा वर्णित हुए।

विश्वामित्र बोले, धर्मसंहता सम्बन्धीय परम गोपनीय रहस्य सुनो। भादों महीनेके कृष्णपक्षमें मघा नक्षत्रकी त्रयोदशी तिथिमें गजच्छाया योग होनेपर जो लोग दक्षिण ओर मुंह

करके कुतपके समय परम अन्नसे पितरोंकी पूजा करते हैं, उस दानसे जैसा अधिक फल होता है, उसे सुनो। पूर्व्वोक्त रीतिसे जो लोग पितरोंका उपहार दान करते हैं, उनके द्वारा इस लोकमें तेरह वर्षमें होनेवाला उत्तम महत् श्राद्ध कर्म्म सिद्ध होता है।

गौओंने कहा, पहले समय ब्रह्मपुरमें इन्द्रके यज्ञ विष्णुपद और विभावसुके पथमें स्थित गौओंका बहुला, समङ्गा, अतोतुभया, चेमासखी और भूयसी नाम हुए थे। अनन्तर नारदके सहित सब देवताओंने सर्व्वसहा नाम रखा था। जो लोग इस मन्त्रके सहारे गौओंको अभिनन्दित करते हैं, उनके सब पापकर्म्म नष्ट होते और उन्हें इन्द्रलोक मिलता है, इसलिये गौओंकी सेवा करनेसे चन्द्रमाकी भांति द्युति प्राप्त होती है। जो लोग पर्व्वके समय गोसमूहके बीच इस देवगण सेवित मन्त्रको पढ़ते हैं, उन्हें न पाप है, न भय है, न शोक है और वे लोग इन्द्रलोकमें गमन किया करते हैं।

भीष्म बोले, अनन्तर लोकविख्यात वसिष्ठ प्रभृति महानुभाव सप्तर्षिगण पद्मयोनि प्रजापतिकी प्रदक्षिणा करके हाथ जोड़कर खड़े हुए तब उनके बीच ब्रह्मवित् वसिष्ठदेव यह वक्ष्यमाण वचन कहनेमें प्रवृत्त हुए। यह प्रश्न सब प्राणियोंका विशेष करके ब्राह्मण और क्षत्रियोंका हितकर है। द्रव्यहीन सच्चरित्र दरिद्र मनुष्य किस प्रकार किसी कर्म्मके सहारे इस लोकमें यज्ञका फल पाते हैं? प्रजापति उनका वचन सुनके कहने लगे।

ब्रह्मा बोले, हे महाभागगण! तुम लोगोंने जो प्रश्न किया है, उसका अर्थ अत्यन्त गूढ़ और सूक्ष्म है, यह मनुष्योंके लिये परम शुभ तथा कल्याणकारी है। हे तपोधनगण! जिस प्रकार मनुष्योंको निःसन्देह यज्ञका फल प्राप्त होता है, उसे मैं विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सुनो। पौष महीनेके शुक्लपक्षमें जिस दिन रोहिणी नक्षत्रका योग हुआ करता है, उस नक्षत्रयोगमें मनुष्य सूने स्थानमें शयन करे और एक वस्त्रधारी पवित्र स्नात श्रद्धायुक्त तथा समाहित होकर सोमरश्मि पान करनेसे महायज्ञका फल पा सकेगा। हे सूक्ष्मतत्त्वार्थदर्शी द्विजसत्तमगण! तुम लोगोंने मुझसे जो प्रश्न किया, मैंने तुम्हारे समीप उसका यह परम गुह्य विषय कहा है।

१२६ अध्याय समाप्त।

विभावसु बोले, जो मनुष्य पौर्णमासी तिथिमें उदय होते हुए चन्द्रमाकी ओर मुंह करके उसे अञ्जली भरके जल और घृतयुक्त अक्षत बलि उपहार रूपसे प्रदान करता है, उसका अग्निकार्य्य सिद्ध होता अर्थात् विष-अग्निमें होम करनेसे जो फल हुआ करता है, वह सिद्ध होता है। जो मूर्ख मनुष्य अमावस्या तिथिमें वनस्पतियोंकी शाखा पल्लव काटता है, वह एक पत्ता तोड़नेसे भी ब्रह्महत्या दोषसे लिप्त होता है। जो मूर्ख मनुष्य अमावस्यामें दतून करता है, उससे चन्द्रमा हिंसित होते और उसके पितर व्याकुल हुआ करते हैं; पर्व्वके समय सुपर्णगण उसके हव्यका ग्रहण नहीं करते, उसके पितरवृन्द क्रुद्ध होते हैं और उसका कुल वंशहीन होजाता है।

लक्ष्मी बोली, जिस पापयुक्त गृहमें जलशोंनके पात्र, आसन तथा अन्य भाजन इधर उधर पड़े रहते हैं और स्त्रियें आहत होती हैं, उस पाप युक्त गृहसे उत्सव और पर्व्वके समय देवता तथा पितृगण निराश होके गमन करते हैं।

अङ्गिरा बोले, जो पुरुष एकवर्षतक सुवर्च लाशलताकी जड़ हाथमें लेकर करञ्जक वृक्षके समीप दीपदान करता है, उसकी प्रजा बढ़ती है।

गार्ग्य बोले, मनुष्य सदा अतिथिसेवा करे, यज्ञशालामें दीपदान करे, दिनको न सोवे और

मांस भक्षण करावे। गऊ ब्राह्मणोंकी हिंसा न करे, तीर्थोंका नाम लेवे; यह महाफलदायक सरहस्य धर्म श्रेष्ठ है। सैकड़ों यज्ञ करनेवालेका हवि क्षययुक्त होता है, परन्तु श्रद्धावान् मनुष्योंके आचरित धर्मका नाश नहीं होता, इसके अतिरिक्त श्राद्धविधि, तीर्थसम्बन्धीय देवकार्य्य और पूर्व्वकालका यह परम गोपनीय विषय सुनो। रजस्वला, श्वित्ररोगवाली और बन्ध्या स्त्री जिस हविको देखती हैं, उसे देववृन्द भक्षण नहीं करते; जिसके हविको पूर्व्वोक्त स्त्रियें देखती हैं, उसके पितर तेरह बर्षतक असन्तुष्ट रहते हैं। श्वेतवस्त्र पहरके पवित्र होकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन और महाभारतका पाठ करावे, तो हवि अक्षय होती है।

धौम्य बोले, टूटे पात्र, खाट और कुक्कुट तथा गृहमें जो वृक्ष रहते हैं, वे सब अप्रशस्त हैं। पहलेके आचार्य्योंने कहा है, कि फूटे बरतन रखनेसे कलह होता है, टूटी खाट रखनेसे धनका नाश हुआ करता है, कुक्कुट अथवा कुत्ता रहनेपर देवगण हविभक्षण नहीं करते, वृक्षको जड़में निश्चय ही सर्प बिच्छू आदि प्राणी रहते हैं, इसलिये घरके बीच वृक्ष लगाना उचित नहीं है।

जमदग्नि बोले, जो पुरुष सैकड़ों अश्वमेध वाजपेय यज्ञ करता है अथवा अवाक्शिरा होके लटकता है, तथा बहुतसे सत्र करता है, परन्तु यदि उसका हृदय शुद्ध न रहे, तो वह निश्चय ही नरकमें गमन किया करता है, यज्ञ, सत्र और अन्तःकरणकी शुद्धि ये तीनों ही तुल्य हैं। किसी पुरुषने शुद्धचित्तसे ब्राह्मणको एक प्रस्थ सत्तू दान करके ब्रह्मलोकमें गमन किया था, इस विषयमें उसहीका प्रमाण पर्य्याप्त है।

१२७ अध्याय समाप्त।

वायु बोले, मनुष्योंके लिये सुखदायक कुछ धर्म्मविषय कहता हूं और रहस्यके सहित जो सब दोष हैं, उसे सावधान होकर सुनो। जो लोग सर्व्वदाके बीच चार महीनेतक वेदजाननेवाले ब्राह्मणोंको तिलोदक दान करते और शक्तिके अनुसार भोजन कराते हैं, अवश्य कर्त्तव्य अग्निकार्य्य निभाते, परम अन्नके आहार भोजन कराते, पितरोंको तिलोदक देते और दीपदान करते हैं, वे श्रद्धावान् समाहित मनुष्य इस ही बिधिसे एक सौ पशुबन्ध यज्ञका पुष्कल फल पाते हैं। इसे भी परम गोपनीय और अप्रशस्त जानो कि शूद्र यदि अरणिकी अग्निको देशान्तरमें ले जाय और यदि स्त्रियें सोमाज्यपय प्रभात यज्ञसे बचे हुए हविके द्वारा शुद्ध होवे, उसे जो ब्राह्मण धर्म्म समझता है, वह अधर्म्मसे लिप्त हुआ करता है। तीनों अग्नि उसपर क्रुद्ध होती, उसे शूद्रयोनि प्राप्त होती है, विशेष करके देव और पितृगण उसके विषयमें प्रसन्न नहीं रहते। उस विषयमें जो प्रायश्चित्त है, जिसे करनेसे मनुष्य भली भांति सुखी और शोकरहित होता है, उसे कहता हूं, सुनो। मनुष्य निराहारी और समाहित होकर तीन दिन गोमूत्र, गोमय, दूध और घृतसे अग्निकार्य्य करे; अनन्तर एक वर्ष पूरा होनेपर देवगण उसकी दान की हुई वस्तु प्रतिग्रह करते हैं और श्राद्धका समय उपस्थित होनेपर उसके पितर हर्षित होते हैं। यह रहस्यके सहित अधर्म्म और धर्म्मविषय कहा गया, स्वर्गकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंके परलोकमें गमन करनेपर यह स्वर्गमें सुखदायक हुआ करता है।

१२८ अध्याय समाप्त।

लोमश बोले, जो लोग दारपरिग्रह न करके पराई स्त्रीमें आसक्त होते हैं, श्राद्धकाल उपस्थित होनेपर उनके पितृगण निराश हुआ करते हैं। जो पुरुष पराई स्त्रीमें रत रहता, जो बन्ध्याकी उपासना करता और जो ब्रह्मस्व

ब्रह्मस्व हरता है, वे तीनों ही तुल्य दोषभागी होते हैं ; उनके पितर निःसन्देह असन्तुष्ट हुआ करते हैं ; देवता और पितृगण उनके दिये हुए हविको आदरपूर्व्वक ग्रहण नहीं करते ; इसलिये परस्त्री तथा बन्ध्या नारीको परित्याग करे। जो लोग अपने ऐश्वर्य्यकी इच्छा करें, उन्हें ब्रह्मस्व हरना उचित नहीं है ; धर्म्मसम्बन्धीय एक और गुप्त रहस्य सुनो। जो श्रद्धावान् मनुष्य सदा गुरुजनोंकी आज्ञा प्रतिपालन करता और प्रतिमहीनेकी द्वादशी और पूर्णिमासीके दिन ब्राह्मणोंको घृत अक्षत दान करता है, उसके द्वारा चन्द्रमा तथा महोदधि समुद्रकी वृद्धि होती है, इन्द्र उस प्रदाताको अश्वमेध यज्ञका चौथा भाग फल स्वरूप प्रदान करते हैं। एक दूसरा रहस्ययुक्त महाफलजनक धर्म्म सुनो, यह इस कलियुगमें मनुष्योंको सुखदेने वाला है। जो मनुष्य अत्यन्त भोरके समय उठके स्नान करता और समाहित होके ब्राह्मणोंको सफेद वस्त्र दान किया करता तथा जो मधुके सहित पितरोंको तिलोदक, दीप और कृशर प्रदान करता है, उसका फल सुनो। भगवान् इन्द्रने तिलपात्र दानका फल कहा है, कि जो लोग गोदान तथा शाश्वत भूमि प्रदान करते हैं तथा जो लोग बहुतसी दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ करते हैं, देवगण तिलपात्र दानके सहित उन सब दानों और यज्ञोंके फलोंको तुल्य समझते हैं। पितर लोग श्राद्धके समय तिलोदकको सदा अक्षय जानते हैं, दीपदान कृशर दान करनेसे दाताके पितामहगण प्रसन्न होते हैं। स्वर्गलोक और पितृलोकमें देवताओं तथा पितरोंसे पूजित यह ऋषिदृष्ट पुरातन विषय मैंने कहा है।

१२९ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर सब ऋषियों देवताओं और पितरोंने सावधान होकर तपोवृद्धा अरुन्धतीसे प्रश्न किया। अरुन्धती तपोवृद्धा समान ब्रह्मचारिणी है और जैसा महानुभाव वशिष्ठका प्रभाव है, इसका चरित्र भी वैसा ही है ; इसलिये ऋषि लोग इसी भांति निश्चय करके अरुन्धतीसे बोले, हे भद्रे ! हम लोग तुम्हारे समीप धर्म्मरहस्य सुननेकी अभिलाष करते हैं, तुम्हारे समीप जो धर्म्म अत्यन्त गोपनीय भावसे विद्यमान हो, तुम्हें उसका विषय वर्णन करना योग्य है।

अरुन्धती बोली, हे तपोधनगण! आप लोगोंके स्मरण करनेसे ही मेरे तपकी वृद्धि हुई, आप लोगोंकी कृपासे मैं रहस्यके सहित शाश्वत धर्म्म कहती हूं, उसे पूरी रीतिसे सुनिये। श्रद्धावान् मनुष्य तथा जिनका मन पवित्र हो, उन्हींके समीप इसे कहना योग्य है। अश्रद्धावान् अहङ्कारी, ब्रह्महत्यारे और गुरुतल्पगामी, इन चारों पुरुषोंके सङ्ग वार्त्तालाप करना योग्य नहीं है। इसलिये इनके निकट धर्म्म प्रकाश न करे। जो लोग बारह बरसतक प्रतिदिन एक एक कपिला गऊ प्रदान करते, जो मनुष्य प्रति महीने सदा सत्र किया करते और जो लोग ज्येष्ठ पुष्करमें सहस्र गो दान करते हैं, उनके धर्म्मका फल जिसके गृहमें अतिथि सन्तुष्ट होते हैं, उसके सदृश नहीं है। मनुष्योंको सुख देनेवाला दूसरा धर्म्म सुनो। श्रद्धावान मनुष्योंको यह रहस्ययुक्त धर्म्म प्रतिपालन करना उचित है। भोरके समय उठके जलयुक्त दाभ ग्रहण करके वही जल गोसमूहमें सेचन करे और निराहारी रहके वही जल माथेपर चढ़ावे, उससे जो फल होता है, उसे सुनो। तीनों लोकोंके बीच जो सब सिद्ध चारणों और मनीषियोंसे सेवित तीर्थ हैं, उनमें स्नान करनेसे जो फल होता है, गौओंके शृङ्गोदकसे अभिषिक्त होनेपर उसके समान फल हुआ करता है। अरुन्धतीका ऐसा वचन सुनके देवताओं, पितरों और सब प्राणियोंने सन्तुष्ट होकर धन्य धन्य कहके उसकी पूजा की।

ब्रह्मा बोले, हे महाभागे ! तुमने जो रहस्ययुक्त धर्म्म कहा, वह अत्यन्त आश्चर्य्ययुक्त है । हे धन्ये ! मैं तुम्हें वर देता हूं, सदा तुम्हारे तपकी वृद्धि हो ।

यम बोले, तुम्हारे समीप मैंने जो दिव्य कथा सुनी, वह अत्यन्त रमणीय है । अब हमारे प्रिय चित्रगुप्तका वचन सुनो । यह धर्म्मयुक्त रहस्य महर्षियोंको भी सुनना योग्य है, जो श्रद्धावान् मनुष्य अपने हितकी इच्छा करते हैं, उनका किया हुआ पाप परीय कुछ भी विनष्ट नहीं होता । पर्व्वके समय जो कुछ आदित्यके समीप पहुंचता है, मनुष्यके परलोकमें जानेपर भगवान् सूर्य्य उन सब विषयोंको जानते हैं और पुण्यात्मा मनुष्य उन्हीं विषयोंको भोग किया करते हैं । चित्रगुप्तका कुछ पवित्र मत कहता हूं, जल, दीपक, पादुका और कपिला गऊ सदा दान करना योग्य है ; पुष्कर तीर्थमें वेद जाननेवाले ब्राह्मणको कपिला (कामधेनु) गऊ दान करना उचित है । सब भांतिसे यत्नपूर्व्वक अग्निहोत्र करे, इसके अतिरिक्त दूसरे धर्म्म भी चित्रगुप्तके द्वारा वर्णित हुए हैं । हे सत्तमगण ! इसके फल पृथक् पृथक् रीतिसे सुनने योग्य हैं । कालक्रमसे सब प्राणी ही प्रलयको प्राप्त होंगे, उस समयमें वे दुर्गम स्थानोंमें पहुंचके भूख प्याससे पीड़ित तथा दह्यमान होकर परिपाकावस्था लाभ करेंगे, वहां भागनेका उपाय नहीं है, अल्पबुद्धि मनुष्य घोर अन्धकारमें प्रवेश करेंगे । उस समय जिसके सहारे पुरुष दुर्गम स्थानोंसे पार होता है, वह धर्म्म कहता हूं । थोड़े व्ययसे होनेवाले महत् प्रयोजन साधक कार्य्यसे परलोकमें सुख मिलता है, जलदानके दिव्य फल परलोकमें विशेष रीतिसे उपकारक हुआ करते हैं, वहांपर जलदाताके लिये पुण्योदका नदी विहित है, उसमें अक्षय शीतल जल अमृतसदृश हुआ करता है । जो लोग इस लोकमें जलदान करते हैं, वे परलोकमें उस नदीके जलको पीनेके अधिकारी हैं । दीपकदानसे जो फल होता है, उसे सुनो । दीपदाता मनुष्यको सदा अन्धकार नहीं दिखाई देता, उसे चन्द्रमा अग्नि और सूर्य्य प्रभा प्रदान करते हैं, देववृन्द उसका सम्मान किया करते और सब दिशा उसके समीप निर्म्मल होती हैं । दीपदान करनेवाला मनुष्य परलोकमें जाकर सूर्य्यकी भांति प्रकाशित होता है, इसलिये दीपदान और विशेष रीतिसे जलदान करना चाहिये । जो लोग पुष्कर तीर्थमें वेदपारग ब्राह्मणको कपिला गऊ प्रदान करते हैं, उनका उस विषयमें विशेष फल सुनो । जो लोग पुष्करमें कामधेनु दान करते हैं, उन्हें वृषभके सहित एक सौ गऊका फल मिलता है, जो कोई पाप ब्रह्महत्याके सदृश भी हो, उसे भी वह दान की हुई एक सौ गौवोंके सदृश कपिला गऊ दूर करती है, इसलिये पुष्करतीर्थमें जाके शुक्लपक्षमें कपिला गऊ अवश्य दान करना चाहिये । जो लोग सत्पात्र ब्राह्मणको दो पादुका दान करते हैं, उन्हें किसी विषयमें कुछ दुःख तथा कांटेका भय नहीं होता । छत्र दान करनेवाले मनुष्यको परलोकमें जानेपर सुखकरी छाया प्राप्त होती है, इस लोकमें दान करनेसे कदापि उसका विनाश नहीं होता, चित्रगुप्तका मत सुनके महातेजस्वी भगवान् सूर्य्य पुलकित होकर सब देवताओं और पितरोंसे बोले, कि जो श्रद्धावान् मनुष्य महानुभाव ब्राह्मणोंको यह सब वस्तु दान करते हैं, उन्हें किसी प्रकारका भय नहीं होता । कर्म्मदोषयुक्त नीचे कहे हुए इन पांचों पुरुषोंकी निष्कृति नहीं है, वे असम्भाष्य अनाचारी अधम मनुष्य परित्याज्य हैं,—ब्रह्महत्यारे, गोघाती, परस्त्री रत, अश्रद्धावान् और जो पुरुष स्त्रीको उपजीव्य किया करता है । ये सब पापकर्म्म करनेवाले प्रेतलोकमें जाकर रुधिरपीप खानेवाली मछलियोंकी भांति परिपाक लाभ करते

हैं। पितर, देवता, स्नातक ब्राह्मण और इनके अतिरिक्त जो सब तपस्वी हैं, उन्हें योग्य है, कि उक्त पांच पुरुषोंसे वार्त्तालाप न करें।

१३० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर महाभाग देवताओं, पितरों और ऋषियोंने राक्षसोंसे कहा। हे निशाचरगण! तुम सब कोई महाऐश्वर्यशाली अपरोक्ष निशाचर हो, तुम किस प्रकार जूठे अपवित्र और शूद्र मनुष्योंकी हिंसा किया करते हो? ऐसा रक्षोघ्न उपाय क्या है, जिसके सहारे तुम लोग गृहके बीच ही प्रनष्ट होजाओ, हम लोग इस विषयको तुम्हारे समीप सुननेकी इच्छा करते हैं।

निशाचरोंने कहा, मनुष्य मैथुनके द्वारा सदा जूठे होते हैं और जो लोग हीन पुरुषोंको श्रेष्ठ करते उत्तम जनोंका अपमान किया करते हैं, वे सदा जूठे हैं। जो मनुष्य मोहवश होकर मांस भक्षण किया करते, वृक्षकी जड़में सोते सिरपर मांस रखके शयन किया करते तथा शय्यापर पांवके स्थानमें सिर रखके सोते हैं, वे सभी जूठे हैं, इसलिये मनुष्योंके बहुतसे छिद्र हैं। जो लोग जलके बीच अपवित्र वस्तु और श्लेष्म परित्याग करते हैं, वे सब मनुष्य निःसन्देह हम लोगोंके भक्ष्य और वध्य हैं, जिनके इसी प्रकार स्वभाव और ऐसे ही व्यवहार हैं, उन्हीं मनुष्योंको हम लोग धर्षण किया करते हैं और जिसके कारणसे हम हिंसा करनेमें असमर्थ होते हैं, उन प्रतिघात विषयोंको सुनो। जो पुरुष गोरोचन समालम्भन और हाथमें वचा धारण करता है और उसमें रत होके माथेपर घृत अक्षत लगाता है तथा जो लोग मांस भक्षण नहीं करते, हम उनकी हिंसा करनेमें समर्थ नहीं हैं। जिसके गृहमें रातदिन अग्नि जलती रहती है, जिन गृहस्थोंके घरमें तरक्ष व्याघ्रके चमड़े तथा दांत रहते हैं, पर्व्वतकी गुफामें शयन करनेवाले स्थूल कच्छप, घृतका धूआं, बिड़ाल और काले तथा पीले बकरे विद्यमान रहते हैं, महाघोर राक्षसगण उन गृहोंमें जानेमें समर्थ नहीं हैं। हमारे समान पुरुष सुखपूर्व्वक सब लोकोंमें विचरते हैं, इसलिये गृहमें इन सब विषयोंके रहनेपर राक्षस लोग उन गृहोंमें उपद्रव नहीं कर सकते। जिसमें तुम लोगोंको महान् सन्देह हुआ था, वह विषय तुम्हारे समीप वर्णित हुआ।

१३१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर पद्म प्रतीकाश कमलयोनि ब्रह्मा देवताओं तथा शचिपति इन्द्रसे यह वचन बोले, यह रसातलचारी महाबली पराक्रमी रेणुक नाम तेजस्वी नाग है। इसके अतिरिक्त अत्यन्त तेजस्वी महाबलवान महाहस्तीगण पर्व्वत और वनके सहित समस्त पृथ्वीमण्डलको धारण कर रहे हैं; रेणुक तुम लोगोंकी अनुमतिके अनुसार वहां जाकर उन महागजोंसे गोपनीय धर्म्म पूछे। देवताओंने पितामहका वचन सुनके उस समय जिन स्थानोंमें वे धरणीधर दिग्गज अव्यक्त प्रभावसे वर्त्तमान थे, वहां रेणुकको भेजा।

रेणुक बोले, हे महाबली गजगण! मैं आप लोगोंके समीप गोपनीय धर्म्मोंको सुननेके लिये देवताओं और पितरोंकी आज्ञासे आया हूं। हे महाभागगण! इसलिये आप लोग समाहित होकर धर्म्मविषय कहिये।

दिग्गजगण बोले, कातिक महीनेमें कृष्णपक्षके अश्लेषा नक्षत्रयुक्त अष्टमी तिथिमें लोग श्राद्धके समय यताहारी और क्रोधरहित होकर नीचे कहे हुए मन्त्रको जपकर गुड़ोदन दान करें। बलदेव प्रभृति जो सब बलवान अनन्त अक्षय नित्यभोगी महाबली नाग हैं और

उनकी कुलमें उत्पन्न हुए जो महाभुज सर्प हैं, वे बल और तेजकी वृद्धिके लिये मेरे बलको प्रतिग्रह करें। जिस समय श्रीमान् नारायणने वसुन्धराका उद्धार किया था, पृथ्वीका उद्धार करनेवाले उस ही विष्णुके सदृश बल होवे, इस मन्त्रको पढ़के बिलके बीच बलि निवेदन करे, जब सूर्य्य अस्त होजाय, तब गजेन्द्र पुष्पसंयुक्त काले वस्त्रसे ढकी हुई बलिको बिलमें डाले। इसके प्रभावसे, रसातलमें हम लोग भारसे अत्यन्त पीड़ित होनेपर भी सन्तुष्ट होते हैं और पृथ्वीको धारण करनेका परिश्रम मालूम नहीं होसकता, हम लोग इस ही प्रकार भारार्त्त और निरपेक्ष होकर सब विषयोंको जानते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यदि उपवासी होकर एक वर्षतक इस ही प्रकार दान करें, तो उन्हें बहुत फल होता है। वाल्मीकमें बलि प्रदान करनेपर हमारे मतसे अत्यन्त फल हुआ करता है तीनों लोकोंमें जो सब महापराक्रमी नाग हैं, एक सौ वर्षतक यथार्थ रीतिसे उनका आतिथ्य होता है। देवताओं, पितरों और महाभाग ऋषियोंने दिग्गजोंका ऐसा वचन सुनके रेणुकको विधिवत् पूजा की।

१३२ अध्याय समाप्त

महेश्वर बोले, तुम लोगोंने सारतत्त्व उद्धार करके साधु धर्म्म वर्णन किया, अब मेरे समीप सब कोई गोपनीय धर्म्म सुनो। जिन मनुष्योंकी बुद्धि धर्म्मयुक्त है और श्रद्धावान हैं, उन्हें यह महाफल जनक रहस्ययुक्त धर्म्म उपदेश करना चाहिये। जो लोग सावधान होकर एक महीनेतक गवाह्निक नाम गो सेवा करते और दिनमें एकवार भोजन किया करते हैं, उन्हें जो फल मिलता है, उसे सुनो। ये सब महाभाग गौवें परम पवित्र रूपसे कही गई हैं, ये देव, असुर और मनुष्योंके सहित तीनों लोकोंको धारण कर रही हैं, इनकी सेवा करनेसे महापुण्य और महाफल मिलता है। गौवोंकी सेवा करनेवाले पुरुष प्रतिदिन धर्म्म उपार्ज्जन किया करते हैं; पहले सत्ययुगमें गोगण मेरे द्वारा अनुज्ञात हुई थी, अनन्तर पद्मयोनि प्रजापतिने मुझसे विनय की, उस ही निमित्त वृषभ मेरे ध्वजस्थानमें निवास करता है, मैं गौवोंके सहित क्रीड़ा करता हूं, इस ही निमित्त वे सदा पूजनीय हैं। महाप्रभावयुक्त वर देनेवाली गौवें उपासित होनेपर वरदान करती हैं, मनुष्य सब कर्म्मोंके करनेसे जो फल पाता है, गौवें वह सब अनुमोदन किया करती हैं। जो लोग एक महीनेतक गौवोंकी सेवा करते हैं उन्हें उस फलका चौथा भाग प्राप्त होता है।

१३३ अध्याय समाप्त।

स्कन्द बोले, सब कोई सावधान होके मेरा अनुमित धर्म्म सुनो। काले वृषभके दोनों शृङ्गोंसे मृत्तिका लेकर जो लोग तीन दिन अभिषेक करते हैं, उस धर्म्मका फल कहता हूं। वे सब पापोंसे रहित होकर परलोकमें आधिपत्य पाते हैं और वे मनुष्य जन्म लेनेपर शूर होते हैं। और भी एक दूसरा गोपनीय रहस्य सुनो। उदुम्बरपात्रमें मधुके सहित पक्वान्न रखके पौर्णमासी तिथिमें उदय होते हुए चन्द्रमाको बलि प्रदान करे। हे श्रद्धावान् तपोधनगण। उस विषयका नित्य धर्म्मफल सुनो। साध्यगण रुद्रगण आदित्यगण विश्वदेवगण दोनों अश्विनीकुमार मरुद्गण और वसुगण उस बलिको प्रतिग्रह करते हैं, उससे चन्द्रमा और महोदधि समुद्रकी वृद्धि होती है। यह रहस्ययुक्त सुखदायक धर्म्म मेरे द्वारा वर्णित हुआ।

विष्णु बोले, जो पुरुष असूयारहित श्रद्धावान् और सावधान होकर प्रतिदिन देवताओं

तथा ऋषियोंके गोपनीय धर्म्मोंका पाठ करता अथवा सुनता है, उसे कुछ भी विघ्न नहीं प्राप्त होते और न किसी भांतिका भय रहता है। जो सब रहस्ययुक्त शुभ और पवित्र धर्म्म वर्णित हुए हैं, जो पुरुष विशेष रीतिसे जितेन्द्रिय होके उसका पाठ करता है, उसे उन्हीं धर्म्मोंका फल प्राप्त होता है, उसके पाप छूट जाते और वह पापोंसे लिप्त नहीं होता। यह सब धर्म्म रहस्य पढ़के सुनानेवालोंको भी फल मिलता है, पितर और देवगण उनका अक्षय हव्यकव्य भोग करते हैं। जो मनुष्य पर्व्वके समय सावधान होके ब्राह्मणोंको यह विषय सुनाते हैं, वे ऋषियों देवताओं और पितरोंके अभिमत श्रीमान् और धर्म्म विषयमें सदा प्रवृत्त हुआ करते हैं; मनुष्य महापातकके अतिरिक्त सब पाप कर्म्म करके भी यह रहस्य धर्म्म सुननेसे पापहीन होता है।

भीष्म बोले, हे नरनाथ! व्यासदेवके कहे हुए सर्व्वदेव नमस्कृत देवताओंका यह धर्म्म रहस्य मेरे द्वारा वर्णित हुआ, यह रत्नपूरित पृथ्वीमें अत्यन्त उत्तम ज्ञानस्वरूप है; इसलिये धर्म्मज्ञ मनुष्योंको यह विषय अवश्य सुनना चाहिये। अश्रद्धावान्, नास्तिक, नष्टधर्म्म, नीच कर्म्म करनेवाले दुष्ट, अनात्मभूत पुरुषों और गुरुद्रोहियोंके निकट यह कथा न कहे।

१३४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भारत! इस संसारमें ब्राह्मणोंका भोज्य अन्न क्या है? क्षत्रिय किसका अन्न भोजन करे? वैश्यका भोज्य क्या है और शूद्र लोग किसका अन्न खायेंगे।

भीष्म बोले, ब्राह्मणोंको ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यका अन्न भोजन करनेमें कुछ हानि नहीं है, केवल शूद्रका अन्न ब्राह्मणोंके लिये वर्ज्जित है। क्षत्रियके विषयमें ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यका अन्न भोज्य है। केवल नीचकर्म्म करनेवाले सर्व्वभक्षी शूद्रोंका अन्न परित्याज्य है। वैश्योंके लिये ब्राह्मण और क्षत्रियोंका अन्न भोज्य है; जो लोग सदा अग्निहोत्र क्रिया करते, विविक्त और चातुर्म्मास व्रतमें रत हैं, उन वैश्योंको ब्राह्मण और क्षत्रियोंका अन्न खाना योग्य है। जो ब्राह्मण शूद्रका अन्न खाता है, वह पृथ्वीका मल भोग किया करता है, वह मनुष्यों तथा सब लोगोंका मल-भोजन किया करता है। जो ब्राह्मण शूद्रोंका अन्न खानेवाले हैं, वे पृथ्वीका मल भोजन करते तथा पृथ्वीका सारा मल भोग किया करते हैं। सन्ध्यावन्दन आदि श्रेष्ठकर्म्मोंसे युक्त ब्राह्मण लोग यदि शूद्रकी सेवा करें, तो वे सब कोई नरकगामी होते हैं। ब्राह्मणगण स्वाध्यायपाठ और मनुष्योंके स्वस्त्ययनमें रत रहें। क्षत्रिय लोगोंकी रक्षा और वैश्य मनुष्योंके पुष्टिकार्य्यमें प्रवृत्त होवे। प्राचीन ऋषियोंने कहा है, कि वैश्य जो कार्य्य करके धनप्राप्त करता है, उसे दान करनेसे जीवित रहता है, खेती गोरक्षा और वाणिज्य वैश्योंके कर्म्म हैं, इसलिये इसमें कुछ निन्दा नहीं है। जो पुरुष अपना कार्य्य छोड़के शूद्रका कर्म्म करता है, उसे शूद्रसदृश जानो, उसका अन्न किसी प्रकार भोजनके योग्य नहीं है। वैद्य, शस्त्रजीवी, पुराध्यक्ष, पुरोहित और बरस दिनतक वृथाध्यायी,—ये सब कोई शूद्रके समान हैं। इनके यहां जो पुरुष निरपत्रप होकर शूद्रकर्म्ममें भोजन करता है, उसे अभोज्य भोजन करनेसे दारुण भय प्राप्त होता है, उसका कुल वीर्य्य और तेज नष्ट होजाता है और वह धर्म्मसे रहित होके कुत्तेकी भांति क्रियाहीन होनेसे मरके तिर्य्यक्‌योनिमें जन्मता है। जो पुरुष वैद्यका अन्न भोजन करता है, वह पुरीष भक्षण किया करता है, पुंश्चलीका अन्न मूत्र स्वरूप है, शिल्पीका अन्न रुधिरके तुल्य है। जो साधुसम्मत ब्राह्मण विद्या उपजी-

वीका अन्न भोजन करता है, उसे शूद्रान्न भोजनका फल मिलता है, इसलिये साधु ब्राह्मण वैसे अन्नको भोजन न करे। प्राचीन लोग कहा करते हैं, कि निन्दनीय पुरुषका अन्न खाना रुधिरहृदन्न भक्षणसदृश है। पण्डित लोग खलान्न भोजनको ब्रह्महत्यासदृश जानते हैं, असत्कृत तथा विना निमन्त्रणके कदापि भोजन न करना चाहिये; यदि ब्राह्मण इस प्रकार भोजन करे तो वह शीघ्र ही व्याधियुक्त होता और उसका कुल नष्ट होता है। नगररक्षकका अन्न भोजन करनेसे चाण्डालत्व प्राप्त हुआ करता है। गोघाती, ब्रह्मघाती, सुरा पीनेवाले और विमातृगामीका अन्न भोजन करनेसे ब्राह्मण राक्षसोंके कुलकी वृद्धि करता है। नस्त धन हरनेवाले क्लीव और कृतघ्नका अन्न भोजन करनेसे मध्यदेशसे बाहर सवरस्थानमें जन्म हुआ करता है। हे कुन्तीपुत्र! यह मैंने अभोज्य और भोज्यका विषय विधिपूर्व्वक वर्णन किया, अब मेरे समीप तुम दूसरे किस विषयको सुननेकी इच्छा करते हो?

१३५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे पितामह! आपने जिसका अन्न भोज्य है और जिसका अभोज्य है, उसे वर्णन किया, परन्तु मुझे इस विषयमें सन्देह होता है; इसलिये आप उस संशयको दूर करिये। ब्राह्मणोंका हव्यकव्य प्रतिग्रहमें विशेष करके अनेक प्रकारके भोज्य विषयोंमें जो सब प्रायश्चित्त हैं, वह विषय आप मेरे समीप कहिये।

भीष्म बोले, हे महाराज! महानुभाव ब्राह्मण लोग प्रतिग्रह और भोज्य विषयोंमें जिसके सहारे पापोंसे छूटते हैं, वह तुम्हारे समीप कहता हूं। हे युधिष्ठिर! घृत प्रतिग्रह करनेसे सावित्री मन्त्रके द्वारा समिध॰ होम करना होता है, तिल प्रतिग्रहको भी घृतके समान जानो। मधुमांस और नमक प्रतिग्रह करनेसे सूर्य्यके उदयकाल पर्य्यन्त खड़ा रहके ब्राह्मण पवित्र होता है। काञ्चन प्रतिग्रह करनेसे ब्राह्मण गुरुस्तुति जप करते हुए लोगोंके सम्मुख कृष्णायस धारण करके सब पापोंसे मुक्त हुआ करता है। हे पुरुषश्रेष्ठ! इस ही प्रकार स्त्रियोंके धन और वस्त्र प्रतिग्रह करनेसे ब्राह्मण उपरोक्त जप करनेसे पापरहित होता है। अन्न प्रतिग्रह करने और पायस ऊखका रस, ऊख, तेल तथा पवित्र वस्तुओंको लेनेसे त्रिसन्ध्या जलमें निमज्जन करना होगा। धान्य, फूल, जल पिष्टमय वस्तु, यावक और दही, दूध प्रतिग्रह करनेसे एक एक सौ बार गायत्री जप करे। ऊर्द्ध्वदैहिक कार्य्य सम्बन्धीय पादुका और वस्त्र प्रतिग्रह करनेसे समाहित होकर एक सौ बार गायत्री जपने पर पापोंसे मुक्ति होती है। ग्रहण और अशौचकालमें क्षेत्र प्रतिग्रह करनेसे त्रिरात्र उपवास करके उस पापसे छूटेगा। जो ब्राह्मण कृष्णपक्षमें पितरोंका श्राद्धान्न भोजन करता है, वह उस अन्न भोजनके निमित्त रात दिन उपवास करनेसे पवित्र हुआ करता है; विना स्नान किये सन्ध्या उपासना न करे, जप करनेमें प्रवृत्त न होवे और दिनमें दूसरी बार भोजन न करे, तो ब्राह्मण पवित्र होगा। अपराह्नमें क्षुद्रोधके हेतु पितरोंका श्राद्ध कहा गया है, उस समय पहले निमन्त्रित लोग अन्न भोजन करें। मृत पुरुषके घरमें तीसरे दिन जो ब्राह्मण अन्न भोजन करता है, वह त्रिसन्ध्या स्नान करते हुए बारहवें दिन पवित्र होता तथा द्वादशाह बीतनेपर विशेष रीतिसे पवित्र होकर ब्राह्मणोंको घृतदान करनेसे पापरहित होगा। दश रात्रितक मृत पुरुषके घरमें अन्न भोजन करनेसे निम्नलिखित प्रायश्चित्त करना होगा, गायत्री जप रैवत साम पवित्रेष्टि यद्वा-देव हेलन यह अनुवाक पञ्चक और अघमर्षण

मन्त्र जप करे। जो लोग मृत पुरुषके गृहमें त्रिरात्र भोजन करते हैं, वे ब्राह्मण सप्त-त्रिषवण स्नान करनेसे पवित्र होकर विपुल सिद्धि लाभ करते तथा पाप ग्रस्त नहीं होते। जो ब्राह्मण शूद्रके सङ्ग एकत्र भोजन करता है, उसका विधिपूर्व्वक अशौच ग्रहणके सहारे शुद्धि विहित है। जो ब्राह्मण वैश्यके साथ एकत्र भोजन करता है, त्रिरात्र भिक्षा करके जीवन व्यतीत करनेसे उस पापसे मुक्त होगा। जो ब्राह्मण क्षत्रियके सहित एकत्र भोजन करता है, वह वस्त्रके सहित नहानेसे उस पापसे रहित हुआ करता है; एकत्र भोजन शूद्रके कुलको नष्ट करता, वैश्योंके पशु और बान्धवोंको विध्वंश करता, क्षत्रियोंको श्रीभ्रष्ट और ब्राह्मणोंका तेज नष्ट करता है; इसलिये उसके प्रायश्चित्त और शान्तिके लिये होम गायत्री जप, रैवत नामइष्टि और अघमर्षण प्रभृति जप करे। यदि परस्परमें जूठा भोजन किया जावे, तो रोचना दूब और हरिद्रादि मङ्गल समालम्भन करे, इस विषयमें सन्देह नहीं है।

१३६ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे भरत पितामह! दान और तपस्यामेंसे कौन विषय श्रेष्ठ है? उसे कहके आप हमारे मनका दुःख दूर करिये

भीष्म बोले, जिन दान पुण्यमें रत धर्म्ममें तत्पर तपस्याके सहारे शुद्धचित्त राजाओंने सन्देहरहित होकर श्रेष्ठ लोकोंको पाया है, उसे सुनो। हे महाराज! अत्रेय मुनिने शिष्योंसे सत्कृत होकर उन्हें निर्गुण ब्रह्मका उपदेश करके उत्तम लोकोंको पाया था। उशीनर शिवि-राजा ब्राह्मणके लिये अपना पुत्र प्रदान करके इस लोकसे स्वर्गमें गये थे। काशीपति प्रतर्द्दन ब्राह्मणके निमित्त अपना पुत्र दान करनेसे इस लोक और परलोकमें अतुल कीर्त्ति भोगते हैं। सांकृतिपुत्र रन्तिदेवने महानुभाव वसिष्ठको विधिपूर्व्वक अर्घ प्रदान करके उत्तम लोकोंको पाया है। देवावृध राजाने यज्ञके निमित्त ब्राह्मणोंको एक सौ शलाकायुक्त दिव्य सुवर्णमय शुभ छत्र प्रदान करके सुरपुरमें गमन किया है। भगवान् अम्बरीष राजाने अत्यन्त ब्राह्मणोंको समस्त राज्य दान करके सुरलोक पाया है। सूर्य्यवंशीय जनमेजय राजाने ब्राह्मणको दिव्य कुण्डल और गज दान करके उत्तम लोकोंमें गमन किया है। राजर्षि वृषादर्भि ब्राह्मणोंको विविध रत्न और रमणीय आश्रम दान करके अमरलोकमें गये हैं। महायशस्वी जामदग्न्य रामने ब्राह्मणोंको भूमिदान करनेसे और मन सङ्कल्पसे भी अधिक अक्षय भूदेवराज वसिष्ठको प्राणियोंके जीवित रखनेसे अक्षय गति प्राप्त हुई है। दशरथ पुत्र राम जिसका जगत्के बीच महत् यश विख्यात् है, उन्होंने यज्ञोंमें धनदान करके अक्षयलोकोंमें गमन किया है। राजर्षि कक्षसेन महानुभाव वसिष्ठको विधिपूर्व्वक न्यस्त धन प्रदान करनेसे अत्यन्त यशस्वी होकर स्वर्गमें गये हैं। करन्धम अविक्षितका पुत्र मरुत्त अङ्गिराको कन्या दान करके शीघ्र ही स्वर्गलोकमें गया। धार्म्मिकश्रेष्ठ पाञ्चाल-देशीय राजा ब्रह्मदत्तने शङ्खरत्न दान करके परम गति पाई है। मित्तसह राजा महात्मा वसिष्ठको दमयन्ती नामी प्रिय भार्य्या दान करके देवलोकमें गया है। मनुके पुत्र सुद्युम्नने महात्मा लिखितको धर्म्मपूर्व्वक चौरयोग्य हस्तच्छेदरूपी दण्डसे उद्धार करके उत्तम लोकोंको पाया है। महायशस्वी राजर्षि सहस्रचित्तने ब्राह्मणोंके लिये प्रिय प्राण परित्याग करके उत्तम लोकोंमें गमन किया है। शतद्युम्न राजा मौद्गल्य मुनि सर्व्वकामयुक्त स्वर्णमय गृह दान करके स्वर्गमें गया है। पहली समयमें सुमन्यु राजा शाण्डिल्य मुनिको पर्व्वतसदृश भक्ष्य भोज्य वस्तुओंकी राशि दान करके

स्वर्ग लोकमें गये । द्युतिमान नाम महातेजस्वी शाल्वराज ऋचीक ऋषिको राज्य दान करके अत्यन्त उत्तम लोकोंमें गमन किया है । राजर्षि मदिराश्वने हिरण्यहस्त मुनिको सुमध्यमा कन्या दान करके देवताओंके अधिष्ठित लोकोंमें गमन किया है । लोमपाद राजर्षि ऋष्य शृङ्गको शान्तानामी कन्या दान करके सर्व्वकामयुक्त हुए । राजर्षि भगीरथने कौत्सऋषिको हंसी नामी यशस्विनी कन्यादान करके अक्षयलोकोंमें गमन किया है, राजा भगीरथने कोहल मुनिको सात हजार सवत्सा गऊ दान करके उत्तम लोकोंको पाया है ।

हे युधिष्ठिर ! ये सब तथा दूसरे बहुतेरे राजा दान तथा तपस्याके सहारे स्वर्गमें गये हैं और बार बार निवृत्त होते हैं ; जबतक पृथ्वी है, तबतक उनकी कीर्त्ति प्रतिष्ठित रहेगी । हे युधिष्ठिर ! जिन गृहस्थोंने दान और तपस्याके सहारे सब लोकोंको जय किया है, यह उन शिष्ट पुरुषोंका चरित मैंने वर्णन किया, इन्होंने दान यज्ञ और पुत्रोत्पादनके द्वारा स्वर्ग लोक पाया है । हे कुरुकुलधुरन्धर ! पूर्व्वोक्त राजा लोग सदा दान करते हुए धर्म्मयुक्तबुद्धिको दान तथा यज्ञकार्य्यमें नियुक्त रखा था । हे नृपश्रेष्ठ ! जिस विषयमें सन्देह हो, उसे कल्ह भोरके समय कहना क्यों कि, अब सन्ध्याका समय उपस्थित हुआ है ।

१३७ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे सत्यव्रत सत्यपराक्रमी पितामह ! उत्तम महत् दानधर्म्मके सहारे जो सब राजा देवलोकमें गये हैं, मैंने वह सब आपके समीप सुना । हे धार्म्मिकश्रेष्ठ ! अब कितने प्रकारके दान देने योग्य हैं और उससे क्या फल प्राप्त होता है ? किस प्रकार किन लोगोंको धर्म्मपूर्व्वक दान करना उचित है, यह सब धर्म्मविषय यथार्थ रीतिसे सुननेकी इच्छा करता हूं ।

भीष्म बोले, हे पापरहित भरत वंशावतंस कुन्ती पुत्र ! सब वर्णोंको जिस प्रकार दान करना होता है, वह मेरे समीप यथार्थ रीतिसे सुनो । हे भारत ! धर्म्म, अर्थ, मोक्ष, काम और कारणवशसे दानको पांच प्रकारका जानो, जिस कारणसे जो दान किया जाता है, उसे सुनो । असूयारहित होके ब्राह्मणोंको दान करना योग्य है, दान करनेसे मनुष्य इसलोकमें परम कीर्तिवान होकर परलोकमें सुख पाता है । यह पुरुष मुझे दान करता है, करेगा अथवा किया है,—अर्थियोंको ऐसा वचन सुनके उन्हें सब वस्तु दान करनी योग्य है । न मैं इसका हूं और न यह पुरुष मेरा है, परन्तु यह अवमानित होनेपर पापकार्य्य करेगा, ऐसा समझके पण्डित लोग दृढ़ भयसे मूढ़ मनुष्योंको दान करते हैं । यह मेरा प्यारा है और मैं भी इसे प्रिय हूं, बुद्धिमान पुरुष ऐसा जानके सावधान होकर मित्र पुरुषको दान करते हैं । यह पुरुष अत्यन्त दीन है, इसलिये जांचता है और थोड़ेमें ही सन्तुष्ट होगा, ऐसा विचार कर करुणावशसे दरिद्रोंको दान करे । प्रजापतिने कहा है, कि ये पांच प्रकारके दान पुण्य और कीर्त्तिकी वृद्धि करते हैं; इसलिये शक्तिके अनुसार दान करना योग्य होता है ।

१३८ अध्याय समाप्त ।

युधिष्ठिर बोले, हे सर्व्वशास्त्रविशारद महाप्राज्ञ पितामह ! आप हमारे इस श्रेष्ठवंशमें अनेक प्रकारके शास्त्रज्ञानसे युक्त हैं । हे अरिदमन ! आपके समीप उत्तरकालमें सुखदायक लोगोंके लिये आश्चर्य्य स्वरूप धर्म्मार्थ युक्त वचन सुननेकी अभिलाष करता हूं । यह समय स्वजनों और बान्धवोंके लिये दुर्लभ है । हे पुरु-

यश्रेष्ठ! आपके अतिरिक्त हम लोगोंके लिये दूसरा कोई भी उपदेष्टा नहीं है। हे पापरहित! मैं भाइयोंके सहित यदि आपका कृपापात्र होऊं, तो मैं जो पूंछता हूं उसका आपको उत्तर देना उचित है। ये सब राजाओंके सम्मानभाजन श्रीमान् नारायण आपका बहुमान और विनयके सहित सेवा करते हैं, इनके और सब राजाओंके सम्मुख मेरे और भ्रातृगणोंकी प्रीतिके निमित्त आप इस विषयको वर्णन करिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गङ्गानन्दन भीष्मने युधिष्ठिरका बचन सुनके प्रीतिपूर्व्वक सम्भ्रमयुक्त होकर यह वक्षमाण बचन कहा।

भीष्म बोले, पहले समयमें मैंने विष्णुका जो प्रभाव सुना था, वह अत्यन्त मनोहर कथा तुम्हारे समीप कहूंगा। वृषभध्वजका जैसा प्रभाव सुना है उसे और रुद्र रुद्राणीको जिस प्रकार संशय हुआ था, वह कथा भी मेरे समीप सुनो। पहले समयमें धर्म्मात्मा कृष्णने बारह वर्षका व्रताचरण किया था, दीक्षित होनेपर पर्व्वत, नारद, कृष्णद्वैपायन, जापकश्रेष्ठ धौम्य देवल, काश्यप और दूसरे दीक्षा दमयुक्त शिष्योंके सहित साधु महर्षिगण तथा देवकल्प सिद्ध तपस्वियोंने उनका दर्शन करनेके लिये आगमन किया। देवकीपुत्र कृष्णने उन लोगोंके आनेसे प्रसन्न होकर देवतुल्य पूजनीय अतिथियोंका यथायोग्य कुलके अनुसार सत्कार किया, महर्षिगण हरे और सुवर्ण वर्णावर्हि निर्म्मित नवीन आसनोंपर कृष्णके समीप बैठे। अनन्तर वे तपस्वी और राजर्षि लोग देवताओंके धर्म्मयुक्त मधुर कथा कहने लगे। अनन्तर अद्भुत कर्म्म करनेवाले कृष्णके मुखमण्डलसे व्रतचर्य्यारूपी इन्धनके सहारे नारायण तेजस्वरूप अग्नि निकलकर वृक्ष लता क्षुद्र तरु, पक्षी, मृग, श्वापद और सरीसृपोंके सहित उस पर्व्वतको जलाने लगी। अनेक प्रकारके मृगसमूह हाहाकार करते हुए अचेत हुए, उस पर्व्वतका शिखरस्थान दीनदशायुक्त और मथित होने लगा; उस महाज्वालायुक्त अग्निने निःशेष रूपसे सबको जलाकर विष्णुके निकट आके शिष्यकी भांति उनके दोनों चरणोंको स्पर्श किया। अरिकर्षण नारायणने उस पर्व्वतको निःशेष रीतिसे जलते हुए देखकर सौम्यदृष्टिके सहारे फिर उसे प्रकृतिस्थ किया। वह पर्व्वत पहलेकी भांति वृक्ष लता पुष्प और पक्षियोंके शब्द और श्वापद सरीसृपोंसे परिपूरित हुआ, मुनिगण उस समय उस अद्भुत और अचिन्त्य व्यापारको देखकर अश्रुपूरित नेत्रयुक्त हुए। अनन्तर वक्तृवर नारायण उन ऋषियोंको विस्मित देखकर विनयपूर्व्वक नम्र मधुर तथा स्निग्ध वचन बोले,। सदा आसक्ति और ममतारहित वेद जाननेवाले ऋषियोंको किस निमित्त विस्मय उपस्थित हुआ? हे तपोधनगण! आप लोग सब कोई अनिन्दित ऋषि हैं, इसलिये आप लोगोंको मेरे इस सन्दिग्ध विषयका निश्चित अर्थ कहना उचित है।

ऋषिगण बोले, हे मधुसूदन! आपने ही सब लोकोंकी सृष्टि की है, फिर आपही सबका संहार करते हैं, तुम्ही शीत हो, तुम ही उष्ण हो और तुम ही वर्षा करते हो। पृथिवीपर जो सब स्थावर जङ्गम जीव हैं, आप ही उनके पिता, माता, प्रभु और प्रभव हो। हे कल्याणरूप मधुसूदन! इससे जिस हेतु तुम्हारे मुखसे अग्नि निकलनेसे हम लोगोंको विस्मययुक्त सन्देह हुआ है, तुम हो उस सन्देहके विषयको कह सकते हो। हे हरि! हे अरिकर्षण! अनन्तर हम लोग त्रासरहित होके जो देखा तथा सुना है, वह सब कहेंगे।

वासुदेव बोले, मेरे शरीरसे जो यह वैष्णव तेज निकला था, यह प्रलयकालकी अग्नि सदृश आभायुक्त था, जिसके सहारे यह महापर्व्वत मथित हुआ और क्रोधविजयी जितेन्द्रिय देवकल्प तपस्वी ध्यानयुक्त आपलोग भी पीड़ित

तथा व्यथित हुए थे। तपस्विव्रत सेवन तथा व्रताचरणयुक्त होनेसे मेरे शरीरसे अग्नि प्रकट हुई थी; इसलिये आप लोग व्यथित न होवें। मैं व्रताचरण करनेके लिये इस पवित्र पर्व्वतपर आके वीर्य्यबलसे अपने सदृश पुत्र पानेके लिये तपस्या कर रहा हूं। अनन्तर मेरी देहमें जो आत्मा है, वही अग्निरूपसे निकलकर सर्व्वलोक पितामह वरददेवका दर्शन करनेके लिये गया था। हे मुनिसत्तमगण! वृषभध्वजने कहा "मेरा आत्मा अर्द्ध तेजसे तुम्हारा पुत्र होगा,"— ऐसा कहके उन्होंने पुत्रके निमित्त अपने आत्माको मेरे समीप भेजा है। यह वही अग्नि परिचर्य्याके निमित्त शिष्यकी भांति मेरे चरण-मूलपर पहुंचके शान्ति और प्रकृतिको प्राप्त हुई है। हे तपोधनगण! यह बुद्धिमान पद्मनाभका रहस्यविषय मैंने आप लोगोंके समीप वर्णन किया, इसलिये आप लोग भय न करिये। आपलोग दीर्घदर्शी हैं, आपलोगोंको ज्ञानवि-ज्ञान शोभित तपस्वी व्रत सन्दीप्त सर्व्वत्र अव्यग्र गति विद्यमान है, इसलिये आप लोगोंने द्युलोक वा भूलोकमें जो परम आश्चर्य सुना वा देखा हो, उसे मेरे समीप वर्णन करिये, आप-लोग तपोवननिवासी महर्षि हैं, आप लोगोंके कहे हुए अमृत सदृश वचन-मधु आस्वादन कर-नेकी मुझे अभिलाष हुई है। हे अमरदर्शन तपस्वीवृन्द! यदि मैं द्युलोक अथवा भूलोकमें आप लोगोंके अतिरिक्त कोई अद्भुत दर्शन दिव्य विषय देखूं, तो वह मेरी परम प्रकृति है, वह सर्व्वस्व अप्रतिहत मेरी आत्माका ऐश्वर्य्य आश्चर्य्य रूपसे मालूम नहीं होता। श्रद्धापूर्व्वक कहा हुआ विषय सज्जनोंके श्रवणगोचर होनेपर पर्व्व-तमें अर्पित लेखकी भांति पृथ्वीमण्डलपर सदा स्थिति करता है; इसलिये मैं आप लोगोंके समागम समयमें सज्जनोंके मुखसे निकले हुए मनुष्योंको बुद्धि उद्दीपनकारी विषयोंका वर्णन करूंगा। अनन्तर मुनिगण कृष्णके निकट विस्मित होकर कमलदल सदृश नेत्रोंसे उन्हें देखने लगे। कोई मधुसूदनकी प्रशंसा करनेमें प्रवृत्त हुए, कोई पूजा करने लगे; कितने ही ऋक् मन्त्रविभूषित वचनसे उनकी स्तुति करने लगे। अनन्तर मुनियोंने उस समय वाक्यकी-विद नारद मुनिको कथा कहनेके लिये नियुक्त किया। मुनियोंने कहा, हे मुनि! तीर्थयात्रामें रत मुनियोंने हिमालयमें चिन्तनीय आश्चर्य्य अनुभव किया है, ऋषियोंके हितके निमित्त हृषीकेशके निकट वह सब जिस प्रकार देखा गया था, उसे आदिसे अन्ततक वर्णन करो। देवर्षि नारदमुनिने उन मुनियोंका वचन सुनके पहले समयका वृत्तान्त कहना आरम्भ किया।

१३९ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर नारायणके सुहृद भग-वान नारद ऋषि उमाके सङ्ग महादेवका जो वार्त्तालाप हुआ था, उसे कहने लगे।

नारद मुनि बोले, सिद्ध चारणोंसे सेवित, औषधियों, पुष्पों, अप्सराओं और भूतोंसे परि-पूरित रमणीय हिमालय पर्व्वतपर धर्म्मात्मा देवताओंके ईश्वर वृषभध्वजने तपस्या की थी। महादेव उस स्थानमें सैकड़ों भूतसमूहोंके बीच घिरके हर्षित थे, प्रेतगण अनेक रूप धारण करते थे, कोई विकटरूप, कोई दिव्यरूप, कोई अद्भुतदर्शन, कोई सिंह व्याघ्रसदृश, कोई सर्व्व-गतियुक्त, कोई शृगालवदन, कोई चीतेके सदृश रूपवाले, कोई ऋक्षमुख, कोई उलूकानन, कोई भयङ्कर, कोई वृक और वाजपेयपक्षीकी भांति मुखयुक्त, अनेक प्रकारके मृगमुखवाले, सर्व्व जातियुक्त किन्नर यक्ष गन्धर्व्व राक्षस और भूतों तथा दिव्य पुष्पोंसे परिपूरित दिव्य ज्वाला और दिव्य चन्दनयुक्त दिव्य धूपसे धूपित वह वृषभध्व-जकी सभा मृदङ्ग, ढोल, शंख तथा भेरी आदि दिव्य बाजोंके शब्दसे परिपूरित थी; नाचनेवाले

भूतों और मयूरोंके सहित वहांपर अप्सरायें नृत्य कर रही थीं, देवर्षिगण वहांपर सदा निवास करते थे ; वह सभा अत्यन्त दर्शनीय, अनिर्देश्य, दिव्य और अद्भुत थी। वह पर्व्वत महादेवकी तपस्यासे सुशोभित हुआ था, स्वाध्यायपाठमें रत ब्राह्मणोंके वेदध्वनिसे निनादित था। हे माधव! वह पर्व्वत षट्पदगणोंके उपस्थित होनेसे अप्रतिम हुआ था। हे जनार्द्दन! महोत्सव सदृश भीमरूपधारी शङ्करको देखकर मुनियोंके मनमें परम प्रीति उत्पन्न हुई। महाभाग मुनिगण, ऊर्द्धरेता सिद्धगण, इन्द्रके सहित विश्वदेवगण, यक्ष, सर्प, पिशाचगण, सब लोकपाल अग्नि, वायु और सब महद्भूत वहांपर उपस्थित थे। सब समयके छहों ऋतुके फल वहां फूल रहे थे, ओषधियें प्रज्वलित होकर उस वनको प्रकाशित करती थीं, पक्षिसमूह हर्षित होके नाचते और गाते थे, रमणीय पर्व्वतके शिखरपर जनप्रिय पक्षीवृन्द विचर रहे थे। उस दिव्य धातुविभूषित गिरिपर महामना महादेव पर्य्यङ्कपर बैठे हुएकी भांति विराजमान थे। उस समय वे व्याघ्रचर्म्मधारी तथा बाघम्बर ओढ़े व्याल यज्ञोपवीतयुक्त लोहिताङ्गसे भूषित थे। हरिश्मश्रु जटी भीम देवद्वेषियोंको भयभीत करनेवाले, सब जीवोंके अभयदाता, भक्तोंको भयसे परित्राण करनेवाले वृषभध्वज उस स्थानमें विराजमान थे।

महर्षिगणने उन्हें देखकर सिर झुकाकर पृथ्वीपर गिरके साष्टाङ्ग प्रणाम किया, प्रणाम करते ही वे लोग क्षमाशील होकर सब पापोंसे मुक्त हुए ; वह भूपतिका आश्रम उस समय भीमरूप धारण करके शोभित हुआ, वह उस समय अप्रधृष्य और महोरगोंसे परिपूर्ण होगया। हे मधुसूदन! क्षण भरके बीच उस स्थानमें आश्चर्य दीख पड़ा ; वह वृषभध्वजकी सभा भयङ्कर रूप धारण करके शोभित होने लगी। हरके सदृश अम्बरधारिणी समान व्रतचारिणी शैलनन्दिनीने भूत भामिनियोंके बीच घिरकर उनके समीप गमन किया। वह उस समय सब तीर्थोंके जलसे युक्त सुवर्ण कलश धारण करके गिरि निर्झरिणियोंके द्वारा पश्चाद्भागमें अनुगत होकर शोभित होने लगीं; उन्होंने अनेक प्रकारकी सुगन्ध और फूलोंकी वर्षा करती हुई हिमवत् पार्श्व सेवापूर्व्वक हरके पार्श्वमें आगमन किया। अनन्तर उस चारुदर्शना देवीने हंसकर कौतुकके निमित्त अपने हाथोंसे सहसा महादेवके दोनों उत्तम नेत्र मूंद लिये। महादेवके नेत्र बन्द होनेपर सहसा जगत् तमोमय और अचेतन हुआ और निर्म्मोह तथा वषट्काररहित होगया ; सब प्राणी मन मलिन और भयभीत हुए, महादेवके नेत्र बन्द होनेपर मानो सूर्य्य छिप गया। अनन्तर क्षण भरके बीच सब लोक अन्धकाररहित हुए, महादेवके मस्तकसे महत् प्रदीप्त ज्वाला निकली और प्रलयकालके प्रज्वलित सूर्य्यके समान उनका तीसरा नेत्र प्रकट हुआ, जिसके सहारे वह पर्व्वत मथित होने लगा। अनन्तर विशाललयनी शैलाधिराजपुत्रीने प्रदीप्त अग्नि सदृश नेत्रवाले त्रिलोचनको सिर झुकाके प्रणाम किया। शाल, सरल, वृक्ष रमणीय चन्दनवन और दिव्य ओषधियोंसे प्रकाशमान उस वनके जलनेपर मृगगण भयभीत होके दौड़े और किसी स्थानमें ठहरनेका आश्रय न पाकर महादेवके निकट उपस्थित हुए, वह सभा सन्नाटायुक्त होके शोभित होने लगी। अनन्तर गगनस्पर्शी ज्वालामालायुक्त तड़िल्लता सदृश उज्ज्वल द्वितीय प्रलयाग्निकी भांति द्वादशादित्य सङ्काश उत्कट अग्निके द्वारा क्षण भरके बीच हिमालय निःशेष होकर जल गया। धातु, शिखर, झरने, वन और सब ओषधियें जल गईं। अनन्तर शैलपुत्री उस पर्व्वतको भस्म हुआ देखकर हाथ जोड़के भगवानकी शरणमें गईं। महादेव उस समय उमाको स्त्री स्वभाव सुलभ मार्द्दवशालिनी और

पिताकी विपद देखनेकी अनभिलाषिणी देखकर प्रीतिपूर्व्वक हिमालयकी ओर देखा। क्षणभरके बीच हिमालय प्रकृतिस्थ और दर्शनीय हुआ, पक्षिसमूह प्रमुदित और वनके वृक्ष उत्तम पुष्पोंसे युक्त हुए। अनिन्दिता उमाने उस समय हिमवान्‌को प्रकृतिस्थ देखकर प्रसन्न होके सर्व्वलोक प्रभु भूतपति महादेवसे कहा।

उमा बोली, हे सर्व्वभूतेश महाव्रती शूलधारी भगवन्! मुझे अत्यन्त ही सन्देह हुआ है, इसलिये आप उस विषयकी वर्णन करिये। हे देव! किसलिये आपके माथेमें तीसरा नेत्र प्रकट हुआ? किस निमित्त पक्षियों और वनके सहित पर्व्वत भस्म हुआ, किस हेतु आपने मेरे पिताको प्रकृतिस्थ और पहलेकी भांति वृक्षोंसे परिपूरित किया।

महेश्वर बोले, हे अनिन्दिते देवि! तुमने जो बालस्वभावसे मेरे नेत्रोंको मूंद लिया, उससे क्षणभरके बीच सब लोक प्रकाशरहित हुए। हे नगनन्दिनि! जब सब लोक आदित्यरहित होनेसे तमोमय हुए, तब मैंने प्रजा समूहकी रक्षा करनेके लिये अपना तीसरा प्रदीप्त नेत्र प्रकट किया, उस ही नेत्रके महत् तेजसे यह पर्व्वत मथित हुआ। हे देवि! तुम्हारी प्रीतिके निमित्त मैंने फिर शैलराजको प्रकृतिस्थ किया।

उमा बोली, हे भगवन्! किस निमित्त आपका चन्द्रमा सदृश शोभायुक्त प्रियदर्शन आनन पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और ऊर्द्धमुख हुआ और किस कारणसे रौद्ररूप धारण किया? किस हेतु कपिल वर्णकी जटाजूट हुई? किसलिये आपने अपने कण्ठको बर्हिवर्ह सदृश नीलवर्ण किया। हे देव! किसलिये आप हाथमें सदा पिनाक धनुष धारण किया करते हैं। हे प्रभु! हे वृषभध्वज! मैं आपकी सहधर्म्मचारिणी तथा आपके विषयमें भक्तिमती हूं, इसलिये आपको मेरे सन्देहके विषयोंकी विधिपूर्व्वक वर्णन करना उचित है।

नारद मुनि बोले, भगवान् पिनाकपाणि शैलपुत्रीका ऐसा वचन सुनके उसके धैर्य्य और बुद्धिसे प्रसन्न हुए, अनन्तर उससे बोले, हे सुमुखि सुभगे! जिन कारणोंसे मेरे ये सब रूप हुए हैं, उसे सुनो।

१४० अध्याय समाप्त।

श्रीभगवान् बोले, पहले समयमें ब्रह्माकी तिलोत्तमा नामी एक उत्तम कन्या थी, सब रत्नोंका सार भाग निकालकर वह शुभाङ्गी निर्म्मित हुई थी। हे देवि! भूलोकमें अप्रतिम सुन्दरताई युक्त वह सुमुखि मेरी प्रदक्षिणा करके प्रलोभित करती हुई सम्मुख आई। वह सुन्दरी जिस जिस दिशामें मेरी ओर आई, उस ही ओर मेरे मनोहर मुख बाहिर हुए। उसे देखनेके लिये अभिलाषी होकर मैंने चार मूर्त्तियां धारण कीं और उत्कृष्ट योगके द्वारा चतुर्म्मुख हुआ। मैं पूर्व्व शरीरसे इन्द्रत्वका अनुशासन करता हूं। हे अनिन्दिते! उत्तर शरीरसे तुम्हारे सङ्ग क्रीड़ा करता हूं, मेरा पश्चिम मुख अत्यन्त प्रियदर्शन है, यह सब प्राणियोंको सुखी करता है और दक्षिणमुख अत्यन्त भयङ्कर तथा रौद्र होकर प्रजाका संहार किया करता है। मैं सब लोकोंको हितकामनासे जटिल और ब्रह्मचारी हुआ हूं। देवकार्य्यसिद्धिके निमित्त मैंने हाथमें पिनाक धारण किया है। पहले समय इन्द्रने श्रीकामना करते हुए मेरे ऊपर वज्र चलाया था, उस वज्रने मेरा कण्ठ जला दिया, उससे मैं श्रीकण्ठ हुआ हूं।

उमा बोली, हे सत्तम! इस स्थानमें दूसरे श्रीमान् वाहनोंके रहते भी वृषभ आपका वाहन क्योंकर हुआ।

महादेव बोले, ब्रह्माने दूध देनेवाली देवधेनु सुरभीको उत्पन्न किया, सुरभी उत्पन्न होकर दूधरूपी अमृत प्रदान करती हुई अनेक हुई, उसके बछड़ेके मुखसे फेन मेरे शरीरपर

गिरा था। अनन्तर गौवें मेरे द्वारा जलके अनेक वर्णकी होगई; अन्तमें अर्थवेत्ता लोकगुरु ब्रह्माने मुझे शान्त किया और उन्होंने मुझे ध्वजाके निमित्त यह वृषवाहन प्रदान किया।

उमा बोली, हे भगवन्! स्वर्गके बीच सब भांतिकी सुन्दरतासे युक्त अनेक प्रकारके निवासस्थान हैं, उन सबको परित्याग करके आप केश हड्डीसे परिपूरित भयङ्कर कपाल और कलसंकुल बहुतेरे गिद्ध सियारोंसे सेवित सैकड़ों चितानलयुक्त अपवित्र मांस चर्बी रुधिर अन्नावली और हड्डियोंसे भरे सियारोंके शब्दसे निनादित श्मशानमें किसलिये क्रीड़ा करते हैं?

महादेव बोले, मैं पवित्र स्थान खोजते हुए इस पृथ्वीमण्डलपर भ्रमण करता हूं, परन्तु श्मशानसे बढ़के उत्तम और कुछ भी नहीं दीखता; इस ही निमित्त समस्त निवास स्थानोंके बीच बटशाखासे परिपूरित विच्छिन्न स्रग्विभूषित श्मशानमें मेरा मन रत होता है। हे शुचिस्मिते! ये सब भूत उस श्मशानमें ही क्रीड़ा करते हैं। हे देवि! भूतगणके बिना मैं निवास करनेका उत्साह नहीं करता। हे शुभे! मेरा यह श्मशानवास ही पवित्र और स्वर्गीय है, पवित्रताकी अभिलाष करनेवाले इस परम पवित्र स्थानकी उपासना किया करते हैं।

उमा बोली, हे सर्व्वधर्म्मभृताम्बर सर्व्वभूतेश पिनाकपाणि भगवन्! मुझे इन मुनियोंके तपस्या विषयमें महान् सन्देह है, नख लोम जटाधारी तपस्वीवेषवाले अनेक भांतिके लोग जगत्‌के बीच भ्रमण करते हैं। हे अरिन्दम! इन ऋषियोंकी तथा मेरी प्रिय कामनासे आपको मेरा यह महत् सन्देह दूर करना उचित है। धर्म्मका क्या लक्षण है और जो मनुष्य धर्म्मज्ञ नहीं हैं, वे किस प्रकार धर्म्माचरण करनेमें समर्थ होंगे? हे धर्म्मज्ञ! आप इसे ही मेरे समीप वर्णन करिये।

नारद मुनि बोले, अनन्तर उन मुनियोंने ऋग्विभूषित वाक्यों और अर्थविशारद स्तोत्रोंसे उमादेवीकी पूजा की।

महादेव बोले, अहिंसा, सत्यवचन, सब जीवोंके विषयमें दया, शम और शक्तिके अनुसार दान ही गृहस्थोंका श्रेष्ठ धर्म्म है। पराई स्त्रियोंमें आसक्त न होना, स्त्रीकी रक्षा करनी, अदत्त दानसे विरत रहना और मधुमांसको परित्याग करना, ये पांच प्रकारके धर्म्म अनेक शाखायुक्त तथा सुखदायक हैं, धर्म्मपरायण देहधारियोंको श्रेयोरसाध्य धर्म्माचरण करना योग्य है।

उमा बोली, हे भगवन्! मैं आपसे सन्देहका विषय पूछती हूं, इसलिये आपको मेरे समीप वह विषय कहना उचित है। चारो वर्णोंके बीच निज निज धर्म्मही सुखदायक है, ब्राह्मणका धर्म्म कैसा है और क्षत्रिय किस प्रकार धर्म्माचरण करेगा, वैश्योंके धर्म्मलक्षण क्या हैं और शूद्रोंका कैसा धर्म्म है?

श्रीभगवान् बोले, हे महाभागे! तुमने न्यायपूर्व्वक यह संशयका विषय पूछा है, महाभाग द्विजातिगण जगत्‌के बीच सदा भूमिदेव कहके विख्यात हैं, ब्राह्मणोंके लिये हर समयमें निःसन्देह उपवास ही धर्म्म है, धर्म्मार्थयुक्त ब्राह्मण ब्रह्मत्व लाभके योग्य हैं। हे देवि! न्यायपूर्व्वक ब्रह्मचर्य्य ही उनकी धर्म्मक्रिया, व्रत और उपनयन ही उनका धर्म्म है, जिससे कि ब्राह्मणत्वकी प्राप्ति होती है। गुरु और देवताओंकी पूजाके निमित्त धर्म्मपरायण पुरुषोंको धर्म्म और स्वाध्याय पाठ करना चाहिये।

उमा बोली, हे भगवन! मुझे कुछ सन्देह है, आपही उसे दूर करनेके योग्य हैं, इसलिये चारों वर्णोंके धर्म्म आप निपुणभावसे वर्णन करिये।

महेश्वर बोले, रहस्य सुनना, वेदव्रतका सेवन, अग्नि कर्म्म और गुरुकार्य्यका निभाना ही धर्म्म है, सदा यज्ञोपवीत धारण और भैक्षचर्य्या परम धर्म्म है, सदा स्वाध्याय पाठ और

ब्रह्मचर्य्य व्रत करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है। ब्राह्मण गुरुकी अनुमतिसे समावर्त्तन संस्कार करके विधिपूर्व्वक अनुरूप भार्य्या परिग्रह करे, ब्राह्मणके लिये शूद्रान्न त्याग, सन्मार्ग सेवन, उपवास और ब्रह्मचर्य्य धर्म्म हैं। गृहस्थ मनुष्य आहिताग्नि अध्ययनशील संयतेन्द्रिय, सदा होम करनेवाला विघसाशी, यताहारी, सत्यवादी और पवित्र होवे। अतिथिसेवा करना गृहस्थका धर्म्म है। दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आवहनीय अग्निको धारण करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है। सब यज्ञों और यज्ञोंमें पशुबन्धन कार्य्यको ब्राह्मण विधिपूर्व्वक न करे। जीवोंकी अहिंसामय यज्ञ करना परम धर्म्म है, अपूर्व्व भोजन और विघसाशित्व धर्म्म है; परिजनोंके भोजन करनेके अनन्तर पश्चात् भोजन करना धर्म्म कहके वर्णित हुआ है, गृहस्थों वा विशेष करके श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको अवश्यही यह धर्म्माचरण करना चाहिये। गृहमेधियोंके लिये समान शीलत्व धर्म्म हुआ करता है। गृह देवताओंकी सदा पुष्प आदिसे पूजा करनी योग्य है। सदा उपलेपन और उपवास धर्म्म कहा गया है। उत्तम रीतिसे लिपे पुते गृहमें घृत धूम रहेगा। द्विजगणके लोक धारण इस गार्हस्थ धर्म्ममें साधु ब्राह्मण सदा प्रवृत्त होते हैं। हे देवि! तुमने क्षत्रिय धर्म्मके विषयमें जो प्रश्न किया है, मैं तुमसे उसका विवरण कहता हूं, सावधान होके सुनो। प्रथम क्षत्रियोंके लिये प्रजा पालन धर्म्म स्मृत हुआ है। निर्द्दिष्ट फलभोक्ता राजा धर्म्मयुक्त होता है, जो राजा धर्म्मपूर्व्वक प्रजापालन करता है, उसे प्रजापालन रूपी सञ्चित धर्म्मसे पुण्यलोक प्राप्त होते हैं। इन्द्रिय दमन, स्वाध्यायोक्त, वेदपाठ, अग्निहोत्र दान और अध्ययन क्षत्रियका परम धर्म्म है। यज्ञोपवीत धारण, यज्ञ करना, सेवकोंका पालना और कृत कर्म्मोंकी सफलता ही धर्म्म है; दण्डविधयन पूरी रीतिसे मर्य्यादाकी रक्षा करनी, वेदोक्त यज्ञ कर्म्मोंका व्यवहार स्थिति और सत्य वचनमें रति क्षत्रियका धर्म्म है। प्रीतिपूर्व्वक हाथसे दान करनेवाले क्षत्रिय इसलोक और परलोकमें पूजित होते हैं, अश्वमेध यज्ञ करनेसे लोगोंको जो लोक मिलते हैं, ब्राह्मणके निमित्त युद्ध करने तथा संग्राममें मरनेवाले, क्षत्रिय उन्हीं लोकोंमें जाते हैं।

सदा पशुओंको पालना और कृषिकर्म्म करना वैश्योंका धर्म्म है। अग्निहोत्र, दान, अध्ययन, वाणिज्य, सत्पथमें स्थिति, अतिथिसेवा प्रशम, दम, ब्राह्मणोंका स्वागत प्रश्न और धनदान करना वैश्योंका सनातन धर्म्म है। सन्मार्गमें स्थित वैश्य वाणिज्यकार्य्यमें नियुक्त होकर सुगन्ध, तिल और चर्व्वी न बेचे; सब प्रकारसे अतिथि सत्कार करके शक्तिके अनुसार यथायोग्य धर्म्मार्थ कामको सेवा करे।

द्विजातियोंकी सदा सेवा करनीही शूद्रोंका परम धर्म्म है, जो पुरुष संशितव्रती, सत्यवादी और जितेन्द्रिय होकर उपस्थित अतिथिकी सेवा करते हुए महत् तपस्या सञ्चय करता है, वही शूद्र है, देवताओं और ब्राह्मणोंकी पूजा करनेवाला शुभाचारी बुद्धिमान् शूद्र अभिलषित फल पाता है। हे सुन्दरि! हे सुभगे! मैंने तुम्हारे समीप चारो वर्णोंके धर्म्म कहे और अब क्या सुननेकी इच्छा करती हो?

उमा बोली, हे भगवन्! आपने चारों वर्णोंके हितकर तथा शुभकर पृथक् पृथक् धर्म्म कहे, अब जो धर्म्म सर्व्वव्यापी हो उसे ही मेरे समीप वर्णन करिये।

महेश्वर बोले, गुणाभिलाषित विधाताने सब लोगोंका उद्धार करनेके निमित्त मनुष्योंके बीच भूदेव ब्राह्मणोंको सर्व्वलोकोंके सारतत्त्वसे बनाया है; उनका धर्म्म, कर्म्म फलोदय कहता हूं। ब्राह्मणोंके धर्म्महो परम धर्म्म हैं, लोगोंके धर्म्मके हेतु सृष्टिके समय ब्रह्माने नीचे कहे हुए तीन धर्म्म प्रकट किये थे, उसे सुनो।

वेदोक्त धर्म्म, स्मृति शास्त्रोंमें वर्णित धर्म्म और शिष्टाचार ये तीनों धर्म्म ही सनातन कहे गये हैं। तीनों विद्यामें विद्वान् ब्राह्मण ऋक् मन्त्र अध्ययन करके जीवन बिताते हुए दान अध्ययन और यजन, इन तीनों कर्म्मोंसे युक्त होवे, त्रिपुराक्रान्त अर्थात् काम, क्रोध और लोभ इन तीनोंको परित्याग करनेवाले और सर्व्वभूतोंमें समदर्शी पुरुषको द्विज कहा जाता है। लोकेश्वर प्रजापतिने ब्राह्मणोंकी वृत्तिके निमित्त निम्नलिखित छः धर्म्मोंका वर्णन किया है।

यजन, याजन, दान, परिग्रह, अध्ययन और अध्यापन, इन षट् कर्म्मोंको करनेवाले ब्राह्मण धर्म्मभागी होते हैं। सदा स्वाध्याय पाठ, और सनातन यज्ञोंको करना ब्राह्मणोंका धर्म्म है, ब्राह्मण शक्तिके अनुसार विधिपूर्व्वक उत्तम दान करे; साधुओंमें नित्य प्रवृत्त शान्ति ही परम धर्म्म है। शुद्धाचरणवाले गृहस्थोंका उत्तम नाम ही महान् धर्म्म है, जो यज्ञ करनेवाला शुद्धचित्त, सत्यवादी, असूयारहित, दाता, ब्राह्मणोंका सम्मानकर्त्ता, उत्तम स्वच्छ गृहमें निवास करनेवाला, अभिमान हीन, सदा सरल और कोमल वचन कहनेवाला, अतिथि तथा अभ्यागतोंके विषयमें अनुरक्त रहता तथा शेषमें बचे हुए अन्नको भोजन करता है और जो पुरुष ब्राह्मणोंको पाद्य, अर्घ, आसन, शय्या, दीपक और गृह प्रदान करता है, वही धार्म्मिक है। जो लोग प्रातःकालमें उठनेपर आचमन करके भोजनके निमित्त ब्राह्मणोंको निमन्त्रण करते और उनका सम्मान पूर्व्वक अनुगमन करते हैं, उन्हें सनातन धर्म्म होता है। सब भांतिसे अतिथि सत्कार और शक्तिके अनुसार धर्म्म, काम, अर्थको सेवन करना शूद्रोंका विख्यात धर्म्म है। गृहस्थोंके विषयमें प्रवृत्ति लक्षणयुक्त धर्म्म विहित है, इसलिये सब प्राणियोंके हितके लिये उस प्रवृत्ति लक्षणयुक्त धर्म्मका वर्णन करता हूं। शक्तिके अनुसार बार बार यज्ञ तथा दान करना चाहिये और ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंको पुष्टि कार्य्यका विधान करना उचित है। धर्म्मसे धन पैदा करे, धर्म्मसे प्राप्त हुआ धन तीन प्रकारका है; मनुष्य यत्नपूर्व्वक धर्म्मार्थके हेतु धन वितरण करे। ऐश्वर्य्यकी इच्छा करनेवाला मनुष्य एक अंश धनके सहारे धर्म्मार्थ आचरण करे, एक भागसे काम भोग करे और एक हिस्सेसे धर्म्मकी वृद्धि करनी चाहिये।

हे देवि! एक निवृत्ति लक्षण धर्म्म ही मोक्षका हेतु हुआ करता है, उसका वृत्तान्त मैं यथार्थ रीतिसे कहता हूं, सुनो, मोक्षको आकांक्षावाले पुरुषोंके लिये सब जीवोंमें दया, सदा एक गांवमें वास न करना और आशापाशसे रहित होना ही श्रेष्ठ धर्म्म है। मोक्षार्थी मनुष्य गृह, जल, वस्त्र, आसन, त्रिदण्ड, शय्या, अग्नि और रक्षकके स्थानमें आसक्त न होवे। जिसका चित्त अध्यात्मपथमें विचरता है, वह उसहीमें मन लगावे, उसहीमें तत्पर होकर योग और समाधिमें सदा अनुरक्त रहे। वृक्षके मूलमें निवास करनेवाले, सूने स्थान, नदी-पुलिनशायी तथा नदीके तटपर रहनेवाले जो ब्राह्मण सर्व्व आसक्ति तथा स्नेहबन्धनसे रहित हैं, वे आत्मामें ही निज भावसे समासक्त होवें; मोक्ष-दृष्ट कर्म्मके सहारे स्थाणुस्वरूपसे निराहारी होके रहें। जो लोग योगी होके परिव्रज्या करते हैं, उन्हें सनातन धर्म्म होता है। एक स्थानमें आसक्त न होवे, एक गांवमें सदा वास न करे और एक ही पुलिनमें शयन करना योग्य नहीं है, मुक्त पुरुष निर्मुक्त होकर भ्रमण करे; यही मोक्षवित् साधुओंका वेदोक्त सत्पथस्वरूप धर्म्म है; जो लोग इस पथके अनुगामी होते हैं, उनके लिये कोई व्यवसाय नहीं रहता। कुटिचक, बहूदक, हंस और परमहंस भेदसे चार प्रकारके संन्यासी हैं, जो पहलेके पीछे कहे गये हैं, वे उसको अपेक्षा श्रेष्ठ हैं। कुटिचक

और बहूदक, ये दोनों ही दण्ड धारण करते हैं, उनके बीच पहले कहे हुए भिक्षु गृहमें निवास करते हैं, दूसरे तीर्थोंमें पर्य्यटन किया करते हैं, तीसरे पुरुष संन्यासाश्रम धर्म्ममें रत रहते हैं, और चौथे पुरुष निरुद्ध गुणपथमें विचरते हैं। परमहंसाश्रमसे बढ़के सुख दुःखहीन, प्रियदर्शन, अजर, अमर और अव्यय आश्रम दूसरा नहीं है, अत्यन्त रोगके भयसे लोग इसका आचरण नहीं करते।

उमा बोलीं, गार्हस्थ्य और सज्जनोंसे आचरित मोक्षधर्म्म जो जीवलोकका महान् कल्याणकारी पथ है, उसे आपने वर्णन किया। हे धर्म्मज्ञ! इसके अनन्तर मैं ऋषिधर्म्म सुननेकी इच्छा करती हूं, तपोवन निवासी ऋषियोंके धर्म्मको सुननेके निमित्त मुझे सदा अभिलाष हुआ करती है। हे महेश्वर! घृतके धूएंसे परिपूरित तपोवनको देखनेसे मेरा मन सदा प्रसन्न होता है। हे प्रभु! हे सब धर्म्मार्थ तत्त्वज्ञ देवेश! मुनि धर्म्मविषयमें मुझे सन्देह हुआ है। हे महादेव! इसलिये मैंने जो विषय पूछा, आप यथार्थ रीतिसे उसे वर्णन करिये।

श्रीभगवान् बोले, हे शुभे! संन्यासी मुनिगण जैसा आचरण करके निज तपस्याके सहारे सिद्धि लाभ करते हैं, मैं तुम्हारे समीप वह उत्तम मुनिधर्म्म कहता हूं। हे धर्म्म जाननेवाली महाभागे! धर्म्मवित्ता फेनप साधु ऋषियोंका जो धर्म्म है, उसे ही तुम मेरे समीप पहले सुनो। जो लोग ब्रह्म-सजातीय सम्बन्धमें श्रेष्ठ फेनवृत्त अग्रान्न समूह क्रमसे आदान करते हैं, वेही उस अविनाशी ब्रह्माके द्वारा यज्ञस्थल, पीतअध्वर तथा वृष्टि प्रभृति यज्ञाङ्गस्वरूप और स्वर्गमें दिव्य भोगके निमित्त उत्पन्न हुए हैं। हे तपस्विनि! यह उन्हीं पवित्र फेनपायी ऋषियोंके धर्म्मचर्य्याका मार्ग कहा गया, अब बालखिल्यगणका धर्म्म सुनो। धर्म्मज्ञ तपसिद्ध बालखिल्य मुनिगण सूर्य्यमण्डलमें शाकुनी वृत्ति अवलम्बन करके उञ्छवृत्तिसे निवास करते हैं, वे मृगचर्म्मचीर अथवा वल्कलवस्त्र पहरते हैं; तपस्वी बालखिल्य मुनिगण निर्द्वन्द्व होकर सत्पथको अवलम्बन किया करते हैं। वे लोग अंगुष्ठपर्व्व समान होकर निज निज धर्म्ममें निवास कर रहे हैं और तपश्चरणकी चेष्टा किया करते हैं, उनका धर्म्मफल अत्यन्त महत् है, सुरकार्य्य सिद्धिके निमित्त उन्हें देवताओंकी समता प्राप्त होती है और वे लोग तपस्याके सहारे पापकर्म्मोंको जलाकर दशों दिशाको प्रकाशित किया करते हैं। दूसरे जो सब शुद्धचित्तवाले दया धर्म्मपरायण ऋषिवृन्द निवास स्थानसे रहित होकर चक्रकी भांति घूमते हैं और पवित्र होकर चन्द्र लोकमें विचरण किया करते हैं, वे पितृलोकके निकट पहुंचकर चन्द्रकिरण पान करते हैं। जो लोग भली भांति पात्रोंको धोते; दूसरे दिनके लिये कुछ भी सञ्चय करके नहीं रखते तथा सम्प्रक्षाल अश्मकूट और दन्तोलूखलिक जो सब ऋषि हैं, वे सब कोई तथा सोमप और उष्मप मुनिगण देवताओंके निकटवर्त्ती होके सस्त्रीक और नियतेन्द्रिय होकर उञ्छवृत्ति अवलम्बन किया करते हैं। अग्नि परिचर्य्या, पितरोंकी पूजा और पञ्चयज्ञ करना उनका धर्म्म कहा गया है। हे देवि! चक्रकी भांति भ्रमण करनेवाले देवलोकचारी द्विजोंके द्वारा यह ऋषिधर्म्म सदा आचरित हुआ करता है; इसके अतिरिक्त और जो सब धर्म्म हैं, वह भी मेरे समीप सुनो। सबको ऋषिधर्म्ममें संयतेन्द्रिय होकर आत्मज्ञान साधन करना योग्य है; अनन्तर काम-क्रोधको जीतना चाहिये। मेरे विचारमें अग्निहोत्र, सनातन धर्म्मका सदा अनुष्ठान, सोमयज्ञ, दान, पञ्चयज्ञ, दक्षिणा, सदा यज्ञकार्य्य, पितरों और देवताओंकी पूजामें अनुराग और उञ्छवृत्तिसे प्राप्त हुए अन्नके सब प्रकार अतिथि द्वारा सेवा ही धर्म्म है। सब प्रकारके गोरस उपभोगमें निवृत्ति

श्रम विषयमें रति, स्थण्डिल शयनमें योग, शाक पत्ते और फलमूलके भोजन, वायु, जल और शैवाल भक्षण ये ऋषियोंके नियम हैं, इन्हींके सहारे वे लोग अजित गतिको जय किया करते हैं। धूआं, अग्नि और मूषल ध्वनिसे रहित समय, युद्ध, सब लोगोंके भोजन करने और पात्र सञ्चाररहित होने तथा भिक्षुगणके चले जानेपर भी जो लोग अतिथि-कामना करते और शेष अन्नभोजन किया करते हैं, वेही सत्यधर्म्ममें रत शान्त पुरुष मुनि धर्म्मयुक्त होते हैं। जड़ता और अभिमानयुक्त न होवे, अप्रसन्न तथा विस्मित न होना चाहिये; मित्रशत्रुमें समदर्शी और सर्व्व भूतोंमें दयावान् पुरुष ही श्रेष्ठ धर्म्मज्ञ हैं।

१४१ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, रमणीय स्थानों, नदीतट, झरनों पहाड़ों, बनोंमें फलयुक्त पवित्र स्थानों और मूलविशिष्ट मध्यदेशमें उत्तम रीतिसे समाहित सदा व्रत करनेवाले मुनिगण निवास किया करते हैं। हे शङ्कर! मैं उन लोगोंका विविध पुण्य सुननेकी इच्छा करती हूं। हे देवेश! स्वशरीरोपजीवी वाणप्रस्थ धर्म्मको भी सुननेकी मुझे इच्छा है।

महेश्वर बोले, हे देवि! सावधान होके वाणप्रस्थोंका धर्म्म सुनो और एकाग्रचित्तसे सुनके तुम्हें धर्म्मबुद्धि परायण होना योग्य है। नियमोंके द्वारा पूरी रीतिसे सिद्ध हुए बनवासी साधु वाणप्रस्थ पुरुषोंको जैसा कर्म्म करना चाहिये, उसे कहता हूं। सबेरे, मध्यान्ह और सन्ध्या, इन तीनों समयमें स्नान, पितरों और देवताओंकी पूजा, अग्निहोत्र इष्टि और होमका अनुष्ठान, नीवारग्रहण, फलमूलनिषेवन चिकनाईके लिये इङ्गुद और एरण्डका तेल मलना कर्त्तव्यरूपसे निर्दिष्ट हुआ है। योगचर्य्या करनी, काम क्रोधको त्यागना सिद्ध वीरस्थान और महारण्यमें निवास करना चाहिये। वीरमय्या उपासक योगरत साधु योगीगण जो ग्रीष्मकालमें पञ्चतपा किया करते हैं और जो लोग हर्षयोगमें रत होके सब कार्य्योंको निभाते हैं, सदोपविशन रूप वीरासनसे बैठते हैं और स्थण्डिल पर शयन किया करते हैं, वे धर्म्मबुद्धियुक्त मनुष्य शीतजल और अग्निसे योगयुक्त होके वर्त्तमान रहें। उपवासी, वायुभक्षी, शैवालभोजी, अश्मकूट, दान्त, सम्प्रक्षाल तथा दूसरे चीरवल्कल और मृगचर्म्म पहरनेवाले मुनिवृन्द यथा समयमें विधिपूर्व्वक यथायोग्य धर्म्मयात्रा करें। बनके बीच सदा निवास करनेवाले बनचर बनस्थ बनगोचर बनवासी मुनि लोग बनको गुरुकी भांति पाके वहांपर वास करें। उन लोगोंके लिये होमकर्म्म, पञ्चयज्ञ भाग और अनुपालन ही धर्म्म है; अष्टमी यज्ञपरता, चातुर्म्मास निषेवन, पौर्णमास प्रभृति सब यज्ञ तथा नित्य यज्ञ धर्म्मरूपसे विहित है। जो लोग दार परिग्रहसे रहित हुए हैं और सब सङ्कटोंसे छूटे हैं, वे मुनिगण पापहीन होके बनमें विचरते हैं। जो लोग सदा स्रुकभाण्ड सञ्चयमें रत रहते, जिनके गृहमें तीनों अग्नि विद्यमान रहती हैं, जो सब साधुलोग सदा सत्पथमें निवास करते हैं, वेही परम गति पाते हैं। सत्य धर्म्मावलम्बी सिद्ध मुनिगण महापवित्र ब्रह्मलोक और शाश्वत सोमलोकमें गमन किया करते हैं। हे शुभे देवि! मैंने वाणप्रस्थाश्रित धर्म्म जो स्थूलरूपसे सम्पन्न होता है, उसे विस्तारपूर्व्वक वर्णन किया।

उमा बोली, हे सर्व्वलोक नमस्कृत सर्व्व भूतेश भगवन्! जो धर्म्म मुनियोंकी सिद्धिके सम्बन्धमें है, उसे वर्णन करिये। जो लोग सिद्धवादमें सुसिद्ध बनवासी स्वेच्छाचारी और कदाचित दारपरिग्रहकारी हैं, उनका धर्म्म किस प्रकार स्मृत हुआ करता है?

महादेव बोले, जो लोग तपस्याके सहारे यथेष्ट आचरण किया करते हैं, उन्हें मुण्डन तथा गेरुआ वस्त्र धारण करना उचित है; जो

लोग दारपरिग्रह करके विहार करते हैं, उन्हें कहीं भी रात्रिवास करना योग्य नहीं है; खेचरगणकी भांति इन लोगोंके लिये स्वेच्छा-विहार विहित नहीं होता। प्रातः, मध्यान्ह और सन्ध्याके समय स्नान, ऋषिकृत महत् अग्निहोत्र, समाधि, सत्पथमें निवास और यथा-योग्य कार्य्योंको पूरा करना ही वनवासी मुनि-योंका धर्म्म है। पहले जो सब धर्म्म वर्णित हुए हैं, वही वनवासी ऋषियोंके धर्म्म हैं; यदि मनुष्य इन धर्म्मोंकी सेवा करे, तो महत् फल पाता है। जो लोग निज स्त्रीमें रत और नियतेन्द्रिय होकर दम्पति धर्म्मके अनुसार कार्य्य करते हैं, उन धार्म्मिकोंका ऋषियोंके द्वारा आचरित धर्म्म सिद्ध होता है। धर्म्म दर्शी मनुष्योंको स्वेच्छाचारी होकर कामसेवन करना योग्य नहीं है। जो मनुष्य हिंसारहित चित्तसे सब जीवोंको भली भांति अभयदक्षिणा दान करता है, वही धार्म्मिक है। सब वेदोंको पढ़के स्नान करना और सर्व्वभूतोंमें सरलता प्रदर्शित करनी ये दोनों ही समान हो सकते हैं, अथवा वेद स्नानसे सरलता श्रेष्ठ है। जो लोग सब प्राणियोंके विषयमें दयावान् हैं, सब जीवोंके सम्बन्धमें सरलता प्रकाशित करना जिनका व्रत है और सर्व्वभूतोंको आत्मस्वरूप जानते हैं, वेही धार्म्मिक हैं। प्राचीन लोग सर-लताको धर्म्म कहते और कुटिलताको अधर्म्म कहा करते हैं, मनुष्य इस लोकमें सरलतायुक्त होनेसे धार्म्मिक होता है। जो लोग सदा सरल-तामें रत रहते हैं, वे देवताओंके समीप निवास करते हैं, इसलिये जो लोग धार्म्मिक होनेकी इच्छा करें, वे सरल होवें। चान्त, दान्त, क्रोध जीतनेवाले, धर्म्ममय अहिंसक और नित्य धर्म्ममें चित्त लगानेवाले मनुष्य धर्म्मयुक्त हुआ करते हैं। जो धर्म्मात्मा मनुष्य आलसरहित होके शक्तिके अनुसार सत्पथको अवलम्बन करता और निज चरित्रकी उत्तम रीतिसे रक्षा करता है, वह बुद्धिमान् मनुष्य ब्रह्मस्वरूप लाभ कर-नेमें समर्थ होता है।

उमा बोली, हे देव! जो सब तपोधन तप-स्वीवृन्द आश्रमधर्म्ममें अनुरक्त हैं, वे कैसे आच-रणसे दीप्तिमान होते हैं, हे भगवन्! निर्धन, महाधनी, राजा और राजपुत्रगण किन कर्म्मोंके सहारे महाफल पाते हैं? हे देव! वे लोग नित्यस्थानमें गमन करते हुए दिव्य चन्दनसे भूषित होकर किन कर्म्मोंसे वनवासी होते हैं। हे देव! हे त्रिपुरनाशन त्रिलोचन! मेरे इस तप-श्चर्य्याश्रित शुभ सन्देहके विषयोंको आप विस्तार पूर्व्वक वर्णन करिये।

महादेव बोले, अहिंसारत सत्यवादी दमन-शील मनुष्य अनामय और सम्यक्सिद्ध होके परलोकमें जाकर गन्धर्व्वोंके सहित आनन्द भोग किया करते हैं। जो धर्म्मात्मा मनुष्य यथा रीतिसे विधिपूर्व्वक मण्डूक योग शय्यामें शयन करके दीक्षा आचरण करते हैं, वे नागगणके सहित प्रमुदित होते हैं। जो लोग दीक्षित और समाहित होके मृगगणोंके सहित मृगके द्वारा उत्कृष्ट शस्योंको सेवन करते हैं, वे अम-रावती पुरीमें गमन किया करते हैं। जो लोग शैवाल अथवा सूखेपत्तोंको खाके तपस्या करते और सदा शीलवान रहते हैं, उन्हें परम गति प्राप्त होती है। वायु, जल और फल मूलाशी योगी लोग यक्षलोकमें ऐश्वर्य्य लाभ करके अप्स-राओंके सहित आनन्द करते हैं, ग्रीष्मकालमें विधिविहित कर्म्मोंके सहारे बारह वर्ष पञ्च-तपा करनेसे मनुष्य राजा होता है; बारह वर्षतक मौनावलम्बन पूर्व्वक आहारका नियम करके यत्नके सहित मरुसाधन अर्थात् जल पर्य्यन्त परित्याग करनेसे मनुष्य पृथ्वीपति राजा होता है। स्थण्डिलमें बिना आसनके बैठकर शुद्ध आकाशमें हर्ष पूर्व्वक प्रवेश करके जो लोग द्वादश वार्षिको दीक्षाग्रहण करते और अनशन व्रत अवलम्बन करके शरीर त्यागते हैं,

वे स्वर्गमें सुख समृद्धि भोग किया करते हैं। हे भामिनी! ऋषि लोग यान, शय्या और महामूल्य चन्द्रमाकी भांति सफेद गद्दोंकी स्थण्डिल शयनका फल कहते हैं, जो लोग सदा आत्माकी उपजीव्य करके नियताहारी होकर अथवा अनशन व्रतके सहारे देह परित्याग करते हैं, वे स्वर्गभोग किया करते हैं, आत्मउपजीवी द्वादशवार्षिकी दीक्षा ग्रहण करके महार्णवमें शरीर परित्याग करनेवाले वरुणलोकमें सुख भोगते हैं। जो आत्मोपजीवी पुरुष द्वादशवार्षिकी दीक्षा अवलम्बन करते और पापकेद्वारा दोनों चरण भेदते हैं, वे गुह्यक लोकमें प्रमुदित होते हैं, जो लोग निर्द्वन्द्व और निष्परिग्रह होकर आत्माके सहारे आत्मसाधन करके द्वादशवार्षिकी इस मनोहर दीक्षाको अवलम्बन करके स्वर्गलोक पाते हैं, वे देवताओंके सङ्ग आनन्द भोग करते हैं और जो आत्मोपजीवी पुरुष द्वादशवार्षिकी दीक्षा ग्रहण करके अग्निमें देह परित्याग करते हैं, वे ब्रह्मलोकमें निवास किया करते हैं। हे देवी! जो द्विज यथारीतिसे दीक्षित और संयत होकर आत्मामें आत्मसाधन करते हुए ममता रहित होके धर्मकी अभिलाष करता है और बारह वर्ष तक इस मनोगत दीक्षाका अनुष्ठान करके तरुस्कन्धमें अरणीके सहित अग्नि परित्यागकर अनावृत्त होकर गमन करता है, वह वीरपथसे गमन करते हुए सदा वीरासन गतिसे युक्त होके वीर लोकमें निवास करता और उसी वीरगति प्राप्त होती है; वह इन्द्रलोकमें जाकर सदा सर्व्वकामके सहारे पुरस्कृत होता और दिव्य पुष्पोंसे युक्त तथा दिव्य चन्दनसे विभूषित होता है, वह धर्मात्मा देवलोकमें देवताओंके सहित सुखसे निवास करता है, वीरलोकमें गये हुए वीर पुरुष सदा वीरयोग युक्त हुआ करते हैं। जो लोग सतोगुणी होकर सब वस्तुओंको त्यागके सदा, पवित्र रहके दीक्षित होते और वीरपथसे गमन करते हैं, उन्हें सनातन लोक मिलता है, वे इच्छानुसार कामगामी विमानपर विचरते तथा वे श्रीमान मनुष्य निरामय होके इन्द्रलोकमें जाकर प्रमुदित होते हैं।

१४२ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, हे भगनेत्रनाशी सूर्य्यदन्त विनाशन दक्षयज्ञ विध्वंशी त्रिलोचन भगवन! मुझे यह महान सन्देह है, कि ब्रह्माने पहले चारों वर्णोंकी सृष्टि की है। उनके बीच वैश्य किस कर्म्म विपाकसे शूद्रत्व पाता है। क्षत्रिय वैश्य हुआ करते और ब्राह्मण, क्षत्रिय होते हैं, हे देव! प्रतिलोमगत धर्म्म किस प्रकार निभ सकते हैं? हे विभु! ब्राह्मणी किस कर्म्मके सहारे शूद्रयोनिमें जन्मता है और क्षत्रिय कैसे कर्म्मके द्वारा शूद्रत्व लाभ करता है? हे भूतपति अनघदेव! आप मेरे इस सन्देहको दूर करिये इस लोकमें ब्राह्मण आदि तीनों वर्ण स्वभाविक हैं, तब किस प्रकार ब्राह्मणत्व प्राप्त करते हैं।

महादेव बोले, हे देवि! ब्राह्मणके स्वभावके अतिरिक्त ब्राह्मण्य प्राप्ति अत्यन्त दुष्प्राप्य है। मेरे विचारमें क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र स्वभावके अनुसार हुआ करते हैं। ब्राह्मण श्रेष्ठवर्ण लाभ करके भी दुष्कृत कर्म्मोंसे स्थानभ्रष्ट होता है, इसलिये ब्राह्मणको सदा रक्षा करनी उचित है, क्षत्रिय अथवा वैश्य ब्राह्मणधर्म्ममें स्थित रहके यदि ब्राह्मण्य-उपजीवी होवें, तो उन्हें ब्रह्मत्व प्राप्त होता है। जो लोग ब्राह्मणत्व परित्यागके क्षत्रिय धर्म्मकी सेवा करते हैं, वे ब्राह्मणत्वसे परिभ्रष्ट होकर क्षत्रिययोनिमें उत्पन्न हुआ करते हैं, जो अल्पबुद्धि ब्राह्मण दुर्लभ ब्राह्मणत्व पाके लोभ मोहके वशमें होके सदा वैश्योंका कर्म्म करता है, उसे वैश्यत्व प्राप्त होता है और वैश्य भी शूद्रकर्म्म करके शूद्र हुआ करता है। ब्राह्मण निज धर्म्मसे भ्रष्ट होनेपर शूद्रत्व लाभ करता है, शूद्र होके वर्णभ्रष्ट होनेपर सर्व्व-

वहिष्कृत तथा नरकगामी होता है। ब्राह्मण लोग ब्रह्मलोकसे परिभ्रष्ट होकर शूद्रयोनिमें जन्म लेते हैं। हे महाभागे धर्म्मचारिणि! क्षत्रिय अथवा वैश्य यदि अपने कर्म्मको त्यागके शूद्रका कर्म्म करते हैं, तो वे निज स्थानसे च्युत होकर वर्णसङ्कर होते हैं। वैसे ब्राह्मणों, अथवा वैश्योंको शूद्रत्व प्राप्त होता है। जो लोग निज धर्म्मसे बोधयुक्त हुए हैं, जो लोग ज्ञान-विज्ञानयुक्त पवित्र, धर्म्मज्ञ और सदा धर्म्ममें रत हैं, वेही धर्म्मफल भोग करते हैं। हे देवि! मैंने जो कहा उसे तथा अन्यान्य विषयोंको ब्रह्माने स्वयं वर्णन किया है। धर्म्मकी इच्छा करनेवाले साधु पुरुष इस नैष्ठिक अध्यात्म विषयका अनुष्ठान किया करते हैं। हे देवि! उग्र जातिका अन्न अत्यन्त निन्दनीय है। गणान्न, श्राद्धीय अन्न, सूतकान्न तथा दुष्टोंका अन्न भोजन करना उचित नहीं है और शूद्रोंका अन्न कदापि भोजन न करे। हे देवि! महानुभाव देवगण शूद्रान्नको सदा निन्दित जानते हैं, इसमें पितामहके मुखके कहे हुए प्रमाण हैं, मुझे ऐसी विवेचना होती है, कि ब्राह्मण आहिताग्नि और याज्ञिक होके जठरमें अवशिष्ट शूद्रान्न रहनेसे पञ्चत्व लाभ करता और उसे शूद्रगति प्राप्त होती है। अवशिष्ट शूद्रान्न जठरमें रहनेसे ब्राह्मण ब्रह्मस्थानसे च्युत होकर शूद्रत्व पाता है, इस विषयमें कुछ भी विचार नहीं है, जिसका अवशिष्ट अन्न जठरमें विद्यमान रहनेसे ब्राह्मण प्राण परित्याग करता है, वह जिसके अन्नको उपजीव्य करता था, उस ही योनिको प्राप्त होता है। जो लोग दुर्लभ पवित्र ब्राह्मणत्व पाके उसकी अवज्ञा करते तथा अभोज्य अन्न भोजन करते हैं, वे पतित होते हैं। सुरा पीनेवाले ब्रह्मघाती, शूद्र, चोर, भग्नव्रती, अपवित्र, स्वाध्यायरहित, पापाचारी, लोभी, शठतायुक्त, शठ, अव्रती, वृषलीपति, कुण्डाशी अर्थात् जो पुरुष पाकपात्रमें भोजन करता है, सोम बेचनेवाले और नीचोंकी सेवा करनेवाले ब्राह्मण ब्रह्मयोनिसे पतित होते हैं। गुरुतल्पगामी, गुरुके विषयमें द्वेष करनेवाला, और गुरुकी निन्दा करनेमें अनुरक्त ब्राह्मण ब्रह्मवित् तथा ब्रह्मवित्तम होनेपर भी पतित होता है।

हे देवि! इन्हीं पवित्र कार्य्यों और पवित्र आचरणोंसे शूद्रभी ब्राह्मण हुआ करता और वैश्यभी क्षत्रियत्व पाता है। शूद्र सदा सत्पथमें निवास करते हुए खिन्नचित्त न होकर न्याय तथा विधिपूर्व्वक यत्नके सहित ज्येष्ठ वर्णकी सेवा तथा टहल करे यही शूद्रोंका निर्दिष्ट कर्म्म है। देवताओं और ब्राह्मणोंका सम्मान करनेवाला, सबका आतिथ्य करनेमें व्रतयुक्त, ऋतुकालमें भार्य्यागामी, सदा नियमित भोजी, स्वयं मनोहर और मनोहर लोगोंका अन्वेषी, तथा शेषान्नभोजी शूद्रको वैश्यत्व प्राप्त होता है।

सत्यवादी, अहङ्कार रहित निर्द्वन्द्व, शमयुक्त, स्वाध्यायरत और पवित्र होकर जो वैश्य यज्ञके द्वारा देवार्च्चना करता है, जो दान्त द्विजोंका सम्मान करके सब वर्णोंको भूषित किया करता है और जो गृहस्थ व्रत अवलम्बन करके दोबार भोजन करता है, जो शेषान्नभोजी नियताहारी, निष्काम और अहङ्कार रहित है, जो अग्निहोत्रकी उपासना करते हुए विधिपूर्व्वक आहुति प्रदान करता है, सबका आतिथ्य किया करता, बचा हुआ अन्न भोजन करता और दक्षिणाग्नि गार्हपत्य तथा आवहनीय अग्निकी परिचर्य्यामें सावधान रहता है, वह पवित्र वैश्य महत् क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न होता है। जन्मविधि संस्कृत वह वैश्य क्षत्रिय और उपनीत व्रतयुक्त तथा सत्कृत होकर द्विज हुआ करता है।

जो लोग दान करते और समृद्ध आप्तदक्षिण यज्ञके सहारे योग किया करते हैं और अध्ययन करते हुए सदा तीनों अग्नियोंके शरणापन्न होते हैं, आर्त्त पुरुषोंको धीरज देते, धर्म्मके

अनुसार प्रजापालन किया करते हैं, जो सुखदर्शन तथा सत्यवादी होके सत्य कार्य्योंको सदा निभाते हैं, धर्म्म दण्डके द्वारा धर्म्म कार्य्योंका अनुशासन करते हैं, कार्य्य और कारणके द्वारा निमन्त्रित होके राज्यग्राह्य छठवां भाग ग्रहण करते हैं, वह अर्थशास्त्र जाननेवाले धर्म्मात्मा राजा स्वच्छन्दता पूर्व्वक ग्राम्य धर्म्मकी सेवा न करें और ऋतुकालमें सदा भार्य्याके समीप शयन करें। सदोपवासी, सदा स्वाध्यायमें रत, पवित्र कर्म्मसे युक्त अग्निगृहमें सदा शयन करनेवाला, प्रसन्नचित्तसे धर्म्मार्थ कामके अनुसार सबका आतिथ्यकर्त्ता, अन्न चाहनेवाले शूद्रोंको सदा अन्न देनेवाला मनुष्य अर्थ अथवा कामवशसे किञ्चितमात्र अहङ्कार प्रकाश न करे। जो लोग पितरों, देवताओं और अतिथियोंके सत्कारके लिये उपाय विधान करते, निज गृहमें यथा रीतिसे भिक्षादान करते हैं, तीनोंकालमें विधि पूर्व्वक अग्निहोत्रमें आहुति प्रदान किया करते हैं, गो-ब्राह्मणके निमित्त संग्राममें मरते हैं, वे क्षत्रिय त्रेताग्नि मन्त्रपूत वस्त्र पहरके द्विज हुआ करते हैं। ज्ञान विज्ञान तथा संस्कारयुक्त वेदपारग धर्म्मात्मा क्षत्रिय निज कर्म्मोंके सहारे ब्राह्मण होते हैं। हे देवि! इन कर्म्मफलोंके द्वारा न्यूनजाति कुलमें उत्पन्न हुआ शास्त्र सम्पन्न शूद्र भी संस्कारयुक्त द्विज होता है और ब्राह्मणभी असद्वृत्त तथा सब सङ्कर जातिवालोंका अन्न भोजन करनेसे ब्राह्मणत्व परित्यागके शूद्र हुआ करता है। हे देवि! शुद्धचित्तवाला जितेन्द्रिय शूद्रभी पवित्र कर्म्मोंके सहारे ब्राह्मणकी भांति सम्मानित होता है, ब्रह्माकी आज्ञा तथा मेरे मतसे पवित्र स्वभाव और पवित्र कर्म्म करनेवाले शूद्रको द्विजातियोंसे श्रेष्ठ जानना चाहिये। ब्राह्मणत्वके विषयमें योनि कारण नहीं है, संस्कार, शास्त्रज्ञान और सन्ततिभी कारण नहीं है, केवल पवित्र चरित्रही कारण है, जगत्‌में चरित्रसेही लोग ब्राह्मण जाने जाते हैं; उत्तम चरित्रयुक्त शूद्रकोभी ब्राह्मणत्व मिल सकता है। हे कल्याणि! निर्गुण निर्म्मल ब्रह्म जिसमें निवास करे वही ब्रह्मस्वरूप ब्राह्मण है। हे देवि! प्रजाकी सृष्टि करनेवाले वरदाता ब्रह्माने स्वयं इस स्थानमें भागनिदर्शक योनिफलोंका वर्णन किया है, जगत्‌में सबकी गतिस्वरूप ब्राह्मण लोग क्षेत्ररूपसे विचरण किया करते हैं, उस क्षेत्रमें जो लोग बीज बोते हैं, परलोकमें उनका वह कृषिकार्य्य सफल होता है। श्रेष्ठ ब्राह्मण सदा विघशासी तथा सत्यावलम्बी होवे और जो लोग ऐश्वर्य्यकी कामना करते हैं, उन्हें ब्राह्मपथ अवलम्बन करके समय बिताना चाहिये। गृहमेधी मनुष्योंको गृहमें संहित अध्ययन करना योग्य है, सदा स्वाध्यायरत होना चाहिये; किन्तु अध्ययन मात्रको ही उपजीव्य न करे। इसी प्रकार जो विप्र सत्पथमें स्थित रहता और आहिताग्नि होकर अध्ययन करता है, वह ब्रह्मस्वरूप लाभ करनेमें समर्थ हुआ करता है। हे शुचिस्मिते! यतचित्त ब्राह्मण ब्राह्मणत्व लाभ करके योनि परिग्रह आदान और कर्म्मसे उसकी रक्षा करे, शूद्र जिस प्रकार ब्राह्मण होता और ब्राह्मण धर्म्मच्युत होकर जिस भांति शूद्रत्व लाभ करता है; मैंने उस गोपनीय विषयको तुम्हारे समीप वर्णन किया।

१४३ अध्याय समाप्त।

उमा बोली, हे सुरासुर नमस्कृत सर्व्वभूतेश देव भगवन्! हे विभु! मनुष्योंका धर्म्म अधर्म्म वर्णन करिये, इस विषयमें मुझे सन्देह है। मनुष्य वचन, मन और कर्म्महेतु विविध बन्धनपाशसे बद्ध होता है, अथवा उससे मुक्त हुआ करता है। हे देव! मनुष्य लोग इसलोकमें किस भांतिके चरित्र, कैसे कर्म्म और किन गुणोंके सहारे स्वर्गमें गमन करते हैं।

महादेव बोले, हे धर्म्मार्थतत्त्वको जानने-वाली धर्म्म और दममें रत देवि! तुमने जो प्रश्न किया, वह सब प्राणियोंके लिये हितकर और बुद्धिवर्द्धन है, इसलिये उसका उत्तर सुनो। सत्यधर्म्ममें रत सर्व्वलिङ्ग विवर्ज्जित जो सब साधुजन धर्म्मलब्ध अर्थ भोग करते हैं, वे सब मनुष्य ही स्वर्गमें गमन किया करते हैं; जिन लोगोंका सन्देह छूटा है, वे धर्म्म अथवा अधर्म्मसे बद्ध नहीं होते। प्रलय और उत्पत्तिके तत्त्वोंको जाननेवाले सर्व्वज्ञ सर्व्वदर्शी रागरहित पुरुष कर्म्मबन्धनसे मुक्त होते हैं; जो लोग बचन, मन और कर्म्मसे किसीकोभी हिंसा नहीं करते हैं। तथा मनहीमन किसी विषयमें भी आसक्त नहीं होते, वे कर्म्मसे बद्ध नहीं होते। इन्द्रियविषयोंसे जो लोग विरत हुए हैं और जो लोग शीलवन्त तथा दयावान् हैं, शत्रु मित्रको समान जाननेवाले दमनशील पुरुष कर्म्मबन्ध-नोंसे छूट जाते हैं। जो लोग सर्व्वभूतोंमें दया-वान् सब प्राणियोंमें विश्वासी और हिंसावृ-त्तिसे रहित हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें गमन किया करते हैं। जो लोग सदा परधनमें ममता रहित, परस्त्रीसे विरत रहते और धर्म्मसे प्राप्त हुआ अन्न भोजन करते हैं, वे सब मनुष्य स्वर्ग-गामी होते हैं। जो मनुष्य परस्त्रीके विषयमें मातृवत् स्वसृवत् और दुहितृवत् व्यवहार करते हैं। वे भी स्वर्गगामी होते हैं; जो लोग सदा चोरीकार्य्यसे विरत रहते हैं, निज-धनसे सन्तुष्ट और स्ववीर्य्यभाग्य उपजीव्य करके जीवन बिताते हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग सदा पराई स्त्रीके विषयमें चरित्रके सहारे नेत्रको छिपा रखते हैं, जो लोग संयतेन्द्रिय और शीलपरायण हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गमें गमन किया करते हैं, पण्डितोंको इस देवपथमें विचा-रना चाहिये, यह अकषाय कृतमार्ग विद्वान् मण्डलीका सदा सेवनीय है, जो लोग निज स्त्रीमें रत तथा ऋतुकालमें गमन करनेवाले हैं और जो लोग ग्राम्यसुख नहीं भोगते, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। दान, धर्म्म, तप, शील शौच और दयायुक्त पथवृत्तिके निमित्त तथा धर्म्महे-तुसे बुद्धिमानको सदा सेवनीय है, जो लोग स्वर्गवासकी अभिलाष करते हैं, उन्हें उक्तपथके अतिरिक्त धर्म्मसेवा करनी योग्य नहीं है।

उमा बोली, हे अनघ भूतनाथ! जिन बाक्योंके सहारे मनुष्य बद्ध होता है और जिन कर्म्मोंके द्वारा मुक्त होता है, आप मेरे समीप उसे वर्णन करिये।

महादेव बोले, अपने लिये अथवा दूसरोंके निमित्त वा परिहासके छलसे भी जो लोग इस लोकमें मिथ्या नहीं कहते, वे सब मनुष्य स्वर्ग-गामी होते हैं। बृत्तिके निमित्त अथवा धर्म्मके लिये वा स्वेच्छापूर्व्वक जो लोग मिथ्याबचन नहीं कहते, वे सब पुरुष स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग निठुर और कड़वेबचन नहीं कहते, जो पिशुनता रहित तथा साधु हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग कठोरबचन और परद्रोह परित्याग करते तथा जो सब जीवोंमें समदर्शी और दान्त हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग मित्रभेदकारी चुगलीयुक्त बचन नहीं कहते, सत्य तथा हितकर बात कहा करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग असत् प्रलापसे विरत रहते, विरुद्ध कार्य्योंको नहीं करते और प्रिय बचन कहा करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग क्रोधपूर्व्वक हृदय-विदारक बचन नहीं कहते, क्रुद्ध होके भी शान्त बाणी बोलते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। हे देवि! मनुष्योंको इस ही प्रकार बाक्य-जनित धर्म्म सदा सेवन करना योग्य है; यह शुभकर और सत्य फलप्रद है; इसलिये विद्वान् मनुष्योंको मिथ्याबचन कदापि न कहना चाहिये।

उमा बोली, हे महाभाग देवोंके देव पिनाक-धारी! पुरुष मनहीमन जिन कर्म्मोंको करके बद्ध होता है, आप मेरे निकट उसे वर्णन करिये।

महादेव बोले, हे कल्याणि! इस लोकमें मनुष्य सदा मानसकर्म्मोंसे संयुक्त होकर स्वर्गमें गमन करता है, उसे मैं कहता हूं, सुनो। हे शुभानने! दुष्टचित्तसे अन्तरात्मा भी दूषित होता है, इस लोकमें जिन कर्म्मोंसे मन बद्ध होता है, उसे सुनो, जनरहित बनके बीच यदि पराया धन दीख पड़े, उस समय जो मनुष्य उसे हरनेके लिये मनसे भी कामना नहीं करते वे स्वर्गगामी होते हैं। ग्राम, गृह वा निर्ज्जन बनमें जो धन रहता है, जो लोग उसे अभिनन्दन नहीं करते, वे स्वर्गमें जाते हैं। जो लोग निर्ज्जनमें स्थित कामवृत्त पराई स्त्रीकी मनसे कामना नहीं करते, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो मनुष्य शत्रु वा मित्रको देखकर समान भावसे बार्त्ता करते हैं, वे स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग श्रुतवन्त दयावान् पवित्र और सत्यसङ्कर हैं और निज धनसे सन्तुष्ट रहते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जिनका कोई बैरी नहीं है, जो लोग किसी कार्य्यको करके आसक्तियुक्त नहीं होते, जिनके चित्तमें सदा मित्रभाव रहता है। तथा जो सब जीवोंमें दयावान् हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग श्रद्धावान् दयावान् मनोज्ञ और मनोज्ञ जनप्रिय तथा हर एक धर्म्मोंकी जाननेवाले हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। हे देवि! जो मनुष्य शुभाशुभ कर्म्मोंके फल सञ्चय विषयमें विपाकज्ञ हैं, वे लोग स्वर्गगामी होते हैं। जो लोग सदा न्यायपूर्व्वक गुणयुक्त देव-द्विजपरायण और सदा सावधान रहते हैं, वे सब मनुष्य स्वर्गमें गमन करते हैं। हे देवि! शुभकर्म्मोंसे जो अत्यन्त फल मिलता है, उसे मैंने तुम्हारे समीप वर्णन किया। स्वर्गमार्ग पराभव करके अब फिर तुम कौनसा विषय सुननेकी इच्छा करती हो?

उमा बोली, हे महेश्वर! मनुष्योंके विषयमें मुझे एक महत् सन्देह है, इसलिये आप मेरे समीप निपुण भावसे उस सन्दिग्ध विषयकी व्याख्या करिये। हे प्रभु! पुरुषको किन कर्म्मोंसे दीर्घायु प्राप्त होती है? हे देवेश! किस तपस्यासे महत् परमायु मिलती है? भूमण्डलमें मनुष्य किन कर्म्मोंसे क्षीणायु हुआ करता है? हे अनिन्दित देव! आपको कर्म्मोंका विपाक वर्णन करना उचित है। कोई कोई महाभाग्यशाली और कोई मन्दभागी हुआ करते हैं, कोई कुलीन और कोई अकुलीन होते हैं। कोई कोई मनुष्य दुर्दर्शापन्न होकर मानो काष्ठमय रूपसे मालूम होते हैं, कोई प्रियदर्शन और कोई देखते ही दुर्व्वुद्धिरूपसे मालूम होते हैं। कोई पण्डित, कोई महाबुद्धिमान्, कोई कोई ज्ञानविज्ञानसम्पन्न और कोई अल्प बाधायुक्त हैं, कितने ही महापीड़ाग्रस्त दिखाई देते हैं। हे देव! पुरुषोंमें ऐसी विशेषता किसलिये होती है, उसे आपको यथार्थ वर्णन करना उचित है।

महादेव बोले, हे देवि! अच्छा मैं तुमसे कर्म्मफलोदय कहता हूं, मर्त्यलोकमें सब मनुष्य जिसके सहारे निज कर्म्मफल भोगते हैं, उसे सुनो। हे देवि! जो पुरुष प्राणवध करनेमें सदा दण्डहस्त होकर भयङ्कर भावसे उद्यत रहता और शस्त्रसे सदा प्राणियोंको मारता है और जो मनुष्य निर्द्दयी तथा सर्व्व भूतोंके विषयमें उद्वेगजनक हैं, कीट चींटी प्रभृतिके भी अशरण्य तथा अत्यन्त निकृष्ट हैं, वे मनुष्य नरकमें डूबते हैं और इसके विपरीत पुरुष धर्म्मात्मा तथा रूपवान् होकर जन्मते हैं। हिंसक मनुष्य नरकमें जाता और अहिंसक पुरुष स्वर्गमें गमन करता है। नरकमें पड़के मनुष्य घोर कष्टयुक्त यातना भोग करता है; जो कोई पुरुष कदाचित उस नरकसे बाहिर होता है, वह मनुष्य जन्म पाके क्षीणायु हुआ करता है। हे देवि! हिंसामें रत मनुष्य पाप कर्म्मसे बद्ध होते और वे लोग सर्व्व भूतोंके अप्रिय तथा अल्पायु होके